RNI No.: MPHIN/2018/77137

ISSN 2582-483X

पाठशाला
भीतर और बाहर

Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

वर्ष-6 अंक-20 जून 2024
तिमाही, भोपाल

पाठशाला
भीतर और बाहर

जून, 2024 (वर्ष 6, अंक 20)

सम्पादक मण्डल

- **हृदयकान्त दीवान**
  अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
  सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज,
  बिक्कनाहल्ली मेन रोड, सरजापुरा,
  बेंगलूरु 562125 कर्नाटक
  hardy@azimpremjifoundation.org
  मो. 9999606815

- **मनोज कुमार**
  अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
  सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज,
  बिक्कनाहल्ली मेन रोड, सरजापुरा,
  बेंगलूरु 562125 कर्नाटक
  manoj.kumar@apu.edu.in
  मो. 9632850981

- **गौतम पाण्डेय**
  अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
  खसरा नम्बर 40 और 51, विदिशा बायपास
  रोड, कान्हासैया, भोपाल 462022
  gautam@azimpremjifoundation.org
  मो. 9929744491

प्रकाशक

- **अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय**
  सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज,
  बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
  सरजापुरा, बेंगलूरु 562125 कर्नाटक
  Web: www.azimpremjiuniversity.edu.in

कार्यकारी सम्पादक

- **गुरबचन सिंह**
  अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
  खसरा नम्बर 40 और 51, विदिशा बायपास
  रोड, कान्हासैया, भोपाल 462022
  gurbachan.singh@azimpremjifoundation.org
  मो. 8226005057

- **रजनी द्विवेदी**
  द्वारा-अमित जुगरान, आसाम वैली स्कूल, बालिपारा
  तेजपुर, आसाम 784101
  rajni.dwivedi@azimpremjifoundation.org
  मो. 9101962804

- **प्रतिभा कटियार**
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  खसरा नम्बर 360, आमवाला तरला
  देहरादून, उत्तराखण्ड 248008
  pratibha.katiyar@azimpremjifoundation.org

- **रिव्यु पैनल**
  अमन मदान टुलटुल बिस्वास यतीन्द्र सिंह
  अंकुर मदान राजीव शर्मा सुशील जोशी
  विश्वंभर रेवा यूनुस नवनीत बेदार दिशा नवानी
  कॉपी एडिटर : अतुल अग्रवाल

सम्पादकीय कार्यालय

- **सम्पादक**
  पाठशाला भीतर और बाहर
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  प्लाट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव
  सोसायटी, ई-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा,
  भोपाल, म.प्र. 462039 फोन-0755-4074060
  pathshala@apu.edu.in
  gurbachan.singh@azimpremjifoundation.org
  मो. 8226005057

सलाहकार सम्पादक

- **जगमोहन कठैत**
  अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन
  खसरा नम्बर 360, आमवाला तरला
  देहरादून, उत्तराखण्ड 248008
  jagmohan@azimpremjifoundation.org

- **सुनील कुमार साह**
  एम-13, अनुपम नगर, टीवी टॉवर के पास,
  शंकर नगर, रायपुर 492007
  sunil@azimpremjifoundation.org

- **सिद्धार्थ कुमार जैन**
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  प्लाट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसायटी,
  ई-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा, भोपाल 462039
  siddharth.jain@azimpremjifoundation.org

- **दीपक कुमार राय**
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  प्लाट नं. ए 413-415
  सिद्धार्थनगर-ए, होटल नाँगीस प्राइड के सामने
  जवाहर सर्किल के पास, जयपुर, राजस्थान
  deepak.rai@azimpremjifoundation.org

डिज़ाइन एवं प्रिंट

- **गणेश ग्राफिक्स,**
  26-बी, देशबंधु परिसर, प्रेस काम्प्लेक्स,
  एम.पी. नगर, जोन-1 भोपाल, म.प्र. 462011
  ganeshgroupbpl@gmail.com
  मो. 9981984888

- **आवरण चित्र :** टिना राजेंद्र कटकवार
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, बलौदा-बाज़ार,
  छत्तीसगढ़

पाठशाला भीतर और बाहर पत्रिका, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन का हिन्दी प्रकाशन है। यह शिक्षकों, शिक्षक प्रशिक्षकों, अन्य ज़मीनी कार्यकर्ताओं व शिक्षा से सरोकार रखने वाले सभी व्यक्तियों और संस्थाओं के लिए विचार-विमर्श का एक मंच है। पत्रिका का उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों के अनुभवों व आवाज़ को जगह देकर शिक्षा के विमर्श को गहन व यथार्थपरक बनाना है।

अनुक्रम

सम्पादकीय 4

परिप्रेक्ष्य

1. रचनात्मक विवाद द्वारा सीखना / अमन मदान 7
2. जोड़-घटाना : स्कूल के गणित का ज़िन्दगी के गणित से अलगाव / मीनू पालीवाल 13

शिक्षणशास्त्र

3. मैटी, बैठ जाओ ! बैठ जाओ मैटी ! : मैटी के ज़रिए बच्चों के विकास के मुद्दों को समझने की कोशिश / दीपाली शुक्ला 21
4. पाठ्यपुस्तक की कहानियाँ और भाषा शिक्षण / प्रवीण श्रीवास्तव 24
5. उस रात चाँद नहीं निकला : एक कहानी कहन / मेलोडी खलखो 30
6. स्कूलों में बाल संसद चुनाव / शिशु रंजन 36

विमर्श

7. गणित तर्क की क्षमता कैसे बढ़ाता है? / मुकेश मालवीय 43

कक्षा अनुभव

8. रीडिंग कॉर्नर का रोमांचक अनुभव / शाह आलम 49
9. कविता-कहानी की मज़ेदारी : कक्षा के अनुभव / रंजीता वर्मा 55
10. लेखन में सहायक एक गतिविधि : डायरी लेखन / प्रतिभा शर्मा 62
11. विद्यार्थियों को रचनात्मक रूप से व्यस्त रखना : एक कला, एक संस्कृति / श्रीदेवी 68

पुस्तक चर्चा

12. कल्पना के लोक से आलोकित होता तारिक का सूरज / प्रतिभा कटियार 71

साक्षात्कार

13. बच्चे स्कूल में रोज़ाना कुछ सीखकर जाएँ / शिक्षिका शगुफ्ता बेग से सिद्धार्थ कुमार जैन की बातचीत 75

संवाद

14. विज्ञान, वैज्ञानिक मानसिकता और पाठ्यपुस्तकें 83

ऑनलाइन

विमर्श

15. समस्या समाधान एवं उसकी कसौटी / मनोज कुमार शराफ़ 92

शिक्षणशास्त्र

16. पर्यावरण कक्षा बन गई पढ़ने की घण्टी / डॉ. केवल आनन्द काण्डपाल 92

पाठक चश्मा 93

लेखकों से आग्रह 99

पत्रिका में छपे लेखों में व्यक्त विचार और मत लेखकों के अपने हैं।
अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का उपयोग शैक्षणिक और ग़ैर-व्यावसायिक कार्यों के लिए किया जा सकता है।
लेकिन इसके लिए लेखक एवं प्रकाशक से अनुमति लेना एवं स्रोत का उल्लेख अनिवार्य है।

सम्पादकीय

1986 में रचित शिक्षा नीति के बाद, देश में फिर से शिक्षा नीति की चर्चा पिछले दशक में शुरू हुई और दशक के अन्त तक देश की *नई शिक्षा नीति-2020* प्रस्तुत हुई। इस नीति के आधार पर *स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2023* बनाई गई, और यह दस्तावेज़ अब कई ऑनलाइन मंचों पर उपलब्ध है।

यह एक विस्तृत दस्तावेज़ है– लगभग 600 पृष्ठों का। यह पूरा दस्तावेज़ कुछ हिस्सों में विभाजित है। पहला हिस्सा इस पूरे दस्तावेज़ का एक पुनरवलोकन प्रस्तुत करता है। इसमें देश की स्कूली शिक्षा के प्रति नज़रिए और देश की स्कूली शिक्षा के ढाँचे के बारे में बात है। दस्तावेज़ के अगले हिस्सों को समझने के लिए भी यह एक आधार बनाता है। दस्तावेज़ के अगले हिस्से कुछ ख़ास मुद्दों / विषयों पर केन्द्रित हैं, और आप उस हिस्से को पढ़ना चुन सकते हैं जिस ख़ास क्षेत्र में आप काम कर रहे हैं।

एक आम पाठक चाहे वह शिक्षक हो अथवा ज़मीनी कार्यकर्ता या अभिभावक, सभी इस दस्तावेज़ को पढ़ और समझ सकते हैं। इसकी भाषा सरल और सहज है। बहुत-सी जगहों पर उदाहरण के साथ बात रखी गई है ताकि समझने में आसानी हो। उदाहरण के लिए (अध्याय 1 में), स्कूल की संस्कृति और स्कूल की प्रक्रियाओं से क्या आशय है; इन दोनों में क्या जुड़ाव है; स्कूल की प्रक्रियाओं में स्कूल संस्कृति कहाँ, किस रूप में परिलक्षित होती है, और इसका बच्चों के सीखने में क्या योगदान होता है; आदि सभी बिन्दुओं पर चर्चा यह निर्णय लेने में मदद करेगी कि स्कूल में जिस संस्कृति का निर्माण हम करना चाहते हैं उस दिशा में कैसे काम कर सकते हैं। स्कूली शिक्षा और सीखने-सिखाने से जुड़े हर ज़रूरी विषय पर इस दस्तावेज़ में चर्चा है जो स्कूल में काम को सही दिशा में आगे बढ़ाने में आपके लिए मददगार होगी।

पाठशाला पत्रिका के अंकों में शामिल लेख इस दस्तावेज़ के नज़रिए से पूरा इत्तफ़ाक़ रखते हैं। अमन मदान का लेख *रचनात्मक विवाद द्वारा सीखना* स्कूल संस्कृति के सन्दर्भ में है। उदाहरण के साथ यह लेख दर्शाता है कि विद्यार्थी किसी विषय पर अलग-अलग मत होते हुए भी एक दूसरे की बात को धैर्य के साथ सुनना, अपनी बारी का इन्तज़ार करना, अपने तर्क देना, आदि सीख सकते हैं।

शिशु रंजन और श्रीदेवी के लेख इस क्रम को आगे बढ़ाते हैं। अपने लेख *स्कूल में बाल संसद चुनाव* में शिशु रंजन दर्शाते हैं कि स्कूल में बाल संसद निर्माण की प्रक्रिया ने विद्यार्थियों, शिक्षकों को लोकतंत्र को समझने के कई मौक़े उपलब्ध करवाए हैं। विद्यार्थियों ने मतदान प्रक्रिया, उम्मीदवारों के चयन, उनसे अपेक्षाओं, मतदाता के रूप में ज़िम्मेदारियों, आदि को समझा। श्रीदेवी का लेख *बच्चों को रचनात्मक रूप से व्यस्त रखना : एक कला, एक संस्कृति* है। यह एक स्कूल की कहानी है जिसमें शिक्षकों ने कई व्यस्तताओं के कारण बड़ी कक्षाओं के विद्यार्थियों से बातचीत की, और उन्हें छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों की मदद के लिए तैयार किया। यह लेख बराबरी, एक दूसरे की मदद और सहकार का एक बढ़िया उदाहरण है।

बच्चों के सीखने में कविता-कहानी की भूमिका से हम सभी परिचित हैं। इस अंक में इस मुद्दे के अलग-अलग पहलुओं को दर्शाते लेख शामिल हैं।

कहानी से बच्चे अपना सम्बन्ध जोड़ पाएँ, यह महत्त्वपूर्ण है। मेलोडी का लेख *उस रात चाँद नहीं निकला : एक कहानी कहन* इसी दिशा में एक कोशिश है। बच्चों ने कहानी सुनी-पढ़ी और

उसपर अपने विचार रखे। बच्चों के विचार कहानी को समझने के साथ-साथ उनको समझने में भी मदद करते हैं।

एक और कहानी *मैटी, बैठ जाओ ! बैठ जाओ मैटी !* पर शिक्षकों के साथ बातचीत के अनुभव दीपाली ने साझा किए हैं। इस कहानी के ज़रिए वे यह समझने की कोशिश करते हैं कि बच्चे कब सीख रहे होते हैं, और कैसे? उनकी बातचीत दर्शाती है कि बच्चों और उनके व्यवहार को देखते हुए वयस्क, बच्चे की जो छवि बना लेते हैं वह ग़लत हो सकती है।

पाठ्यपुस्तक की कहानियाँ और भाषा शिक्षण लेख प्रवीण श्रीवास्तव का है। उन्होंने अपनी कक्षा में कहानियों के माध्यम से बच्चों के साथ जो विभिन्न अभ्यास और गतिविधियाँ कीं, उनको प्रस्तुत किया है।

रंजीता वर्मा भी अपने लेख *कविता-कहानी की मज़ेदारी : कक्षा के अनुभव* में कहानियों के साथ की जाने वाली गतिविधियों को प्रस्तुत करती हैं। वे कहती हैं कि शुरुआत में उनके लिए यह मानना मुश्किल था कि जो बच्चे पढ़ना ही नहीं जानते उनके साथ कहानी पर काम किया जा सकता है। लेकिन जब काम किया तब समझ आया कि कहानियाँ कैसे बच्चों के सीखने में मददगार होती हैं।

रीडिंग कॉर्नर पर कई स्कूलों में काम किया जा रहा है। शाह आलम अपने लेख *रीडिंग कॉर्नर का रोमांचक अनुभव* में, 6 स्कूलों में शिक्षकों के साथ मिलकर रीडिंग कॉर्नर बनाने, और बच्चों के साथ उसका उपयोग करने के अनुभव बताते हैं।

लेखन में सहायक एक गतिविधि : डायरी लेखन लेख प्रतिभा शर्मा का है। कोरोना के समय शुरू किए गए डायरी लेखन के काम को लेखिका ने कक्षा में आगे बढ़ाया। बच्चों को यह काम अच्छा लगा, और उन्होंने धीरे-धीरे बेहतर लिखना सीखा।

किसी भी विषय को समझने के लिए उस विषय का पढ़ना और लिखना ज़रूरी है। विषयों के जुड़ाव की बात भी इसी से सम्बन्धित है। *पर्यावरण कक्षा बन गई पढ़ने की घण्टी* लेख केवल आनन्द ने लिखा है। उन्होंने अपनी कक्षाओं में पर्यावरण और भाषा दोनों विषयों पर एक साथ काम किया। यह पूरा लेख भी ऑनलाइन पढ़ा जा सकेगा।

इस बार गणित विषय से जुड़े तीन लेख हैं। मीनू पालीवाल अपने लेख *जोड़-घटाना : स्कूल के गणित का ज़िन्दगी के गणित से अलगाव* में गणित को दैनिक जीवन से जोड़ने में इबारती सवालों की भूमिका को रेखांकित करती हैं।

मनोज कुमार शराफ़ का लेख *समस्या समाधान एवं उसकी कसौटी* दैनिक जीवन की समस्याओं और ख़ालिस गणितीय समस्याओं के उदाहरणों से समस्या समाधान के विभिन्न चरण व अलग-अलग तरीक़े रखता है। वे कहते हैं कि *एनसीएफ़एसई-2023* में समस्या समाधान सिखाने की बात पर ज़ोर दिया गया है। हो सकता है इस लेख में दी गईं कुछ गणितीय समस्याएँ समझने में थोड़ी मशक़्क़त हो, लेकिन आपको मज़ा ही आएगा। यह पूरा लेख आप ऑनलाइन पढ़ सकते हैं।

मुकेश कहते हैं कि गणित, तर्क की क्षमता को बढ़ाता है, लेकिन जिस तकनीकी तरह से कक्षाओं में गणित पढ़ाया जाता है उससे विद्यार्थियों को तर्क क्षमता विकसित करने में मदद नहीं मिलती। विद्यार्थियों के पास अपने सवाल करने के तरीक़े, उनके हल के बारे में तर्क भी होते हैं, लेकिन उनपर बात ही नहीं की जाती।

तारिक का सूरज पुस्तक की समीक्षा प्रतिभा ने की है। यह पुस्तक बच्चों को अच्छी लगेगी। यह हम वयस्कों को भी बच्चों को समझने की एक दृष्टि देती है।

बच्चे स्कूल में रोज़ाना कुछ सीखकर जाएँ, शगुफ्ता बेग का यह साक्षात्कार सिद्धार्थ जैन ने किया है। शगुफ्ता विद्यार्थियों के सीखने के सन्दर्भ में बहुत-सी अहम बातें बताती हैं। वे कहती हैं कि शिक्षक और विद्यार्थियों का जुड़ाव, शिक्षक का लगातार सीखना, विद्यार्थियों में विश्वास, उनसे बराबरी का व्यवहार, और सबसे महत्त्वपूर्ण यह कि हर विद्यार्थी का स्कूल में बिताया हर क्षण अपरिहार्य है और उसमें वह सीखे यह शिक्षक की प्राथमिकता होनी चाहिए।

इस बार के संवाद का विषय है *विज्ञान, वैज्ञानिक मानसिकता और पाठ्यपुस्तकें।* इस संवाद के ज़रिए कुछ सवालों को सम्बोधित करने की कोशिश की गई है। मसलन, वैज्ञानिक मानसिकता से क्या आशय है; विद्यार्थियों में वैज्ञानिक मानसिकता विकसित करने के लिए क्या प्रयास किए जा सकते हैं; आदि। वैज्ञानिक मानसिकता, संवेदनशीलता और सहानुभूति, सभी एक दूसरे से कैसे जुड़ते हैं इसपर भी कुछ विचार आपको इस संवाद में मिलेंगे।

दो लेखों का ज़िक्र ऊपर किया गया है। इन्हें आप ऑनलाइन पढ़ सकते हैं। यह लेख हैं– *समस्या समाधान एवं उसकी कसौटी और पर्यावरण कक्षा बन गई पढ़ने की घण्टी।* इन लेखों का सारांश पत्रिका के अन्तिम पृष्ठों पर दिया गया है।

हमेशा की तरह लेखों पर पाठकों के विचार **पाठक चश्मा** में दिए गए हैं। आपके विचारों का भी इस स्तम्भ के लिए स्वागत है।

पाठशाला भीतर और बाहर पत्रिका का दिसम्बर 2024 के अंक के साथ ही आपको कुछ बदलाव के साथ दिखेगी। दिसम्बर के अंक के साथ ही यह हिन्दी के अतिरिक्त अँग्रेज़ी और कन्नड़ भाषाओं में भी प्रकाशित होगी। दिसम्बर का अंक 'समावेशी शिक्षा' पर आधारित विशेषांक होगा। समावेशी शिक्षा से जुड़े विभिन्न पहलुओं, जैसे– कलाओं और खेलों, सुबह की सभा की गतिविधियों, मध्याह्न भोजन व अन्य सांस्कृतिक प्रक्रियाओं, कक्षा शिक्षण में बैठक व्यवस्था, शिक्षण अधिगम सामग्री, प्रिंट रिच, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए सम्मान और सीखने का माहौल, प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ECCE), आदि अनुभवों पर आधारित लेख ज़रूर भेजें। हमेशा की तरह आपके आलेख पत्रिका को समृद्ध करेंगे।

सम्पादक मण्डल

रचनात्मक विवाद द्वारा सीखना

अमन मदान

ऐसी संस्कृति का निर्माण कैसे हो जहाँ व्यक्ति अपनी ग़लतियों पर दूसरों की टिप्पणियाँ सुन सकें। हम अपनी टिप्पणियाँ कैसे दें कि ग़लती करने वाला अपनी ग़लतियों के बारे में सोचे, और उनको ठीक करने की कोशिश भी करे। लेख कहता है यह संस्कृति निर्मित करने की बात है। इस लेख में इन प्रश्नों पर चर्चा है कि इस संस्कृति के मायने क्या हैं, और स्कूलों में इस तरह की संस्कृति कैसे विकसित हो सकती है। लेख पढ़ने के दौरान यह प्रश्न भी दिमाग़ में आ सकता है कि क्या ऐसी संस्कृति निर्मित हो भी सकती है, पर दिए गए उदाहरण दिखाते हैं कि ऐसे प्रयास किए जा सकते हैं। काफ़ी धैर्य और समय की ज़रूरत होगी, लेकिन यह सम्भव है। -सं.

सुरेश एक मेहनती और ईमानदार गणित का शिक्षक था। एक दिन उसके साथ में पढ़ाने वाली शिक्षिका समीना उसके पास आई और कहा, "तुम अपने बच्चों को भाग करना सिखा रहे थे, मगर उन्हें कुछ समझ नहीं आया। वे अभी भी भाग नहीं कर सकते।" सुरेश को बहुत बुरा लगा। उसकी समझ से बच्चों को सब समझ आ रहा था। फिर समीना ऐसा कैसे कह सकती है। क्या उसे समीना की कही अनसुनी कर देनी चाहिए; या उसे कुछ और करना चाहिए?

अकसर कोई-न-कोई हमसे ऐसी बात करता है जो हमारी समझ से बिलकुल उलट होती है। हमें लगता है कि यूँ किया जाना चाहिए, और उन्हें लगता है कि कुछ और ही किया जाना चाहिए। जब लोग हमसे सहमत होते हैं तो अच्छा लगता है। हमें यह सुनना अच्छा नहीं लगता कि हम ग़लत हैं। ऐसा सुनने से लगता है कि दूसरों के सामने हमें बेइज़्ज़त किया गया है। हमारा आत्म-सम्मान आहत होता है। लेकिन अगर हम वाक़ई में थोड़े से ग़लत थे, तो फिर क्या? अगर सुरेश के छात्रों को सच में भाग करना नहीं आया था? अगर सुरेश को सिर्फ़ यह प्रतीत हुआ कि वे सीख गए, मगर उनमें से अधिकांश को नहीं आया था? ऐसे में, वह समीना की बातों पर ध्यान न देकर अपने छात्रों के साथ बहुत अन्याय कर देगा। अगर सुरेश अपने छात्रों का भला चाहता है तो उसे समीना की बातों पर ध्यान देते हुए छात्रों की भाग करने की क्षमता को जाँच

चित्र : अबीरा बंदोपाध्याय

लेना चाहिए। फिर उसे स्पष्ट हो जाएगा कि वे सीखे थे या नहीं। हो सकता है उनमें से कुछ अभी न समझे हों। वह फिर से समझा सकता है, और बच्चों की प्रैक्टिस करवा सकता है। समीना की बातों को सुनने से सुरेश और उसके छात्रों, दोनों का भला होगा। ऐसा करने से उसकी ख़ुद की समझ, कि वह अच्छा शिक्षक है, और ज़्यादा मज़बूत होगी और उसका आत्म-सम्मान बढ़ेगा।

दूसरों के नज़रिए को समझना हम सबके लिए अच्छा होता है। फिर भी कम ही लोग ऐसा करते हैं। चाहे शिक्षक हों या छात्र, कम्पनियों के अध्यक्ष या फिर राजनेता, सभी को दूसरों के पक्ष को समझकर फ़ायदा ही होता है। जब मुझे कोई टेस्ट की तारीख़ तय करनी होती है, मैं उसे सोचकर फिर अपने छात्रों के सामने रखता हूँ। अगर वे उसका विरोध करते हैं, मैं उनके साथ मिलकर कोई और तारीख़ तय करता हूँ। यह उनके और मेरे, दोनों के लिए अच्छा है। दूसरा उदाहरण लें, क़ानून कहता है जब भी कोई बड़ी फ़ैक्टरी बननी होती है उसके मैनेजरों को स्थानीय लोगों से बात करनी होती है। तब उनकी समस्याओं और चिन्ताओं को सुनकर उन्हें फ़ैक्टरी को उस तरह से बनाना चाहिए जिसे सबकी स्वीकृति मिले। समझदारी इसी में है कि सबकी सुनें, और ऐसे काम करें कि सभी सन्तुष्ट हों। मगर फिर भी कई लोग ऐसा नहीं करते।

साझे समाधान कैसे ढूँढ़ते हैं, यह सिखाने के लिए दो भाइयों, डेविड और रॉजर जॉनसन ने 1995 में एक गतिविधि ईजाद की जिसका नाम है– रचनात्मक विवाद (constructive controversy)। यह मॉर्टन डौयेट्ष नामक सामाजिक मनोवैज्ञानिक के शोध से प्रभावित था। डौयेट्ष ने टकरावों और उनके समाधान पर कई दशक बिताए थे। शीत युद्ध के दौरान वे अमरीकी सरकार के सलाहकार भी थे, और उन्होंने अपनी सरकार को सोवियत यूनियन के नज़रिए को समझने में मदद की थी। जॉनसन बन्धुओं ने एक खेल-जैसी गतिविधि बनाई जिसे 'रचनात्मक विवाद' या फिर 'ढाँचागत विवाद' (structured controversy) भी कहते हैं। इसे बच्चे और बूढ़े, दोनों खेल सकते थे, और उससे सीख सकते थे। यह गतिविधि अब विश्व में कई स्कूलों, कॉलेजों और संस्थाओं में इस्तेमाल की जाती है। मसलों पर चर्चा करने का यह तरीक़ा डिबेट कॉम्पिटिशन से कहीं बेहतर माना जाता है। डिबेट की सबसे बड़ी दिक़्क़त यह है कि वह बच्चों को दूसरे को हराना सिखाती है। उसमें दूसरों को सुनने या उनके साथ मिलकर हल ढूँढ़ने पर ज़ोर नहीं दिया जाता। लेकिन रचनात्मक विवाद में इन्हीं बातों पर ज़ोर दिया जाता है, दूसरों के अच्छे विचारों को चुनकर अपनाना, और मिलकर आगे बढ़ना।

रचनात्मक विवाद

रचनात्मक विवाद की गतिविधि की शुरुआत में एक विवाद चुनते हैं जिसके दो पक्ष हैं। उदाहरण के लिए, इस साल स्कूल का पिकनिक कहाँ जाए– चिड़ियाघर या पास के झरने पर। इसपर चर्चा करने के लिए अगर सहभागियों को पहले मेरे पिछले लेख में बताई गईं कुशलताओं को सिखा दिया गया हो (कैसे ध्यान से सुना जाता है; और कैसे बिना आक्रामक हुए बात की जाती है?) तो काफ़ी मदद मिलेगी। मगर यह अनिवार्य नहीं है।

1. सभी भाग लेने वाले छात्रों को चार के समूहों में विभाजित किया जाता है। फिर चार सदस्यों के प्रत्येक समूह में दो सदस्यों की टीमें बनाई जाती हैं।

2. एक जोड़ी को चिड़ियाघर जाने के पक्ष में सोचने, शोध करने, और बिन्दु बनाने के लिए कहा जाता है। दूसरी जोड़ी को झरने पर जाने के पक्ष में सोचने, शोध करने, और बिन्दु बनाने के लिए कहा जाता है। वे ऐसा करने में 10-15 मिनट बिताते हैं।

3. जोड़ों को अपने-अपने तर्क प्रस्तुत करने के लिए 5 मिनट दिए जाते

हैं। जब एक जोड़ा बोल रहा होता है, दूसरे को ध्यान से सुनना होगा और नोट्स बनाने होंगे। उदाहरण के लिए, एक जोड़ा कह सकता है कि चिड़ियाघर जाना झरने पर जाने से कहीं ज़्यादा सुरक्षित है। और फिर वे झरने की तुलना में वहाँ बहुत ज़्यादा जानवर भी देखेंगे। दूसरा जोड़ा कह सकता है कि झरना प्रकृति का असली, मूल रूप है। बहते पानी का नज़ारा उस तरह का आनन्द देगा जो पिंजरों में बन्द जानवरों को देखने से कभी नहीं मिल सकता।

4. फिर प्रत्येक जोड़े को दूसरे जोड़े द्वारा बताए गए बिन्दुओं का खण्डन करने के लिए 5 मिनट दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए, एक जोड़ा कह सकता है कि झरना जल्दी ही उबाऊ हो जाता है, जबकि चिड़ियाघर बहुत अधिक दिलचस्प है। दूसरा जोड़ा कह सकता है कि चिड़ियाघर पूरी तरह नकली है, जबकि झरना असली चीज़ है, इत्यादि।

5. फिर एक बड़ी मज़ेदार बात होती है। दोनों जोड़ों को अपना स्थान आपस में बदलना होता है। उन्हें अपने पुराने बयान से थोड़ी दूरी बनाकर अब दूसरी तरफ़ से कौन-सी अच्छी दलीलें दी जा सकती हैं जो ठोस हों और जिनके बारे में सोचना चाहिए, उनको पहचानकर चिह्नित करना होता है। जैसे– जो पहले चिड़ियाघर के पक्ष में थे अब उन्हें झरने पर जाने के पक्ष में कौन-से अच्छे तर्क हो सकते हैं, उनकी सूची बनानी है। ऊपर लिखे 2, 3 और 4 बिन्दु फिर से दोहराए जाते हैं। इस तरह पक्ष को पलटना बहुत लाभकारी होता है। इससे प्रतिभागियों को दूसरों के नज़रिए पर ध्यान देने की आदत बनती है, और ऐसा करने का प्रोत्साहन मिलता है।

6. अन्त में दोनों जोड़े फिर एक ही 4 के समूह में आते हैं, और एक साझी समझ की तलाश करते हैं। इस साझी समझ में दोनों पक्षों द्वारा जो अच्छे तर्क दिए गए थे उनको शामिल किया जाता है। उदाहरण के लिए, यह स्वीकार किया जा सकता है कि चिड़ियाघर में देखने के लिए झरने से ज़्यादा जीव होंगे तो इस साल चिड़ियाघर जाया जाए, और अगले साल झरने को देखा जाएगा। या फिर यह कर सकते हैं कि झरने के लिए अगर बहुत दूर का चक्कर नहीं लग रहा तो बस में ही बैठे-बैठे उसे देख लिया जाएगा, और फिर चिड़ियाघर की तरफ़ जाया जाएगा। इस तरह के कई निष्कर्ष हो सकते हैं जो तर्क पर आधारित भी हैं, और दोनों पक्षों की इच्छाओं का सम्मान भी रखते हैं।

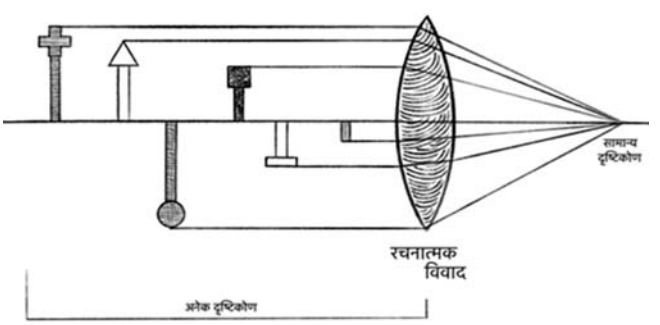

चित्र : अबीरा बंदोपाध्याय

तस्वीर जो इन चरणों को दर्शाती है—

1. चार के समूह और उनमें 2 जोड़े;
2. अच्छे तर्क ढूँढ़ना;
3. अपने तर्क सामने रखना, और दूसरों के तर्कों का खण्डन करना;
4. पक्ष और नज़रिया पलटकर सोचना; और
5. एक ऐसा नतीजा ढूँढ़ना जो सबको स्वीकृत हो।

विद्यालयों में रचनात्मक विवाद

कई शिक्षक और विद्यालय अब डिबेट की जगह रचनात्मक विवाद करवाना ज़्यादा पसन्द करते हैं। सालाना डिबेट प्रतियोगिता की जगह सालाना रचनात्मक विवाद की प्रतियोगिता करवाई जा सकती है। सबसे अच्छे तर्क और सबसे अच्छी तरह से सभी को सन्तुष्ट करने वाले उपाय ढूँढ़ने वाली टीम इसमें विजयी घोषित की जाती है। कई शिक्षक 1-2 महीनों में एक बार रचनात्मक विवाद की गतिविधि अपनी कक्षा में कराते हैं। इसमें वे मज़ेदार विवादित विषयों पर चर्चा कराते हैं। जैसे– अँग्रेज़ शासन भारत के लिए अच्छा था या बुरा; इलेक्ट्रॉन एक तरंग है या कण; इत्यादि।

कई अध्ययनों ने यह दिखाया है कि रचनात्मक विवाद से छात्रों की ज़्यादा अच्छी समझ बनती है (Johnson, Johnson and Tjosvold 2014)। जब वे किसी भी विषय को अलग-अलग नज़रिए से देखते हैं, उन्हें वह ज़्यादा अच्छे से समझ आता है। उन्हें यह भी समझ आता है कि हर मुद्दे के कई पक्ष होते हैं, और उसे कई नज़रियों से देखना चाहिए। वे यह सीखते हैं कि दूसरों को सुनकर ज़्यादा फ़ायदा होता है बजाय अपनी बात पर टिके रहने से। दूसरों को सुनकर हम ज़्यादा अच्छे निर्णय लेते हैं।

रचनात्मक विवाद का प्रयोग करने वालों में नर्सिंग कॉलेज के शिक्षक भी हैं। वे अपने नर्सिंग के छात्रों को सिखाते हैं कि एक दूसरे की सलाह लेनी चाहिए, और अपनी ही धुन में नहीं रहना चाहिए। ऐसा करने से मरीज़ों की जान को ख़तरा हो सकता है। रचनात्मक विवाद पर उन्हें अंक भी दिए जाते हैं। अंकों का आधार होता है– 1) उनके विचार कितने व्यवस्थित हैं; उनके तर्क कितने सुसंगत हैं; क्या वे तार्किक अनुमान का प्रयोग कर रहे हैं या अँधेरे में लठ घुमा रहे हैं; 2) उनका मेडिकल ज्ञान कितना है; और 3) सामूहिक सीख, उन्होंने दूसरों की राय कितनी ली है; दूसरों से कितना सीखकर अपनी समझ को विकसित किया है (Bull 2007)।

आज हमें यह प्रतीत हो रहा है कि पुरानी आदतों में से कुछ बातों को बदलना ही हमारे लिए ज़्यादा अच्छा है। अब हम नई संस्कृति बनाने की कोशिश करें। हिंसा और शोषण की संस्कृति हमारे आज के समाज के लिए, जिसमें इतनी विविधता और इतने रंग हैं, सही नहीं है। हमारे आज के दौर के लिए संवाद की संस्कृति ही ज़्यादा सही है। यह हमारा, शिक्षकों और शिक्षाविदों का काम है कि हम इसे समझें, और इसे सिखाने के तरीक़े ईजाद करें। इसी को संस्कृति बनाना कहते हैं।

रचनात्मक विवाद और जनतांत्रिक मूल्य

जनतंत्र का आधार होता है दूसरों की सुनना, उनसे चर्चा करना, अपना तर्क सामने रखना, और मिलकर अच्छे निष्कर्ष पर पहुँचना। कुछ लोग सोचते हैं कि सिर्फ़ वोट डालना ही जनतंत्र की पहचान होती है। वे कहते हैं कि जनतांत्रिक होने का मतलब होता है कि हमें वोट डालने की आज़ादी है, और हम अपने प्रतिनिधि ख़ुद चुनते हैं। इस समझ के अनुसार जनतंत्र में हमारे

चित्र : अबीरा बंदोपाध्याय

प्रतिनिधि हमारा मत प्रस्तुत करते हैं, और जिस मत के ज़्यादा प्रतिनिधि हैं उसे ही विजयी माना जाता है। मगर क्या सही मायने में जनतंत्र यही है? इसमें तर्क और संवाद कहाँ है? कुछ और राजनीति शास्त्रियों का मानना है कि जनतंत्र में यह सही है कि लोगों को अपना मत रखने की आज़ादी होती है, मगर यह तभी सार्थक है जब दूसरे उनको सुन रहे हों। और जब दूसरे बोलें तो हम उनको सुन रहे हों। अगर सभी सिर्फ़ अपनी-अपनी बोल रहे हैं, और कोई दूसरे की सुन नहीं रहा तो बोलने का कोई अर्थ नहीं है।

जनतंत्र में ज़रूरी है कि विचार-विमर्श हो। जनतंत्र वह व्यवस्था है जिसमें अलग-अलग नज़रिए मिलकर एक ऐसी व्यापक समझ बनाएँ जो ज़्यादा अच्छी और समृद्ध हो। अगर हम सिर्फ़ चिल्लाते रहें, और किसी की न सुनें तो हम जिस निर्णय पर पहुँचेंगे वह सबके लिए अच्छा कैसे हो सकता है। एक जनतंत्र, जिसमें हम विचार-विमर्श करते हैं, ज़्यादा अच्छे निर्णय प्रदान करता है। एक विचार-विमर्श वाला जनतंत्र (deliberative democracy) किसी भी दूसरी राजनीतिक प्रणाली से ज़्यादा अच्छा होता है। उसका सबसे ज़्यादा फ़ायदा वहाँ होता है जहाँ सामाजिक ग़ैर-बराबरी अधिक हो। ऐसे समाज में सिर्फ़ जो ज़्यादा ज़ोर से चिल्लाते हैं, वही निर्णय लेते हैं। जिन लोगों के पास ज़्यादा धन और ज़्यादा ताक़त होती है, उन्हें लगता है कि बस हम ही सही बोलते हैं, और उनके पास कम धन, कम ताक़त और कम ओहदे के लोगों को सुनने की कोई इच्छा नहीं होती। जब हम एक ऐसी संस्कृति बनाते हैं जहाँ एक दूसरे को सुनने को प्रोत्साहन मिलता है, और इस बात को बढ़ावा देते हैं कि हम मिलकर सबके भले का हल ढूँढ़ें तो कमज़ोर और ताक़तवर दोनों का फ़ायदा होगा।

संस्कृति बनाना

हम में से कईयों को लगेगा कि दूसरों को सुनना, उनसे संवाद बनाना, और साथ में मिलकर सोचना, यह हमारी ज़िन्दगीभर की आदतों के विपरीत जाता है। ऐसा लगेगा कि यही ज़्यादा आसान है कि हम बस चिल्लाते ही रहें कि हमें क्या चाहिए। लेकिन हम मानव अपनी आदतों को लगातार बदलते भी रहते हैं। जब हमें यह समझ में आता है कि हमारे लिए क्या ज़्यादा लाभकारी है, हम अपनी आदतें धीरे-धीरे बदल लेते हैं। यही हमारे लिए लाभकारी है कि हम मूल्यों पर मन्थन करें, औरों की राय सुनें, और मिलकर सोचें। जो लोग ज़्यादा ताक़तवर हैं, हो सकता है वे शुरू

में इससे हिचकिचाएँ। उन्हें लग सकता है कि सिर्फ़ अपने नज़रिए से सोचते रहना ज़्यादा सुविधाजनक है। मगर थोड़ा-सा भी मन्थन यह दिखा देगा कि सिर्फ़ सुविधा के आधार पर निर्णय लेने से कहीं ज़्यादा अच्छा है कि हम सही-ग़लत, तर्क और प्रमाण के आकलन पर निर्णय लें। इस तरह की सोच जब हमारी आदत बन जाती है, वह हमारी संस्कृति बन जाती है।

हम लगातार अपनी संस्कृति को आगे बढ़ाते हैं, और उसे नए सिरे से बुनते भी हैं। जब इंसानों ने पहली बार शिकार-बटोरने की जगह खेती करना शुरू किया तब भी उन्हें एक नई संस्कृति बनानी पड़ी थी। उन्हें एक जगह टिक कर रहना सीखना पड़ा, घर और शहर बनाने सीखने पड़े, और एक दूसरे की सम्पत्ति का आदर करना सीखना पड़ा। जब इस संस्कृति की आदत पड़ गई तब यह भी आसान और सुविधाजनक ही लगनी शुरू हो गई। आज हमें यह प्रतीत हो रहा है कि पुरानी आदतों में से कुछ बातों को बदलना ही हमारे लिए ज़्यादा अच्छा है। अब हम नई संस्कृति बनाने की कोशिश करे। हिंसा और शोषण की संस्कृति हमारे आज के समाज के लिए, जिसमें इतनी विविधता और इतने रंग हैं, सही नहीं है। हमारे आज के दौर के लिए संवाद की संस्कृति ही ज़्यादा सही है। यह हमारा, शिक्षकों और शिक्षाविदों का काम है कि हम इसे समझें, और इसे सिखाने के तरीक़े ईजाद करें। इसी को संस्कृति बनाना कहते हैं।

सन्दर्भ

1. Bull, Margaret J. 'Using Structured Academic Controversy with Nursing Students.' *Nurse Educator* 32, no. 5 (2007): 218–22.

2. Johnson, David W., Roger T. Johnson, and Dean Tjosvold. 'Constructive Controversy: The Value of Intellectual Opposition.' *In The Handbook of Conflict Resolution: Theory and Practice*, edited by Peter T. Coleman, Morton Deutsch, and Eric C. Marcus, 3rd ed. San Francisco: Jossey-Bass, 2014.

अमन मदान ने मानवशास्त्र और समाज शास्त्र का अध्ययन किया है। पिछले तीन दशकों से शिक्षा और समाज के मुद्दों पर अध्यापन एवं शोध के क्षेत्र में संलग्न हैं। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य कर रहे हैं।

सम्पर्क : amman.madan@apu.edu.in

जोड़–घटाना
स्कूल के गणित का ज़िन्दगी के गणित से अलगाव

मीनू पालीवाल

बच्चों को गणित सिखाने के उद्देश्य क्या हों, और उन उद्देश्यों को हासिल करने के लिए गणित की कक्षा में किस तरह काम किया जा सकता है? इसके कुछ उदाहरण इस लेख में प्रस्तुत हैं। गणित सीखने में भाषा की भूमिका अहम है। इसलिए गणित सिखाने में शुरुआत से ही इबारती सवाल पर काम होना चाहिए। यह कैसे किया जा सकता है? इसके तरीक़े लेखिका सुझाती हैं। सवालों को फ़र्क़-फ़र्क़ तरह से करना, ख़ुद सवाल बनाना, अपने सवालों के हल को जाँचना, यह सभी गणितीयकरण की प्रक्रिया का हिस्सा हैं, और ऐसे मौक़े कक्षा में बच्चों को मिलने चाहिए। -सं.

बच्चे कक्षा के गणित और जीवन के गणित को अलग-अलग समझते हैं। वे उनमें कोई जुड़ाव नहीं बना पाते, यह बात अकसर देखने और सुनने में आती है। यह बात इतनी व्यापक है कि एनसीईआरटी द्वारा प्रकाशित किए गए प्रारम्भिक स्तर पर सीखने के प्रतिफल में सबसे पहले पढ़ने को मिलती है। (सन्दर्भ नीचे देखें)

पाठ्यचर्या की अपेक्षाएँ

बच्चों से अपेक्षाएँ की जाती हैं कि वे –

- दैनिक जीवन के संदर्भों एवं गणितीय विचारों में संबंध स्थापित कर सकें।
- आकारों एवं आकृतियों को समझ सकें तथा उनके अवलोकनीय गुणों में समानता एवं अंतर को स्पष्ट कर सकें।
- दैनिक जीवन में संख्याओं पर संक्रियाएँ (जोड़, घटा, गुणा तथा भाग) करने के अपने तरीकों का विकास कर सकें।
- संख्याओं पर संक्रियाओं के मानक एल्गोरिद्म की समझ के साथ गणितीय भाषा और प्रतीकों की समझ विकसित कर सकें।
- दो या दो से अधिक संख्याओं की संक्रियाओं के परिणामों का अनुमान लगा सकें तथा दैनिक जीवन में इस कौशल का उपयोग कर सकें।
- पूर्ण के हिस्से को भिन्न के रूप में एवं साधारण भिन्नों को बढ़ते या घटते क्रम से प्रदर्शित कर सकें।
- अपने परिवेश से सरल आँकड़ों का संकलन, प्रदर्शन एवं व्याख्या कर सकें तथा इनका दैनिक जीवन में प्रयोग कर सकें।
- आकृतियों तथा संख्याओं के सरल पैटर्नों की पहचान एवं विस्तार कर सकें।

चित्र 1

बात गणित की किसी भी अवधारणा(ओं) की हो, उसको समझने के दौरान बच्चों द्वारा की जारी रहीं ग़लतियों में एक 'पैटर्न' नज़र आता है। पैटर्न कहने से मेरा मतलब है, ऐसी ग़लतियाँ जो बहुत-से बच्चे कर रहे होते हैं, और जिनसे यह साफ़ समझ आता है कि बच्चे उस अवधारणा को नहीं समझ रहे हैं। उदाहरण के लिए, 505 को 5 से भाग देने पर जवाब 11 देना; 604 को 4 से गुणा करने पर उत्तर 2416 लिखना; छोटी संख्या में से बड़ी संख्या घटाना; आदि।

इस लेख में, मैं कक्षा 3 में जोड़-घटाने पर किए गए अपने काम पर विचार रख रही हूँ। आप कक्षा 3 (यहाँ तक कि कक्षा 4, 5) किसी भी बच्चे से पूछें, 123 लड्डुओं में 19 लड्डू मिला देने से क्या 1000 से ज़्यादा लड्डू हो जाएँगे? जवाब मिलेगा, नहीं। लेकिन कई बार कक्षा में 123 और 19 को जोड़कर 1312 उत्तर लिखा हुआ आपको कॉपी में मिल जाएगा। इबारती सवालों को पढ़कर न समझ पाना, सवाल क्या कह रहा है, और इसमें क्या करना अपेक्षित है, यह न समझ पाना भी कक्षाओं में देखा जाता है। जबकि कक्षा में इस

तरह की ग़लतियाँ करने वाले बच्चे दुनिया में इन संख्याओं से बड़ी संख्याओं के जोड़ने-घटाने के सवाल हल कर लेते हैं, पर कक्षा में विचित्र क़िस्म की ग़लतियाँ करते हैं।

इन परेशानियों के मद्देनज़र कुछ शिक्षकों से गणित के सवालों के पैटर्न पर चर्चा

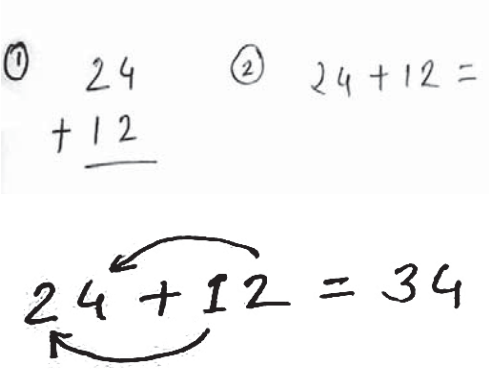

चित्र 2

आमतौर पर स्कूलों में देखने में आता है कि बच्चे चित्र 2 में दिए पहले नम्बर के तरीक़े (खड़े) से आसानी से जोड़ कर लेते हैं। यह भी सम्भव होता है कि वे 5 अंक की संख्या का भी जोड़ कर लें, बावजूद इसके कि वे संख्या को पढ़ और समझ नहीं सकते। पर दूसरे नम्बर के तरीक़े (आड़े) से जोड़ नहीं कर पाते। एक बार एक शिक्षिका से इस विषय पर चर्चा हो रही थी। उन्होंने बताया कि बेसलाइन टेस्ट में बच्चे आड़े में लिखीं संख्याओं का जोड़ नहीं कर पाए, इसलिए उन्होंने आड़े तरीक़े में जोड़ की प्रैक्टिस करवाई। एक अन्य शिक्षक ने कहा, "जब बच्चे खड़े में लिखीं संख्याओं के जोड़ कर पा रहे हैं तो आड़े में देने की ज़रूरत ही क्या है? बच्चे आगे चलकर ये ख़ुद से समझ ही जाएँगे।" इस स्थिति में एक सवाल बनता है कि गणित क्यों पढ़ाया जा रहा है। क्या हम इस विषय से केवल संक्रिया करना सिखाना चाहते हैं, या हमारा उद्देश्य कुछ और भी है? मैं उस वक़्त सोच रही थी कि इस तरह से प्रैक्टिस करवाने की ज़रूरत ही क्यों है। बच्चे आड़े में लिखी संख्या को खड़े में (यदि उन्हें आड़े में जोड़ करने में परेशानी है तो) लिखकर जोड़ सकते हैं और उत्तर लिख सकते हैं, बस उन्हें इतना समझना चाहिए कि उन्हें करना क्या है।

कक्षा अनुभव : ग़लतियों का विश्लेषण और उनपर काम के कुछ सुझाव

- दो अंकों की दो संख्याओं (25 और 25) का जोड़ 410 लिखना

इसका उत्तर सीखने के पहले प्रतिफल में ही है। बच्चे कक्षा में किए जा रहे काम को स्कूल के बाहर की दुनिया से जोड़कर नहीं देख पाते। इसलिए अगला सवाल बनेगा कि क्यों नहीं देख पाते। इसका उत्तर कुछ हद तक गणित पढ़ाने के तरीक़े (पेडागोजी) में मिल सकता है।

पहला सवाल

25 + 25 = _____

दूसरा सवाल

नकुल के पास 25 कंचे थे। उसके भाई ने अपने 25 कंचे भी उसे दे दिए। अब बताइए, नकुल के पास कितने कंचे हो गए?

क्या आपको दोनों सवालों की प्रकृति में कोई अन्तर नज़र आता है?

पहले सवाल में सन्दर्भ ग़ायब है। सन्दर्भ ग़ायब होने से उद्देश्य / सवाल समझ नहीं आता कि करना क्या है। जो करना है वह क्यों करना है? जैसे पहले वाले सवाल में नहीं पता कि 25 क्या है। इसे दो बार क्यों जोड़ रहे हैं; वहाँ जोड़ का चिह्न ही क्यों लगा है? जबकि दूसरे वाले सवाल में ऊपर आए सभी सवालों के जवाब सन्दर्भ से मिल जाते हैं। कई बच्चे, जो चिह्नों को याद कर लेते हैं, जोड़ की प्रक्रिया के चरण दोहरा-दोहराकर याद कर लेते हैं। वे जोड़ भी कर देते हैं, लेकिन सन्दर्भ न होने की वजह से ग़लतियाँ करते हैं।

मेरा कक्षा अनुभव

मेरे अनुभव में इस परेशानी से बचने का उपाय है बच्चों को हर संक्रिया इबारती सवालों द्वारा सिखाना और स्टैन्डर्ड एल्गोरिदम को आख़िर में इस्तेमाल में लाना है।

सवाल बनवाने पर कक्षा में काम

1. शिक्षक द्वारा इबारती सवाल बनाना;
2. बच्चों को केवल जानकारी देना, और उन्हें सवाल बनाने के लिए कहना; और
3. बच्चों से तरह-तरह के फ़ॉर्मेट पर सवाल बनवाना (मसलन, 12 = 24 −_, 24 + ____ = 36, आदि)।

1. शिक्षक द्वारा इबारती सवाल बनाना

शिक्षक ने बोर्ड पर एक सवाल लिखा।

एक औरत घर से 42 रुपए लेकर बाज़ार गई। शाम को जब घर आई, उसके पास केवल 4 रुपए बचे थे। बताओ, उसने कितने रुपए ख़र्च कर दिए?

यह सवाल लिखकर बच्चों से इसी सवाल में थोड़ा-बहुत बदलाव करके सवाल बनवाना। मसलन, रुपए कैसे कम या ज़्यादा हो सकते हैं?

रुपए कम होने के कारण ख़र्च कर देना, किसी को दे देना, खो जाना, आदि हो सकते हैं।

रुपए बढ़ने के कारण– किसी से पैसे मिलना, काम करके कमाना, कहीं पड़े मिलना, आदि हो सकते हैं।

2. बच्चों को केवल जानकारी देना और उन्हें सवाल बनाने को कहना

नबीला ने दुकानदार को 112 रुपए दिए। उसने 97 रुपए का 1 लीटर तेल ख़रीदा। दुकानदार ने उसे 9 रुपए वापस किए।

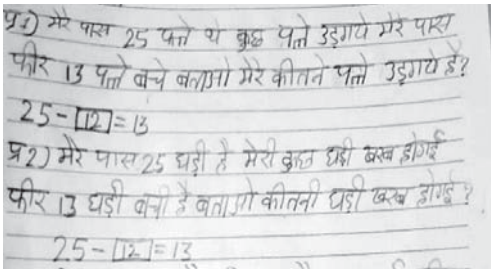

चित्र 3

अब बच्चों से पूछा कि आगे क्या प्रश्न बना सकते हैं।

1. दुकानदार ने नबीला को कितने रुपए कम दिए? (बच्चों ने बनाया)
2. दुकान वाले को और कितने रुपए नबीला को देने चाहिए? (बच्चों ने बनाया)
3. नबीला और कितने रुपए दुकानदार से माँगेगी? (शिक्षक ने बनाया)
4. दुकान वाले ने कितने रुपयों से नबीला को ठग लिया? (बच्चों ने बनाया)

हमारे और आपके अनुभवों में एक बात दर्ज होगी कि बहुत-से बच्चे इबारती सवालों को पढ़कर नहीं समझ पाते। वे समझ ही नहीं पाते कि कौन-सी संक्रिया करनी है। यह परेशानी बच्चों को इसलिए उठानी पड़ती है क्योंकि उन्हें सवालों के साथ जूझने, और ख़ुद से सवाल बनाने के मौक़े बहुत कम मिल पाते हैं। और इसलिए भी क्योंकि कक्षा 3 में भी कई बच्चे पढ़ना-लिखना नहीं सीख पाते। गणित समझने के लिए पढ़ना-लिखना भी ज़रूरी है। इसलिए शुरुआत से ही बच्चों के साथ इबारती सवालों पर काम हो, यह ज़रूरी हो जाता है।

3. बच्चों से तरह–तरह के फ़ॉर्मेट पर सवाल बनवाना (मसलन, 12 = 24 – ___, 24 + ___ = 36, आदि)

बच्चों को ख़ुद से सवाल बनवाने के लिए संक्रिया लिखकर उन्हें हर एक संख्या के लिए वाक्य बोलने हेतु प्रेरित करना।

जैसे : 23 – ____ = 10

बच्चों से 23 के लिए एक वाक्य बोलने को कहना। अलग-अलग बच्चों ने 1-1 लाइन बोलकर इस प्रक्रिया से इबारती सवाल बनाए।

- मेरे पास 23 लड्डू हैं।

इसके बाद इसपर बात करना कि वस्तुएँ बढ़ी हैं या कम हुई हैं?

इसके बाद ख़ाली जगह के लिए एक वाक्य बोलने को कहना।

- कुछ लड्डू नीचे गिर गए।

इसके बाद 10 के लिए एक वाक्य बोलने को कहना।

- अब मेरे पास 10 लड्डू बचे हैं।

अब इस जानकारी पर क्या सवाल बन सकता है, यह पूछने का काम किया।

बताओ, कितने लड्डू गिर गए?

इस प्रक्रिया से बच्चे बोलचाल की भाषा (ज़िन्दगी की भाषा) में पूछे गए सवाल से गणित की भाषा को जोड़कर देख पाते हैं।

बच्चों द्वारा बनाए गए कुछ सवाल

1. मेरे पास कुछ मटर थे। 5 मटर मैंने खा लिए। अब मेरे पास 5 मटर बचे हैं। बताओ, मेरे पास कितने मटर थे?
2. मेरे पास 25 पत्ते थे। कुछ पत्ते उड़ गए। अब मेरे पास 13 पत्ते बचे हैं। बताओ, कितने पत्ते उड़ गए?

जोड़ को आड़े में लिख देने पर जोड़ न कर पाना

कितनी भी बड़ी संख्या का जोड़ कर लेना, भले ही बच्चा वह संख्या न पढ़ पाता हो (12654 + 23323 = 35977)।

मेरी कक्षा के बच्चे जब आड़े में संख्या जोड़ते हैं, वे कम ग़लती करते हैं क्योंकि उस वक़्त वे संख्या को पूर्णता में देखते हैं। जैसे, 30 + 27 + 42 को वे इस तरह से 30 + 20 + 40 + 9 मौखिक जोड़ लेते हैं, लेकिन खड़े में संख्या लिखने पर कई बार हासिल (दहाई, सैकड़ा बनना) ऊपर लिखना भूल जाते हैं या नीचे ही लिखा रहने देते हैं।

```
  24
+ 39
-----
```

इसका 53 या 513 उत्तर लिखना।

इसका कारण यह हो सकता है कि खड़े में संख्या लिखने पर बच्चे केवल एक के नीचे एक लिखे अंकों पर केन्द्रित हो जाते हैं, और संख्या को पूर्ण रूप में नहीं देख पाते। कभी-कभी जल्दबाज़ी में वे यह भूल भी जाते हैं कि हासिल उन्होंने सही जगह नहीं जोड़ा है। ऐसा इसलिए कहा जा सकता है क्योंकि एक ही बच्चा एक ही पन्ने में कुछ सवालों में हासिल की ग़लती नहीं करता है, और कुछ में वो यह ग़लती कर बैठता है। बच्चे जोड़ को सम्पूर्णता में समझ सकें, इसके लिए उन्हें तरह-तरह के जोड़ के सवालों से रूबरू कराने की ज़रूरत होती है। (इसपर विस्तार में बात अगले बिन्दु में की गई है।)

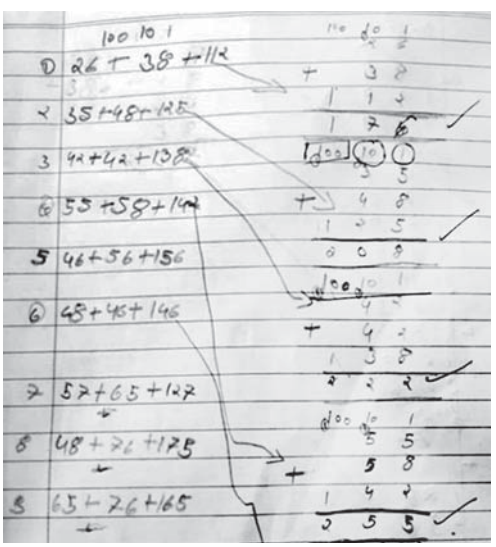

चित्र 4

चित्र 5

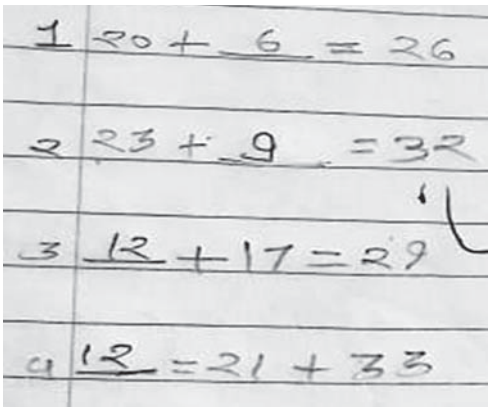

चित्र 6

मेरे विचार और कक्षा अनुभव

बच्चों के आड़े में जोड़ न कर पाने की समस्या यह बताती है कि बच्चे जोड़ की अवधारणा को ही नहीं समझ रहे हैं। जिन बच्चों को जोड़ की प्रक्रिया से जोड़ना नहीं आता, वे भी जोड़ की अवधारणा समझते हैं। मसलन, कई लोग जो स्कूल में पढ़े नहीं हैं, वे बिना प्रक्रिया के भी जोड़ पाते हैं। जोड़ की कोई प्रक्रिया पता न हो, तब भी जोड़ की अवधारणा की समझ होती है। जोड़ की अवधारणा और स्थानीय मान की अवधारणा में भी अन्तर है। यानी, कोई बच्चा यदि 13 और 25 को बिना प्रक्रिया के सिर्फ़ उँगली पर या फिर मन में ही 10-10 या 5-5 या अन्य संख्या के समूह बनाकर उनकी गिनती करके जोड़ लेता है, तब भी हमें कहना होगा कि वह जोड़ की अवधारणा जानता है। वस्तुओं के किसी एक समूह में दूसरे समूह को मिलाना, या एक समूह में वस्तुओं की संख्या में वृद्धि हो जाना, जोड़ है। अब कितनी वस्तु हो जाती हैं, इसके लिए बच्चे की ख़ुद की कोई विधि हो, या फिर मानक प्रक्रिया से किया जाए, इससे बहुत फ़र्क़ नहीं पड़ना चाहिए। जब मैं अपनी कक्षा में जोड़ का काम कर रही थी, तब बच्चों ने ख़ुद से आड़े में दिए गए सवाल को खड़े में जोड़ा, और उत्तर आड़े में सवाल के सामने लिख दिए। ऐसा करने के लिए उन्हें नहीं कहा गया था। उन्हें जोड़ के कुछ सवाल आड़े में लिखकर हल करने के लिए दिए गए थे। कुछ बच्चे 26, 38 और 112 को पूरी संख्या के रूप में देखकर भी जोड़ कर रहे थे : 20 + 30 + 100 + 14 + 12। पर इस काम से पहले हम बहुत-से इबारती सवालों पर काम कर चुके थे। इस वजह से बच्चों को जोड़ को बेहतर तरह से समझने के मौक़े मिले।

चिह्नों की जगह बदल देने पर हल न कर पाना। इस फ़ॉर्मेट, 23 + 24 = ___, में तो बच्चे सवाल हल कर लेते हैं, पर इस फ़ॉर्मेट, ___ = 23 + 24, में उन्हें परेशानी होती है।

जोड़ने-घटाने के बीच सम्बन्ध न देख पाना। यदि सवाल का स्वरूप बदल दें, 23 = 47 – ___ तो सवाल हल न कर पाना।

बच्चों को बाहर की दुनिया में तरह-तरह के अनुभव होते हैं। हमें भी उन्हें कक्षा में तरह-तरह के एक्सपोज़र देने की ज़रूरत है। एक और ज़रूरी बात यह है कि हम केवल उन्हें संख्याएँ व संक्रियाएँ नहीं सिखा रहे हैं, हम उन्हें गणितीय रूप से सोचना, समस्या समाधान, संख्याओं में सम्बन्ध ढूँढ़ना, जैसी अवधारणाएँ सिखा रहे हैं, और गणित की औपचारिक भाषा से परिचित करा रहे हैं। जब हमारा उद्देश्य यह सब है, ऐसी स्थिति में सिर्फ़ बराबर के चिह्न की जगह बदल देने से या संक्रिया का फ़ॉर्मेट बदल देने से बच्चे का सवाल न हल कर पाना एक चिन्ता का विषय है। आप चित्र 5 और 6 में देख सकते हैं कि

दो बच्चों ने एक-सी गलती की है। 12 = 21 + 33। इससे समझ आता कि बच्चे जोड़ के कॉमन फ़ॉर्मेट (12 + 21 = 33) में ही प्रश्न को हल कर रहे हैं। वे चिह्न देख ही नहीं रहे हैं। कुछ स्टेप्स को याद करके दोहराना तार्किक चिंतन नहीं कहा जा सकता जो कि गणित का असल उद्देश्य है। इसलिए शिक्षक की यह ज़िम्मेदारी बनती है कि वे बच्चे के काम का अवलोकन करें और उसे सोचने के लिए लगातार प्रेरित करें।

मेरे विचार और कक्षा अनुभव

(तरह-तरह के सवालों से रूबरू करना)

बच्चे लिखे हुए को ध्यान से देखें, और जोड़-घटाने को समग्रता में सीखें, इसके लिए मैंने कक्षा में 3 संख्याएँ 20, 50, 70 लिखीं, और बच्चों को उन्हें एक ख़ाली फ़ॉर्मेट में लिखने को कहा।

1. ___ + ___ = ____
2. ___ + ___ = ____
3. ___ – ___ = ____
4. ___ – ___ = ____

जब बच्चे ये काम करके लाए, बच्चों से केवल इतना ही कहा कि अपने काम को दोबारा देखें। ज़्यादातर बच्चों ने अपनी ग़लतियाँ पहचान लीं और ख़ुद से ठीक भी कर लीं। मुझे लगता है कि मेरी कक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण चरण यही था कि बच्चों को यह नहीं बताना पड़ा कि उन्होंने कहाँ ग़लती की।

इसी तरह, संख्या लिखकर चिह्न लगवाने का काम भी किया (चित्र 7 देखें)। इस तरह से हल करने से बच्चे जोड़-घटाने में सम्बन्ध भी देख पा रहे थे। जैसे– 12 – 6 = 6 और 12 = 6 + 6। या यूँ कहें, जोड़ घटाने की अवधारणा मज़बूत होगी।

फ़ॉर्मेट में बदलाव के साथ भी सवाल दिए गए। इन फ़ॉर्मेट को भी इबारती सवालों के द्वारा ही इंट्रोड्यूस किया गया। उदाहरण के लिए, मेरे पास कुछ आम थे। मम्मी ने मुझे 12 आम और दे दिए। अब मेरे पास 15 आम हो गए। बताओ, मेरे पास पहले कितने आम थे?

(अ) ____ + 12 = 15
(ब) 12 + ____ = 15
(स) 46 = 58 – ____

स्टैन्डर्ड एल्गोरिदम से परिचय

कक्षा 3 में हमने जोड़ने और घटाने के स्टैन्डर्ड एल्गोरिदम का परिचय करवाया। इसके लिए हमने इबारती सवालों पर काम किया।

सवाल : श्रीलंका ने एक मैच में 245 रन की पारी खेली। भारत अभी तक 112 रन बना चुका है। भारत को जीतने के लिए अब और कितने रन बनाने होंगे?

इकाई के नीचे इकाई, दहाई के नीचे दहाई और सैकड़ा के नीचे सैकड़ा साफ़-साफ़ लिखने पर बात की। यह एक महत्त्वपूर्ण बात है जिसे कक्षा में बार-बार दोहराने की ज़रूरत पड़ती है।

"245 में से 112 को कम करेंगे या जोड़ेंगे?" मैंने पूछा। इसका जवाब मिला-जुला आया। कुछ बच्चे कम करने के लिए कह रहे थे और कुछ

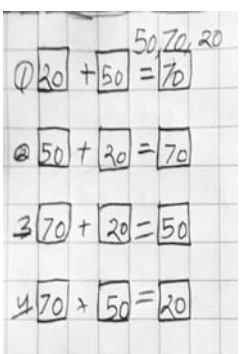

चित्र 7

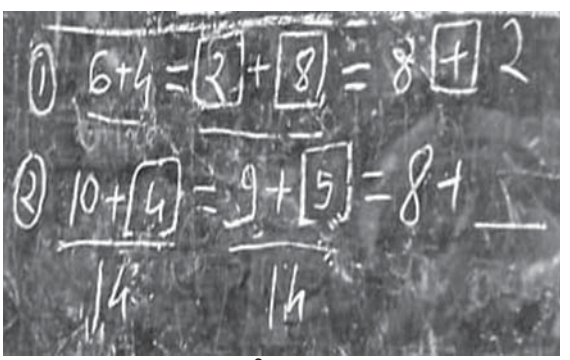

चित्र 8

ज़्यादा। मैंने पूछा, "हमारा उत्तर 245 से ज़्यादा आएगा या कम?" यहाँ एकमत उत्तर आया कि 245 से कम आएगा। "इसलिए हम यहाँ क्या करेंगे– जोड़ेंगे या घटाएँगे?" बच्चे बोले, "घटाएँगे।" (क्या यह अजीब बात नहीं कि पहले सवाल पर बच्चों का जवाब मिला-जुला था, और अगले सवाल पर एकमत जवाब आया। सोचिए, यदि शिक्षक यह सवाल नहीं सोच पाए, और सीधे यह कहे कि इस सवाल में हम घटाना करेंगे तो बच्चे किसी भी सवाल को शिक्षक के समझाए बिना समझना कैसे सीख पाएँगे?)

सै	द	ई
2	4	5
1	1	2
1	3	3

इस प्रश्न के उत्तर पर एक बच्चा धीमी आवाज़ में बोला, "इससे (133 से) एक रन और बना लेंगे तो भारत जीत जाएगा।" यह सुनकर मुझे अच्छा लगा कि कैसे जब पढ़ी जा रही बात ज़िन्दगी से जुड़ती है, वह सिर्फ़ जोड़ने-घटाने तक सीमित नहीं होती। उसका बच्चे के लिए मायने होता है।

मैंने सवाल दोहराया, "भारत को जीतने के लिए कितने रन बनाने होंगे?"

काफ़ी सारे बच्चे, "133"।

यह अजीब बात थी। एक ही बच्चा 134 बोला। इसपर सोचने के लिए वक़्त दिया तो सभी बच्चे बोले, "हाँ, 134 बनाना होगा। 133 पर तो मैच ड्रॉ हो जाएगा।"

स्टैन्डर्ड एल्गोरिदम से परिचय के बाद, समझ को पक्का करने के लिए संख्याओं के कुछ अंक न लिखकर नए फ़ॉर्मेट में (चित्र 9 देखें) बच्चों को सवालों का अभ्यास करवाया। बच्चों में इन सवालों को हल करने का एक अलग उत्साह देखने को मिला। 655 में से 359 घटाने वाले सवाल में 3 के ऊपर वाले डिब्बे में 5 आएगा, यह ज़्यादातर बच्चे बोल रहे थे। एक बच्चा जो कम ध्यान देता है, और कक्षा में बहुत शरारत करता

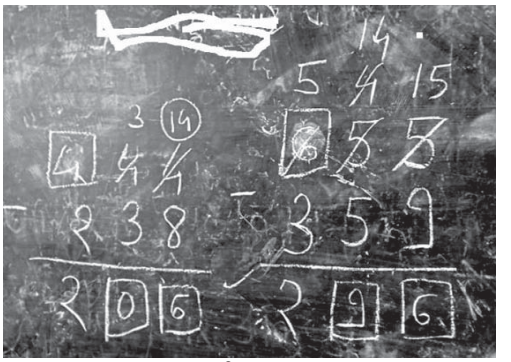

चित्र 9

है, वह अकेला कह रहा था कि 6 आएगा। उससे कारण पूछने पर उसने बताया, "एक सैकड़े का तो हमें खुल्ला करना पड़ा था, वह भी तो ध्यान रखना पड़ेगा।" उसके कहने के बाद सारी कक्षा समझ चुकी थी कि वह सही बोल रहा है। यह बहुत सुखद लगता है जब कक्षा में शिक्षक की भूमिका में बच्चे ही आ जाएँ। इसके लिए शिक्षक को हर बार बच्चे से कारण ज़रूर पूछना चाहिए कि तुमने यह सवाल कैसे हल किया।

गणित में प्रैक्टिस की ज़रूरत

गणित में अवधारणात्मक ज्ञान के बाद प्रक्रियात्मक ज्ञान की भी बेहद ज़रूरत होती है। बच्चे कई बार सीखी हुई प्रक्रिया के चरण भूल जाते हैं, और फिर वे कई तरह की गड़बड़ कर बैठते हैं। बच्चों से यह जानना, कि उन्होंने कोई उत्तर कैसे निकाला है, शिक्षक को बच्चे की परेशानी को पहचानने में मदद करता है। जैसे– 323 में से 136 घटाने पर कक्षा से बहुत-से उत्तर मिले : 187 (8 बच्चे), 193 (1 बच्चा), 287 (1

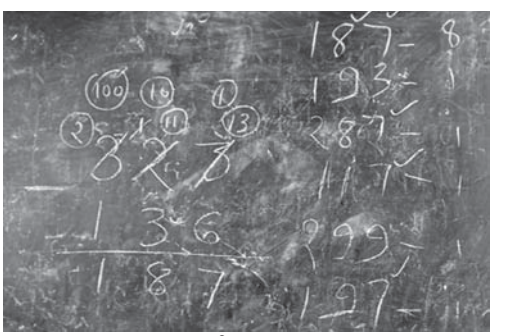

चित्र 10

बच्चा), 117 (1 बच्चा), 299 (1 बच्चा), 197 (1 बच्चा)। चलिए, इसका विश्लेषण करते हैं। समय की कमी के कारण कई बार हर बच्चे से बात कर पाना मुमकिन नहीं होता। इसका एक तरीक़ा यह हो सकता है कि हम किसी प्रश्न के लिए सभी बच्चों से उत्तर ले लें, और सामूहिक रूप से प्रश्न हल करें। कक्षा में मिलकर हमने इस प्रश्न (चित्र 10 देखें) के उत्तर पर चर्चा की। इससे बच्चे यह समझ पाए कि उन्होंने किस चरण में ग़लती की है, और वे आगे उस बात का ध्यान रख सकें।

299 वाले उत्तर में बच्चे ने इकाई में 9 लिखा है। इसका मतलब बच्चे ने घटाने की बजाय जोड़ किया है।

193 वाले उत्तर में बच्चे ने 6 (नीचे वाला अंक) में से 3 (ऊपर वाला अंक) घटा दिया है।

इस तरह, कक्षा में हमने 193 और 299 वाले उत्तरों को काट दिया कि यह उत्तर हो ही नहीं सकता। इसके बाद 187, 287, 117, 197 वाले उत्तरों पर बात की। 117 वाले उत्तर में बच्चे ने 3 में से 2 को घटा दिया है। 197 वाले उत्तर में बच्चे ने 12 में से 3 घटाया है। वह यह भूल गया कि 2 दहाई में से 1 दहाई को पहले ही खुल्ला कर दिया था। और अन्त में, यही ग़लती 287 लिखने वाले बच्चे ने भी की।

ऊपरी तौर पर देखने से लग सकता है कि बच्चे ध्यान नहीं देते, और बिना सोचे-समझे उत्तर लिख लेते हैं। लेकिन क़रीब से देखने पर यह समझ आता है कि बच्चे काफ़ी सोच-समझकर काम कर रहे हैं। ऊपर के प्रश्न में ऐसा कोई भी उत्तर नहीं मिला जिसके ग़लत होने का कारण न समझ आए, या किस चरण में ग़लती हुई है यह न समझ पाएँ। कई बार जल्दबाज़ी में, ध्यान भटकने से भी कुछ ग़लतियाँ हो जाती हैं। जैसे, 287 उत्तर लिखने वाले बच्चे ने 2 चरणों में ठीक काम किया है। अब यह थोड़ा अजीब लगता है कि वह अन्तिम चरण में 3 सैकड़ा में से 1 सैकड़ा घटाए, क्योंकि इससे पिछले चरण में उसने ध्यान रखा है कि उसके पास 12 नहीं 11 दहाई ही हैं। इस बच्चे के बारे में शिक्षक यह कह सकते हैं कि इस बच्चे को घटाना आता है, और अगली बार यह बच्चा किसी 3 अंक की संख्या को ठीक से घटा सकता है क्योंकि उसका अवधारणात्मक ज्ञान ठीक दिखता है, लेकिन प्रक्रियात्मक ज्ञान के लिए अभी और प्रैक्टिस की ज़रूरत है।

इस तरह की प्रक्रिया अपनाने के बाद भी सभी बच्चे हर तरह के फ़ॉर्मेट के सवालों को हल नहीं कर पाते। कुछ बच्चों को सवाल समझने में भी परेशानी होती है, और कई बार समझ होने के बावजूद भी बच्चे कुछ ग़लतियाँ कर बैठते हैं। वहीं कुछ को अभी गिनती पक्की करनी है। जब ऐसा होता है, तब दुःख होता है कि इतना काम किया फिर भी कुछ बच्चे क्यों नहीं कर पा रहे हैं! लेकिन फिर शिक्षा के एक सिद्धान्त का ख़्याल आता है कि हर बच्चा एक-सा, और एक-सी रफ़्तार से नहीं सीखता। और हमें ख़ुद को यह समझाना होता है कि बच्चे सीखने के लिए अपना समय लेते हैं।

यह लगभग 20-25 कालखण्ड में किया गया काम है। इस दौरान बच्चों के सोचने के तरीक़े को नज़दीक से देखने का मौक़ा मिला। उनके द्वारा की गई ग़लतियों से हमारे आगे के काम को दिशा मिली। इस प्रक्रिया में बच्चों को स्कूल से बाहर की दुनिया को स्कूल से जोड़कर देखने के बहुत-से मौक़े दिए गए। बच्चों ने केवल जोड़ना-घटाना नहीं सिखा, उन्होंने लिखे हुए को ठहरकर ध्यान से देखना, गहराई से सोचना, बोली हुई बात को लिखना, दी गई जानकारी पर सवाल बनाना, सवाल पढ़कर समझना, अपने और अपने दोस्तों के काम का अवलोकन करना, आदि सब सीखा।

मीनू पालीवाल ने अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में 6 वर्ष काम किया है। आप फ़ेलोशिप प्रोग्राम के ज़रिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से जुड़ीं। इससे पहले उन्होंने 6 वर्ष आईसीआईसीआई बैंक में काम किया। वे अपने मन में आने वाले सवालों की तलाश में शिक्षा और शिक्षण प्रक्रिया से जुड़ीं। उन्हें प्राथमिक कक्षाओं में काम करना अच्छा लगता है।

सम्पर्क : paliwal.meenu@gmail.com

मैटी, बैठ जाओ! बैठ जाओ मैटी!

मैटी के ज़रिए बच्चों के विकास के मुद्दों को समझने की कोशिश

दीपाली शुक्ला

इन्दु एल हरिकुमार द्वारा लिखित और चित्रित *मैटी, बैठ जाओ! बैठ जाओ, मैटी!* किताब को बीते बरस मेरे द्वारा कई प्रशिक्षणों में इस्तेमाल किया गया। इन प्रशिक्षणों में हुए अनुभवों को इस लेख में दर्ज करने की कोशिश की गई है। दरअसल यह किताब बच्चों और बचपन को समझने का मौक़ा देती है। एक और महत्त्वपूर्ण काम यह किताब करती है। यह बच्चे और वयस्क के रिश्ते पर संवाद का अवसर देती है। पहले-पहल मैंने जब इस किताब को पढ़ा था, मुझे इसमें एक हाइपरएक्टिव बच्चे की छवि मिली। एक ऐसा बच्चा जो अपने मनमाफ़िक़ कुछ करना चाहता है। हालाँकि वो जो करता है, पूरी तल्लीनता के साथ करता है। यह ज़रूर है कि उसे अपने मनमाफ़िक़ कुछ करने का मौक़ा केवल अपनी ड्रॉइंग क्लास में मिलता है। यह मौक़ा उसके लिए क्या महत्त्व रखता है, यह कहानी के अन्त में पता चलता है।

यह कहानी और इसके चित्र पाठकों के साथ लगातार संवाद के कई मौक़े बनाते हैं। डाइट, पचमढ़ी में डीएड के विद्यार्थियों को यह कहानी सुनाई गई तो सबकी रुचि इस बात में थी कि शिक्षिका बच्चे को दौड़ने से रोकतीं क्यों नहीं; वह बाक़ी बच्चों को ड्रॉइंग के कामों को करने के लिए कैसे प्रेरित कर पा रही हैं; वह मैटी को इतनी आज़ादी कैसे दे पा रही हैं; आदि। हमने यह भी चर्चा की कि शिक्षिका मैटी की रचनात्मकता और उसकी दौड़ने की आदत के बीच सन्तुलन रखने के लिए क्या-क्या कर रही हैं। मैटी को डांस करते देख शिक्षिका कहती हैं, "मैटी, तुम्हें लय-ताल की अच्छी समझ है।" यह बात कहानी में हौले से आती है, और इसके बाद एक शिक्षिका के अपने विद्यार्थी के प्रति दोस्ताना व्यवहार को देखने का काम हो पाता है। मैटी जो बना रहा है, उसका क्या उपयोग बाक़ी बच्चे और शिक्षक कर रहे

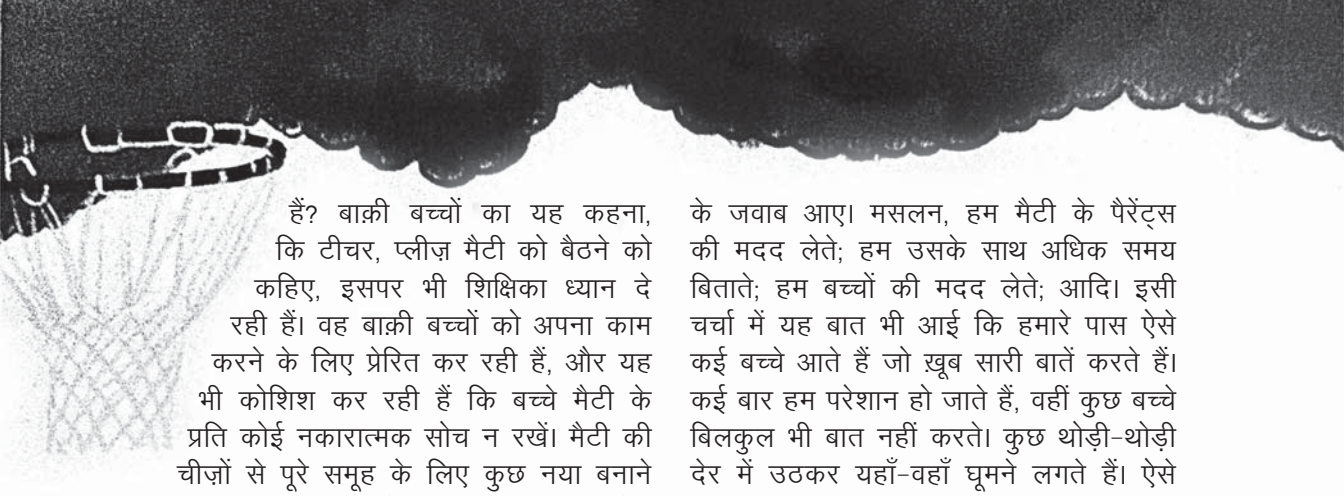

हैं? बाक़ी बच्चों का यह कहना, कि टीचर, प्लीज़ मैटी को बैठने को कहिए, इसपर भी शिक्षिका ध्यान दे रही हैं। वह बाक़ी बच्चों को अपना काम करने के लिए प्रेरित कर रही हैं, और यह भी कोशिश कर रही हैं कि बच्चे मैटी के प्रति कोई नकारात्मक सोच न रखें। मैटी की चीज़ों से पूरे समूह के लिए कुछ नया बनाने का काम संसाधनों को लेकर शिक्षक की सोच को सामने रखता है। कुछ भी अनुपयोगी नहीं है। बस उसे किस तरह से इस्तेमाल किया जाए, इसको लेकर रचनात्मक तरीक़े से सोचने की ज़रूरत है। इसी चर्चा को आगे बढ़ाते हुए बचपन की विविधता, और बच्चों की विविधता पर भी बात शुरू की। इस दौरान कुछ अनुभव साझा हुए। कक्षा और घर में वो जो करना चाहते थे, उसको लेकर वयस्कों का नज़रिया कैसे हावी था; यहाँ शिक्षिका संवेदनशील हैं, और हरेक बच्चे पर कैसे ध्यान दे रही हैं; सीखने की आज़ादी दे रही हैं। कहानी के अन्त में मैटी का अपनी शिक्षिका से संवाद वाला हिस्सा सबको बेहद क़रीबी लगा। बच्चे बड़ों को बारीक़ी से देखते हैं, और वो यह अच्छे-से समझ पाते हैं कि बड़े उनके साथ कैसे व्यवहार कर रहे हैं। पहले पढ़ने पर, मैंने बच्चे को हाइपरएक्टिव मान लिया था। कहानी के अन्तिम हिस्से को पढ़कर मेरा भी यह भाव टूटा। बच्चों के सीखने के तरीक़े अलग-अलग हो सकते हैं। और कोई बच्चा कैसे सीखने की इस प्रक्रिया को अपनाता है, यह बच्चे पर निर्भर करता है।

बच्चों के साथ काम करते समय शिक्षक या फ़ैसिलिटेटर को किन बारीक़ियों में जाना होता है, कहानी इसके लिए कई सुराग़ देती है। एक अन्य कार्यशाला, 'लाइब्रेरी से दोस्ती' कोर्स के दौरान इस किताब की कहानी सुनाई गई। कहानी सुनाने के बाद जब यह सवाल किया गया कि अगर आप मैटी के शिक्षक होते, आप क्या करते। इसको लेकर अलग-अलग तरह के जवाब आए। मसलन, हम मैटी के पैरेंट्स की मदद लेते; हम उसके साथ अधिक समय बिताते; हम बच्चों की मदद लेते; आदि। इसी चर्चा में यह बात भी आई कि हमारे पास ऐसे कई बच्चे आते हैं जो ख़ूब सारी बातें करते हैं। कई बार हम परेशान हो जाते हैं, वहीं कुछ बच्चे बिलकुल भी बात नहीं करते। कुछ थोड़ी-थोड़ी देर में उठकर यहाँ-वहाँ घूमने लगते हैं। ऐसे में क्या किया जाए? तब यह चर्चा हुई कि हम वयस्क, बच्चों को अपने नज़रिए से देखते हैं, और चाहते हैं कि हम जो कह रहे हैं उस बात को वो मानें। यहाँ शिक्षिका उस बच्चे को पूरा मौक़ा दे रही हैं, और उससे संवाद कर रही हैं। पर उसकी आज़ादी में किसी तरह का ख़लल नहीं डाल रहीं। क्या हममें इतना धैर्य नहीं होना चाहिए कि हम बच्चे को वो जगह दें जो वह चाहता है! हमें बच्चों को समझना होगा। उनके सीखने की प्रक्रियाओं को लेकर नई-नई रणनीतियाँ भी बनानी होंगी। एक शिक्षक के रूप में विचारों की विविधता को जगह देना, और सबके बीच सामंजस्य बनाना भी एक शिक्षक की भूमिका है। इसी तरह, बच्चों की रचनात्मकता को उभारना भी एक शिक्षक की भूमिका है। मैटी की शिक्षिका मैटी के बालमन को समझ रही हैं।

इस किताब का इस्तेमाल एक प्रशिक्षण में लेखन गतिविधि के दौरान भी किया। कहानी पढ़ने के बाद प्रशिक्षार्थियों को यह टास्क दिया गया कि आपको मैटी को एक पत्र लिखना है। इस पत्र में बचपन की इस ड्रॉइंग क्लास से जुड़े अनुभव के बारे में आपको मैटी के साथ अपनी भावनाएँ भी साझा करनी हैं। यह पत्र आप वयस्क होने के बाद मैटी को लिख रहे हैं। आप और मैटी एक ही ड्रॉइंग क्लास में जाते थे, तब आप मैटी से परेशान भी होते थे। अब आप मैटी के साथ अपनी भावनाएँ व्यक्त कर रहे हैं, और उसकी उस समय की स्थिति को लेकर पत्र में बातें दर्ज कर रहे हैं। इस पत्र लेखन में यह हिस्सा मज़बूती से आया कि बाक़ी बच्चों

को मैटी से किस तरह की परेशानी होती थी। पर अब जब वो बड़े हो गए हैं, वो मैटी की स्थिति को समझ पाते हैं। जैसे, प्रतिभागियों ने लिखा कि...

"मैटी, उस समय जब तुम दौड़ते रहते थे तो मुझे बुरा लगता था। तुम बैठते ही नहीं थे। पर अब मुझे लगता है कि तुम कितने मज़े से क्राफ़्ट किया करते थे। तुमने हम लोगों को कभी परेशान नहीं किया। इतने सालों बाद इस बात को याद करके मुझे हँसी आ रही है कि तुम्हारे रॉकेट से पूरी क्लास भर गई थी।"

इस किताब के चित्रों में मैटी की दुनिया बेहद ख़ूबसूरती से बयाँ की गई है। एक दुनिया जहाँ मैटी अपनी कल्पना को रचता है, और परिन्दों की तरह उड़ता है। वहीं शिक्षिका भी आपको कल्पनाशील दुनिया में उड़ान भरती हुई मिलेंगी। इनमें हरे और नीले रंग के ख़ूब सारे शेड्स हैं जो मैटी, शिक्षिका और बाक़ी बच्चों की सोच और स्थिति को बयाँ करते हैं।

मैटी के ज़रिए मैंने सोशियो-इमोशनल लर्निंग के बारे में और जानना भी शुरू किया। इस कहानी को पढ़ते हुए शायद आपको जूलिया वेबर गार्डन की *मेरी ग्रामीण शाला की डायरी* याद आ जाए, जिसमें उन्होंने भी बच्चों को जानने की प्रक्रिया के कुछ उदाहरण दर्ज किए हैं। मैटी की कहानी को पढ़ते हुए मैं जॉन होल्ट की किताब *बचपन से पलायन* पर वापस लौटी। ख़ासतौर पर, बाल्यावस्था की संस्था वाले हिस्से पर। इसमें उन्होंने विस्तार से बचपन, बच्चों और बचपन की विविधता को दर्ज किया है।

मैटी, बैठ जाओ! बैठ जाओ, मैटी! मज़ेदार शीर्षक है जो कहानी को लेकर संवाद शुरू करता है। मैटी को ऐसा क्यों कहा जा रहा है; मैटी कौन है; कहानी किस बारे में है? इसका अन्दाज़ा किताब के कवर पेज का चित्र देता है। पर जब कहानी शुरू होती है, कई हिस्से संवाद के लिए खुलते हैं। यह भी महसूस होता है कि मैटी केवल कल्पना नहीं है। वह एक हक़ीक़त है। इन्दु ने अपने अनुभव को कहानी में पिरोया है।

इस चित्रकथा को एकलव्य ने प्रकाशित किया है। यह हिन्दी और अँग्रेज़ी दोनों ही भाषाओं में उपलब्ध है।

सभी चित्र मैटी, बैठ जाओ! बैठ जाओ, मैटी! पुस्तक से साभार

दीपाली शुक्ला, एकलव्य संस्था के प्रकाशन कार्यक्रम से एक दशक से अधिक समय से जुड़ी हैं। बाल साहित्य पढ़ना पसन्द है। लाइब्रेरी और रीडिंग पर काम करती हैं। लाइब्रेरी से दोस्ती कोर्स से जुड़ी हैं। बच्चों और शिक्षकों के साथ बाल साहित्य को लेकर चर्चा करना भी अच्छा लगता है।

सम्पर्क : deepalishukla99@yahoo.com

पाठ्यपुस्तक की कहानियाँ और भाषा शिक्षण

प्रवीण श्रीवास्तव

शुरुआती कक्षाओं में भाषा शिक्षण के सन्दर्भ में कविता और कहानियों का होना महत्त्वपूर्ण है। यह भी महत्त्वपूर्ण है कि इनपर कक्षा में काम कैसे किया जाए। लेखक कहते हैं कि कक्षा में शिक्षक द्वारा कहानी का वाचन करना व्यर्थ है। असल में, कहानी बच्चों तक तब पहुँचती है जब कहानी को कहानी की तरह ही सुनाया जाए, और बच्चों को भी उस कहानी को मौन रूप से पढ़ने के मौक़े दिए जाएँ। यदि बच्चों की मातृभाषा पाठ्यपुस्तक की भाषा से अलग है तो कहानी को बच्चों की मातृभाषा में सुनाना, बच्चों को कहानी से जुड़ने के अवसर देता है। वे यह भी कहते हैं कि बच्चे सीखते हैं, और उनके सीखने के दौरान शिक्षक को काफ़ी धैर्य रखने की ज़रूरत है। -सं.

पृष्ठभूमि

मैंने यह अनुभव किया कि बहुत-से शिक्षक, जिनमें मैं ख़ुद भी शामिल हूँ, विद्यार्थियों को सीधे कहानी को पढ़कर सुनाना शुरू कर देते हैं। कहानी पढ़ने के बाद वे बच्चों को अभ्यास कार्य के तौर पर प्रश्न-उत्तर लिखने के लिए कह देते हैं। ऐसा करते हुए कुछ दिनों में मुझे यह महसूस हुआ कि मात्र इतना करने से भाषा शिक्षण के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं हो सकेगी क्योंकि कहानी मैं पढ़ता था, काफ़ी हद तक अभ्यास के प्रश्न-उत्तर का जवाब भी मेरे द्वारा ही दिया जाता था, या किताब में रेखांकित करवा दिया जाता था।

मुझे लगा कि कुछ ऐसा किया जाए जिससे विद्यार्थी कहानी से सीधे जुड़ सकें, कहानी के बारे में उनकी समझ बने, और इस समझ को वे व्यापक कर सकें। साथ ही, भाषा शिक्षण के व्यापक उद्देश्यों, जैसे– कहानी पढ़कर अर्थ बना पाना, सोचने के अवसर बनाना, क्षेत्रीय भाषा का समावेश, और सन्दर्भ में व्याकरण, आदि पर कार्य हो सके। यह सोचते हुए मैंने अपनी कक्षा के लिए निम्न उद्देश्य तय किए :

- बच्चे सुनी अथवा पढ़ी रचनाओं (हास्य, साहसिक, सामाजिक, आदि विषयों पर आधारित कहानी, कविता, आदि) की विषयवस्तु, घटनाओं, चित्रों और पात्रों, शीर्षक, आदि के बारे में बातचीत करें, प्रश्न पूछें, अपनी स्वतंत्र टिप्पणी दें, अपनी बात को / दावे को सही बताने के लिए तर्क दें, और अपने निष्कर्ष बनाएँ;
- कहानी, कविता अथवा अन्य सामग्री को अपनी तरह से अपनी भाषा में कहते हुए उसमें अपनी कहानी / बात जोड़ सकें; और
- अपने लेखन में विराम चिह्नों, जैसे– पूर्ण विराम, अल्प विराम, प्रश्नवाचक चिह्न, उद्धरण चिह्न, आदि को समझना शुरू करें।

तैयारी

विभिन्न स्तरों पर बच्चों के साथ काम करते हुए कई तरह के संसाधनों और प्रक्रियाओं

की तैयारी के लिए कार्य किए गए। हम सब जानते हैं कि सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में पाठ्यपुस्तक एक साधन है। महत्त्वपूर्ण यह है कि जिस अवधारणा पर हम कक्षा में कार्य कर रहे हैं उसपर बच्चों की समझ सहजता के साथ कैसे बनाई जाए, और इस दौरान जो संसाधन, सवाल, सहायक सामग्री इस्तेमाल होगी, वह पहले ही जुटाई जा सके। मैंने पाठ्यपुस्तक *भाषा भारती* कक्षा तीन से एक कहानी 'धरपटक और मुँहपटक', और कक्षा चार से 'खूँटे का घोड़ा' कहानी का चुनाव करके कार्य किया।

इन कहानियों का चुनाव मैंने इस वजह से भी किया क्योंकि इन कहानियों में बच्चों को अपनी सोच को विस्तार देने, और उसे अभिव्यक्त करने के मौक़े शामिल हैं। बच्चों का आकलन भी इस तैयारी का ही हिस्सा था। काम करने के दौरान मुझे समझ आया कि विद्यार्थी कहानी के बारे में ठीक से अभिव्यक्ति नहीं कर पा रहे थे। ऐसे बच्चों की संख्या बेहद नगण्य थी जो कहानी की समस्याओं पर अपनी बात रख सकें, और उसके आधार पर सोच सकें। पूछे गए सवालों पर बच्चों को सोच-समझकर जवाब देने, माने भाषा का सही इस्तेमाल करने में कठिनाई होती थी। इसी तरह, बच्चे कहानी के सारांश को भी व्यक्त नहीं कर पा रहे थे। इस आधार पर यह कह सकते हैं कि कहानी से उनका जुड़ाव नहीं बन पा रहा था।

चरणबद्ध गतिविधि

पहला चरण

सबसे पहले मैंने बच्चों के साथ कहानी के शब्दों पर कार्य करना शुरू किया। उदाहरण के लिए, मैंने कहानी के मुश्किल शब्दों का बुन्देली अनुवाद किया। जैसे– दण्ड बैठक के लिए डड़ें लगाना, शकरपारा के लिए गड़िया घुल्ला, सत्तू की पोटली के लिए सत्तू की पुटरिया, बियाबान जंगल के लिए घनघोर जंगल, आदि। इन शब्दों को बोर्ड पर एक तरफ़ लिखकर बच्चों के साथ उनपर चर्चा की। जिन शब्दों के भौतिक चित्र उपलब्ध हो सकते थे उनके लिए मैंने चित्रों का सहारा लेकर कार्य किया। शब्दों के चित्र मैंने अख़बार से काटकर अलग किए थे, और इस तरह बच्चों के साथ उनपर कार्य किया।

मैंने कहानी सुनाना शुरू किया। कहानी सुनाने के लिए किताब से मदद ली। लेकिन यह कहानी वाचन से फ़र्क़ था। कहानी सुनाते-सुनाते कुछ वाक्य मैंने अपनी तरफ़ से भी जोड़े, जैसा कि अकसर कहानी सुनाने में होता है। कुछ वाक्यों की संरचना भी बदली। पढ़कर सुनाने के दौरान बच्चों से सवाल पूछे ताकि उनका जुड़ाव

कहानी से बना रहे, और वो कहानी के बारे में सोच सकें। उदाहरण के तौर पर, 'धरपटक और मुँहपटक' कहानी पर जब धरपटक, मुँहपटक के यहाँ चुनौती देने जाता है तब यहाँ बच्चों से बात की कि आगे क्या होगा।

कहानी सुनाने के बाद बच्चों को कहानी के मौन वाचन के मौक़े दिए। अब जब भी कहानी पर कार्य करता हूँ, बच्चों से ये तीन काम ज़रूर करवाता हूँ। ऐसा इस वजह से, ताकि बच्चे कहानी के आधार पर सोच सकें, कहानी की विषयवस्तु से उनका जुड़ाव बन सके, और वे समझकर पढ़ सकें। इससे आगे की प्रक्रियाओं में वे बेहतर कार्य करते हैं।

मातृभाषा में कहानी सुनाना

मुझे लगा कि कहानी को बच्चों की अपनी भाषा, यानी विद्यार्थियों की मातृभाषा (बुन्देली), में सुनाया जाए तो हो सकता है बच्चों को इससे जुड़ाव बनाने और अपनी अभिव्यक्ति करने में मदद मिले।

इसके बाद, मैंने बच्चों को कहानी के आधार पर कुछ सवाल बनाने को कहा। बच्चों ने बहुत-से सवाल बनाए, हालाँकि वो सूचनात्मक सवाल थे। कहानियों पर सवाल बनाने के दौरान बच्चों को सोचने के मौक़े मिले। लेकिन इस प्रक्रिया में एक शिक्षक के रूप में धैर्य का होना बहुत ज़रूरी है क्योंकि जब बच्चों ने 'धरपटक और मुँहपटक' कहानी पर सवाल बनाए, मुझे लगा कि यह सूचनात्मक और बेहद आसान सवाल हैं। बच्चे सोचने वाले सवाल किस तरह बनाएँ, इसपर मैंने आगे कार्य किया।

'खूँटे का घोड़ा' कहानी पर सवाल बनाने के दौरान मैंने बच्चों से कहा कि हमें 'क्या' और 'कौन' वाले सवाल नहीं बनाकर 'क्यों' और 'कैसे' वाले सवाल बनाने हैं। जब मैंने बच्चों से ऐसा कहा तब ज़्यादातर बच्चे चुप थे। यहाँ मैंने बच्चों को एक सवाल बनाकर बताया। इसके बाद, बच्चों ने अलग-अलग समूहों में कुछ सवाल बनाए जिनके कुछ उदाहरण नीचे तालिका में दर्ज हैं। इस प्रक्रिया में भी बच्चों ने कुछ सूचनात्मक सवाल बनाए। इस तरह की प्रक्रिया के बाद बच्चे अब सोचने वाले सवाल बनाने की ओर बढ़े। शिक्षक के रूप में मेरे लिए यह एक सुखद एहसास है।

मुझे लगता है, बच्चों को लगातार इस तरह के मौक़े देने होंगे जिससे उनके सोचने-समझने के कौशलों का विकास हो सके।

आप देख सकते हैं कि जो सवाल बच्चों ने 'धरपटक और मुँहपटक' कहानी पर बनाए, और जो 'खूँटे का घोड़ा' कहानी पर बनाए थे, उनमें बुनियादी अन्तर है।

'धरपटक और मुँहपटक' एवं 'खूँटे का घोड़ा' कहानी पर बच्चों के द्वारा बनाए गए सवाल

धरपटक और मुँहपटक	खूँटे का घोड़ा
कहानी में कौन-कौन है?	क्या निर्जीव वस्तु घोड़े को जन्म दे सकती है?
धरपटक कहाँ जा रहा है? धरपटक ने मुँहपटक के आँगन में क्या-क्या फेंका?	क्या किसी अनजान व्यक्ति की बातों पर भरोसा करना ठीक है?
तालाब पर धरपटक को कौन मिला?	बाबा की जगह आप होते तो क्या करते?
धरपटक ने अपनी पोटली में क्या बाँधा था?	क्या पानी में आग लग सकती है?
धरपटक और मुँहपटक के बीच क्या हुआ? मुँहपटक की पत्नी ने क्या कहा? धरपटक की पत्नी भी साथ आती तो क्या होता?	बंजारा को और किस प्रकार से घोड़ा वापस दिलाया जा सकता है? इसके बारे में बताओ।

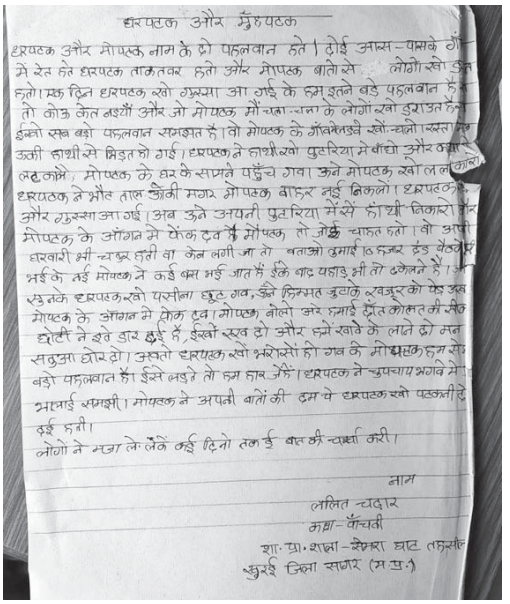

दूसरा चरण

दूसरे चरण में, मैंने बच्चों को इस कहानी को हिन्दी-बुन्देली मिश्रित करके लोककथा की तरह ही सुनाया। विद्यार्थियों ने इस बार इसे बड़े ही मज़े से सुना, और अन्त में तालियाँ बजाकर अपनी समझ और ख़ुशी को ज़ाहिर किया। जब मैंने कुछ बच्चों से इस कहानी का सार पूछा, वे अपनी मातृभाषा में इसे अच्छी तरह बता पा रहे थे।

तीसरा चरण

बच्चों की समझ और उत्साह को देखते हुए मैंने तीसरे चरण में विद्यार्थियों को इस लोककथा के सार को उनकी मातृभाषा में उनके ही वाक्यों में घर से लिखकर लाने के लिए प्रेरित किया। कुछ बच्चे इसे बोलने से ज़्यादा विस्तार के साथ लिखकर लाए। मैंने पाया कि कुछ विद्यार्थी सारांश बोलने और लिखने में पाठ्यपुस्तक की भाषा के शब्दों का भी इस्तेमाल कर रहे थे। यहाँ ध्यान देने वाली बात यह भी है कि जो बच्चे लिख नहीं सकते थे, उन्हें मैंने कहा कि तुम सोचकर आना हम इसपर बात करेंगे, और तुम्हारे बताए हुए सार को मैं लिख दूँगा।

चौथा चरण

चौथे चरण में, मैंने विद्यार्थियों के साथ इस कहानी के पात्रों के बुन्देली संवादों पर कुछ दिन मिलकर काम किया। संवादों को छोटे-छोटे वाक्यों में लिखा और लिखवाया। रोल प्ले के माध्यम से इनका मौखिक अभ्यास भी करवाया गया।

कक्षा तीन से पाँच के विद्यार्थियों के कई समूह बनाकर उन्हें साथ में रोल प्ले करने के मौक़े दिए। वे एक दूसरे को उनके संवाद याद दिलाने, और रोल प्ले करवाने में मदद करने लगे। बच्चों को रोल प्ले करने में मज़ा आने लगा। रोल प्ले की तैयारी, और उसके आयोजन के दौरान कुछ चुनौतियाँ भी थीं। जैसे– शुरुआत में बच्चों को यह लगता था कि नाटक कैसे होगा, उन्हें थोड़ी हिचकिचाहट होती थी कि संवाद कैसे बोला जाएगा, आदि।

इसी तरह, 'खूँटे का घोड़ा' कहानी पर कार्य करते हुए इन प्रक्रियाओं के साथ-साथ व्याकरण पर भी कार्य करवाए गए। कक्षा चार में बच्चों को व्याकरणीय चिह्नों को भी पढ़ना है। इस हिस्से में, मैंने बच्चों के साथ योजक चिह्नों पर कार्य किया। यहाँ मैंने परिभाषा से शुरुआत नहीं की। मैंने बच्चों के लिए बोर्ड पर एक चिह्न खींच दिया, और बताया कि अपने पाठ से देखकर बताओ ये चिह्न (-) कहाँ-कहाँ, और किन दो शब्दों के बीच लगा हुआ है।

बच्चों ने ऐसे शब्दों की सूची बनाई, और उसे दिखाया। बच्चों ने बताया कि एक ही जैसे शब्द, बार-बार, कभी-कभी, सुबह-सुबह, जब दो बार आए हैं तो उनके बीच में इस चिह्न का इस्तेमाल हुआ है। इसी तरह, बच्चों ने बताया कि ऐसे जोड़े वाले शब्द जिनमें एक शब्द का अर्थ है और दूसरे शब्द का कोई अर्थ नहीं है, यानी उल्टा-पुल्टा, पुराना-धुराना, चाय-माय, कचोरी-मचोरी, वहाँ भी इसका इस्तेमाल हुआ है। इसी तरह, बच्चों ने यह भी बताया कि जहाँ उल्टे अर्थ वाले दो शब्द हैं, जैसे– दिन-रात,

अच्छा-बुरा, कम-ज़्यादा, वहाँ इसका इस्तेमाल किया गया है। इस तरह बच्चों ने योजक चिह्न से जुड़े कुल तीन नियमों को बताया।

इस प्रक्रिया से यह समझ बन सकी कि व्याकरणीय प्रक्रियाओं में परिभाषाओं से शुरू न किया जाए। इसके बजाय, बच्चों को सन्दर्भ में किसी पाठ पर कार्य करते हुए पैटर्न में नियमों को ढूँढ़ने के मौक़े दिए जाएँ। यह परिभाषा याद करने से अलग होगा। इसमें जब बच्चे ख़ुद नियमों को खोजेंगे, उनकी समझ बेहतर और स्थाई होगी।

चरण पाँच

पाँचवें चरण में बच्चों ने अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के सदस्यों के साथ मिलकर स्कूल में आयोजित बाल मेले में इसका प्रदर्शन किया। इस मेले में ब्लॉक के अधिकारी और बच्चों के अभिभावक भी उपस्थित थे। सभी ने बच्चों के प्रदर्शन की सराहना की।

इस चरण में स्कूल के पुस्तकालय में उपलब्ध किताबों से भी कुछ कहानियाँ चुनकर बच्चों के साथ इसी प्रक्रिया का दोहराव किया गया। बच्चे भी इन पाँचों चरणों के क्रम को समझने लगे थे, और अगले चरणों की पूर्व तैयारी ख़ुद ही अपनी समझ से करने लगे थे।

परिवेश से सीखने के संसाधन

संसाधन के रूप में हमने परिवेश से बच्चों की मातृभाषा बुन्देली को लिया। हमने इसे बातचीत, अनुवाद, और लेखन का माध्यम बनाया। बच्चों ने स्कूल या इसके आसपास उपलब्ध वस्तुओं, जैसे– लकड़ी, टोपी, गमछा, रूमाल, आदि को रोल प्ले में इस्तेमाल करने के तरीक़े ख़ुद ही सुझाए, और अपनाए। मैं अब कहानी के बीच-बीच में विद्यार्थियों से पूछता हूँ कि अगर आप इस पात्र की जगह होते तो क्या करते। ऐसे सवालों से उनको सोचने-समझने, कल्पना करने, और अभिव्यक्ति करने के मौक़े मिलते हैं।

क्या बेहतर हुआ ?

पाँचों चरणों में की गईं कई गतिविधियों से विद्यार्थी पाठ्यपुस्तक की विषयवस्तु, जैसे– लोककथाओं और कहानियों, में रुचि लेने लगे, और इनके चित्रों पर आपस में बातचीत करने लगे। बच्चे इनके संवादों को अपनी मातृभाषा (बुन्देली) और स्कूल की भाषा (हिन्दी) में कई तरह से बोलने और लिखने लगे। वे इन दोनों भाषाओं के बीच जुड़ाव बनाना सीखने लगे। वे सहजता से कभी बुन्देली के शब्दों का इस्तेमाल करते, और कभी हिन्दी के शब्दों का।

किताबों को पढ़ने के दौरान पैदा होने वाली उनकी नीरसता धीरे-धीरे कम होने लगी थी। वे ख़ुद ही स्कूल के झोला पुस्तकालय से किताबें लेकर पढ़ने लगे, और उनपर आपस में चर्चाएँ करने लगे। कई बार वे पुस्तकालय से किताबें लेकर आते, और शाला में आने वाले अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के सदस्यों

को इन्हें पढ़कर सुनाने के लिए अनुरोध करते। बालसभा के दिन मैं और मेरे साथी शिक्षक बच्चों को कहानियाँ पढ़कर सुना रहे हैं। बच्चे अब हमसे कहानियों में आने वाले नए शब्दों को ख़ुद आगे होकर पूछने लगे हैं। हम विद्यार्थियों को गृहकार्य के रूप में शब्दों से जुड़े अभ्यास, जैसे– विलोम शब्द, पर्यायवाची शब्द, बुन्देली शब्द, योजक शब्द, आदि भी देने लगे हैं। पढ़ते समय वे कई विराम चिह्नों के बारे में पूछने लगे हैं कि इन्हें कैसे पढ़ते हैं। इसी तरह, पुस्तकालय की किताबों को पढ़ते हुए बच्चे उनमें से भी योजक चिह्न, प्रश्नवाचक चिह्न, आदि से जुड़े नियमों को भी खोजकर बताने लगे। ऐसे मौक़ों पर हमें इनपर चर्चा करने, और इन्हें इस्तेमाल करने के तरीक़े बताने के मौक़े मिल जाते हैं। जो बच्चे इन्हें समझने लगते हैं, वे दूसरे बच्चों को भी इनके बारे में ख़ुद बताने लगते हैं।

पश्चात आकलन

1. विद्यार्थी अपनी मातृभाषा में पहले से बेहतर समझ पा रहे हैं, और अभिव्यक्त भी कर पा रहे हैं।
2. वे बोलचाल और लिखने में बुन्देली और हिन्दी के शब्दों को सहजता से इस्तेमाल करने लगे हैं। वे एक ही वस्तु, सम्बन्ध, व्यक्ति या क्रिया के लिए दोनों भाषाओं में इस्तेमाल होने वाले शब्दों को बताने लगे हैं, और इनके सम्बन्ध को समझने लगे हैं।
3. कुछ विद्यार्थी हिन्दी की पाठ्यपुस्तक में दी गई लोककथा या कहानी का बुन्देली में अनुवाद करने में रुचि लेने लगे हैं। दो विद्यार्थियों ने 'धरपटक और मुँहपटक' लोककथा का अपने शब्दों में अनुवाद लिखा, और इसे रोल प्ले के रूप में मंचित किया। इसका मंचन दूसरे विद्यार्थियों से भी करवाया गया।
4. बच्चों को लोककथा या कहानी के सन्दर्भ के माध्यम से हिन्दी के शब्दों के अर्थों के अनुमान लगाने में मदद मिलने लगी है। वे इनके समतुल्य बुन्देली भाषा के शब्दों को बताने में भी अब झिझकते नहीं हैं।

चुनौतियाँ

1. शुरुआत में, हिन्दी के शब्दों के लिए सटीक बुन्देली शब्दों को खोजने में चुनौतियाँ महसूस हुईं।
2. लिखते समय कई बार वाक्य रचना करने में भी असहजता महसूस हुई क्योंकि वाक्य बहुत लम्बे-लम्बे बन रहे थे। इसी वजह से, बच्चों के लिए छोटे-छोटे संवाद बनाना एक बड़ी चुनौती थी।

प्रवीण श्रीवास्तव पिछले 26 वर्षों से प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक शिक्षक के रूप में कार्यरत हैं। इन्होंने हिन्दी साहित्य से स्नातक किया है। वर्तमान में शासकीय प्राथमिक शाला, सेमराघाट में प्रभारी प्रधानाध्यापक के तौर पर कार्यरत हैं। इन्होंने माध्यमिक शाला एवं उच्च माध्यमिक शाला में प्रभारी प्राचार्य के रूप में भी कार्य किया है। इनकी रुचि बच्चों की शिक्षा मातृभाषा में हो सके, ऐसे मुद्दों को पढ़ने-समझने में है।

सम्पर्क : praveenkhurai@gmail.com

उस रात चाँद नहीं निकला : एक कहानी कहन

मेलोडी खलखो

कक्षा 1 से 7 तक के बच्चों को कहानी सुनाने का अनुभव इस लेख में है। कहानी का चयन तो सुन्दर है ही, लेकिन उससे भी सुन्दर और संवेदनशील हैं बच्चों के जवाब। ये जवाब दर्शाते हैं कि बच्चे कितना कुछ सोच और समझ सकते हैं। उनकी इस सोच को जानकर, आने वाले समाज की एक सुखद कल्पना भी दिमाग़ में बनती है। -सं.

हाल ही में मैंने बच्चों को एक कहानी पढ़कर सुनाई। उसका नाम है *वो रात।* इस कहानी के लेखक हैं बीजल वच्छरजानी, और चित्रांकन किया है सृजना श्रीधर ने। कहानी है चैतू और उसके परिवार की। यह परिवार एक ऐसे परिवेश में रह रहा है जहाँ लड़ाइयाँ और हादसे चल रहे हैं। इस कहानी ने कुछ सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक मुद्दों को हमारी नज़र में लाने की कोशिश की है। लोगों को लोगों से डर, किसी अपने को खोने का डर, नज़दीकी इंसान की चिन्ता करने जैसी भावनाओं को समझाने की कोशिश इस लेख में की गई है।

बच्चों के लिए मैंने यह कहानी क्यों चुनी ?

जब हम कहानी सुनाने की बात करते हैं, या बच्चों को कहानी सुनाते हैं, हम उन ख़ास तत्त्वों और छवियों को, जो कहानी में होते हैं, अपने शब्दों और हाव-भाव के साथ रखते हैं। इसमें बच्चे न केवल मज़े लेते, और उत्सुकता दिखाते हैं बल्कि सुने हुए की कल्पना भी करते हैं।

बचपन से लेकर आज तक जब भी किसी ने मुझे कहानी सुनाई, उस कहानी में जंगल, शेर, सियार, आदि का होना निश्चित होता था, या फिर वह कहानी सुनाने वाले की अपनी कोई निजी कहानी होती थी। उस वक़्त मेरे लिए कहानी का मतलब यहीं तक सीमित था। शायद इसीलिए क्योंकि किताबों और दूसरी प्रकार की कहानियों से मैं कभी परिचित नहीं हुई थी। इन जंगल वाली कहानियों को हम बच्चे मज़े के साथ सुनते थे, और उनके बारे में कल्पना भी करते थे, लेकिन कहानी सुनकर अकसर भूल जाते थे। शायद इसलिए क्योंकि वे सभी

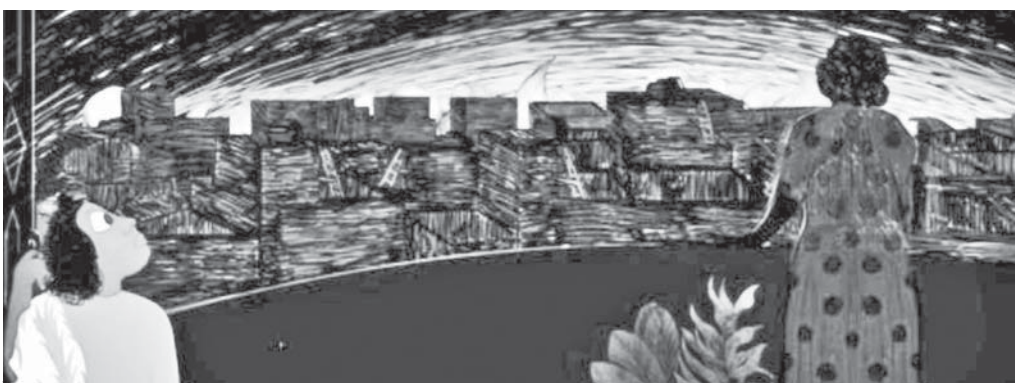

कहानियाँ कुछ-कुछ एक जैसी होती थीं। लेकिन ऐसी कहानियाँ जो लोगों के बारे में होती थीं वे याद रह जाती थीं। यह किताब, और इसकी कहानी भी कुछ ऐसी ही है जो मेरे दिल को छू गई। पढ़ने के पहले, पढ़ने के दौरान, और पढ़ने के बाद भी, कहानी मेरे सामने सवालों के ढेर रखती गई, और उनपर चिन्तन व विश्लेषण करने पर मजबूर करती गई। इसे पढ़ते समय मैंने जो भी अनुभव किया, सोचा अपने केन्द्र के बच्चों के साथ भी उन अनुभवों को साझा किया जाए। बस, मैं इस कहानी को बच्चों को सुनाने की तैयारी में जुट गई। कई दफ़ा पढ़ने के बाद, इस कहानी के सभी शब्द, सीन, सारे भाव मेरे दिलो-दिमाग़ में छप गए। और जब हम किसी भी चीज़ को दिल से बोलने लगते हैं, कहानी में उतार-चढ़ाव, लय, स्वर, शारीरिक हलचल / हाव-भाव कहानी के अनुरूप होते ही जाते हैं।

कहानी कहन

मैंने ग्राम सिलारी के मोहल्ला शिक्षा गतिविधि केन्द्र में यह कहानी सुनाई। उस दिन कक्षा पहली से सातवीं तक के तक़रीबन 15 बच्चे उपस्थित थे। जैसे ही बच्चों को पता चला कि आज मैं कहानी सुनाने वाली हूँ, वे बहुत ख़ुश हुए। हम सभी गोल घेरा बनाकर बैठे ताकि सब बच्चे मुझे देख सकें, और मैं उन सबको। कहानी सुनने के लिए सभी बच्चे शान्त बैठ गए। एक-दो बच्चे ऐसे थे जिन्हें मेरे सामने ही बैठना था। सबसे पहले मैंने एक सवाल से बातचीत शुरू की। मैंने पूछा, "कोई अन्दाज़ा लगा सकता है कि आज मैं किस तरह की कहानी सुनाने वाली हूँ?" बच्चों के जवाब थे, "दीदी, हाथी वाली; भूत वाली; परी वाली।" मैंने बच्चों को कहा, "नहीं, आज की कहानी कुछ अलग है, वो ध्यान से सुनने पर ही पता चलेगा।"

मैंने कहानी शुरू की, "आवाज़ों को सुनकर चैतू जाग उठी। वे ग़ुस्से में लग रहे थे।" इतना कहने के बाद मैंने देखा कि बच्चे अपने हाथ गाल पर रखे ध्यान से सुन रहे थे, सब एकदम चुप। मैं कहानी सुनाती गई, बच्चे सुनते जा रहे थे। एक पल ऐसा आया जब सभी की आँखों में यह सवाल नज़र आ रहा था कि अब आगे क्या होगा! बच्चों के चेहरों पर डर, घबराहट, और आगे क्या होने वाला है, इसे जानने की इच्छा थी। मैंने कहा, "ड्रैगन जैसी आग की फुफकार में चैतू के पापा को बाहर बुलाया जा रहा था। चैतू उनके हाथ को कसकर पकड़े उन्हें रोकना चाह रही थी, लेकिन उसके पापा ने धीरे से हाथ छुड़ा लिया और वे बाहर चले गए।" यह कहकर मैंने छोटा विराम लिया, और बच्चों को देखने लगी। मुझे पता चल रहा था, उनके दिमाग़ में बहुत सारे सवाल उठ रहे हैं। एक बच्चे ने पूछने की कोशिश भी की थी, लेकिन क्लाइमेक्स को भला कोई बताता थोड़े ही है। ज़रा से ठहराव

के बाद मैंने फिर कहानी कहना जारी रखा। जैसे-जैसे हम कहानी के अन्तिम छोर पर पहुँच रहे थे, उतावलापन और भी बढ़ता जा रहा था। कहानी के आख़िर में बच्चों को राहत मिली जब उन्होंने सुना कि धीरे से दरवाज़ा खुला, और चैतू के पापा कमरे में आए। कहानी यहाँ ख़त्म नहीं हुई थी। अन्त में यह था कि पूरा इलाक़ा शान्त पड़ गया था, आसपास भयानक सन्नाटा था, और धुएँ के पीछे से धुँधला सूरज धीरे-धीरे निकल रहा था।

कहानी ख़त्म तो हुई थी, लेकिन सभी के लिए सवाल खड़े कर गई थी। बच्चे पूछने लगे, और ख़ुद से जवाब भी देने लगे। जैसे– उस मोहल्ले में ऐसा क्या हुआ होगा जो लोग इतने ग़ुस्साए हुए थे, और घरों में आग लगा रहे थे; चैतू और उसके परिवार ने ऐसी क्या ग़लती की होगी जो चैतू के पापा को बाहर बुलाया जा रहा था; जिन लोगों के मकान जल गए वे अब कहाँ रहेंगे; उनके खाने-पीने, कपड़े, पढ़ाई, भेड़-बकरियों का क्या होगा; चैतू का घर तो नहीं जला, लेकिन क्या वहाँ रहना उनके लिए सुरक्षित रहेगा; आदि। मेरे पास इन सब सवालों के कोई जवाब नहीं थे। बच्चे आपस में बात करने लगे, "हो सकता है, हिन्दू-मुस्लिम लोगों का इलाक़ा होगा। वे धर्म को लेकर लड़ाई कर रहे होंगे। ऐसे घर-वर जलाना तो फ़िल्मों में ही देखा है, किताब की कहानी में आज सुनने का मौक़ा मिला है। यह कहानी सच्ची घटना लग रही है।" इन बातों के अलावा मैंने कुछ सवाल रखे, और बच्चों को चित्रों के माध्यम से उत्तर दर्शाने के लिए कहा। कुछ सवालों के जवाब बच्चों से लिखने को कहा। जिन बच्चों को लिखना नहीं आता था उन्होंने मुझे बोलकर बताया, और मैंने बताए अनुसार लिखा। बच्चों के जवाब और चित्र कुछ इस प्रकार थे :

प्रश्न 1. कहानी के अन्त में पूरा इलाक़ा शान्त पड़ गया था, धुँधला सूरज निकल रहा था, अब आगे क्या होगा? क्या माहौल रहेगा?

- पूरा इलाक़ा जल चुका था, लेकिन अब भी धुआँ हर जगह फैला हुआ था। चैतू और उसके परिवार को लगा कि यहाँ रहना उनके लिए ठीक नहीं है, इसीलिए वे लोग इस जगह को छोड़कर जाने के लिए निकल पड़े। साथ में उन्होंने अपने कुत्ते को भी रख लिया। लेकिन चैतू के पापा वह इलाक़ा छोड़कर नहीं जाना चाहते थे क्योंकि उनकी नौकरी वहीं थी, और वे नौकरी छोड़कर नहीं जा सकते थे। चैतू और उसकी माँ की आँखों में आँसू थे क्योंकि इस घर से उनकी यादें जुड़ी थीं, और चैतू अपने दोस्त कबीर से अब कभी मिल नहीं पाएगी।

चित्र 1 : दीपाली, शासकीय माध्यमिक शाला सिलारी, कक्षा 7

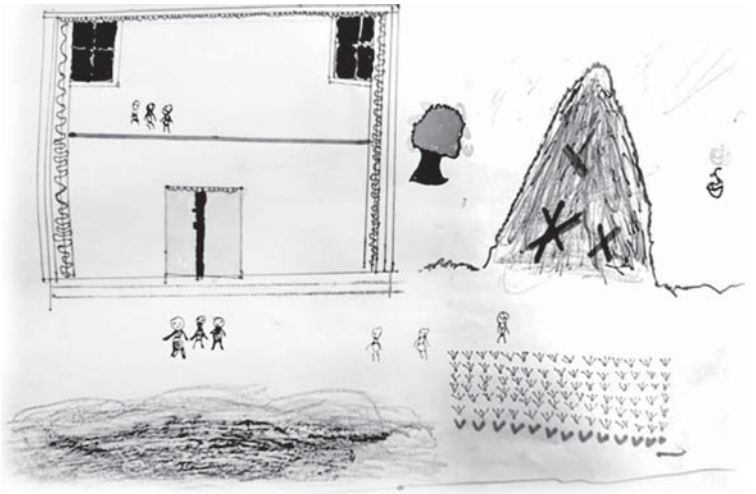

चित्र 2 : आदर्श, शासकीय प्राथमिक शाला सिलारी, कक्षा 4

उसको एक नए स्कूल में दाख़िला लेना होगा। उसके पापा साथ में नहीं जा रहे हैं। डर का माहौल है, आगे कुछ भी हो सकता है, ऐसे में यहाँ अकेले रहना जोख़िम भरा हो सकता है। हो सकता है कुछ महीनों बाद चैतू के पापा की दूसरी जगह नौकरी लग जाए, और वो भी इस घर को छोड़ दें। इस घर को सरपंच ले जाएँगे और इसे किराए पर दे देंगे या बेच देंगे और अपना मुनाफ़ा करेंगे। (दीपाली वर्मा, कक्षा 7)

- कक्षा 4 के आदर्श विश्वकर्मा का कहना था कि हल्का धुआँ है। अभी भी कपड़े और घर जल रहे हैं। धीरे-धीरे पेड़ों पर भी आग लग रही है। रातभर जलने के कारण धुएँ से खिड़कियाँ काली हो गई हैं। आग धीरे-धीरे अनाज की तरफ़ बढ़कर उसे भी जला देगी। बच्चे इधर-उधर भाग रहे हैं। चैतू और उसका परिवार सभी को भागते हुए, जाते हुए देख रहे हैं। वे भी घर छोड़कर जाने के लिए सोच रहे हैं।

प्रश्न 2. अगर आप चैतू की जगह होते तो क्या करते?

- मैं डर का सामना करता, दरवाज़ा बन्द कर देता। दरवाज़े के सामने पलंग, टेबल, कुर्सी जैसी भारी चीज़ें रख देता ताकि दरवाज़ा खुल न सके। पापा को कहता कि बाहर पागल लोग हैं, मत जाइए। बाहर जो लोग आए होते, उन्हें कहता कि तुम लोग चले जाओ, अगर अन्दर आ गए तो कभी लौटकर वापस नहीं जा पाओगे।
- हम पापा को कसकर पकड़ते, उन्हें जाने नहीं देते। मम्मी को भी बोलते कि पापा को रोक लें।
- मैं बहुत रोता, और फ़ोन करके अपने पड़ोसियों को मदद के लिए बुलाता।

प्रश्न 3. अगर कबीर तुम्हारा दोस्त होता, और उसके घर के आसपास आग जल रही होती तब तुम कबीर के लिए क्या करते?

- कबीर को कॉल करके उसका हालचाल पूछते। पूछते कि कैसे हो; खाना खाया या नहीं? तुम्हारे घर के सामान जल गए होंगे, तुम यहाँ मेरे घर आ जाओ। यहीं कपड़े ख़रीद देंगे, और तुम मेरी किताब को पढ़ सकते हो। जब तुम्हारा नया घर बनेगा तब चले जाना, अभी यहीं रह सकते हो।
- अपने घर में बुलाते, साथ ही उसके मम्मी-पापा और दादा-दादी को भी बुलाते।

- कबीर जब मेरे घर आता, उसकी देखभाल करते। पूछते कि कहीं लगी तो नहीं; चोट तो नहीं आई? उसे मलहम लगाते, खाना पकाकर खिलाते, और हमारे घर में सोने के लिए कहते।

प्रश्न 4. तुम्हें पता चला कि चैतू के मोहल्ले में आग जल रही है, उससे कॉल करके बात करो। तुम क्या बातें करोगे?

- सबसे पहले चैतू को हिम्मत देंगे। उसे कहेंगे कि डरो मत, सब ठीक होगा। हम तुम्हारे साथ हैं।
- तुम ठीक हो; खाना खाया या नहीं? अगर नहीं खाओगी तो बीमार पड़ जाओगी। मम्मी-पापा सब ठीक तो हैं? तुम उनको भी हिम्मत देना।
- तुम्हारा दोस्त कबीर कैसा है; सब ठीक तो है न उसके यहाँ?
- तुम कल स्कूल में आओगी क्या?
- कल पार्क में हमारे साथ खेलने आओगी क्या? अगर नहीं आ पाओगी तो हम लोग तुम्हारे घर आ जाएँगे।

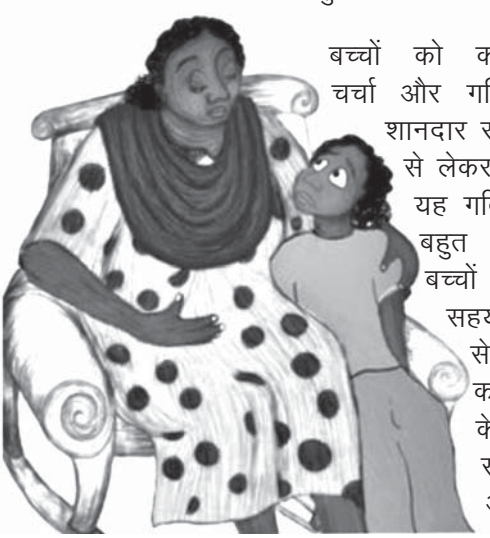

बच्चों को कहानी सुनाना, चर्चा और गतिविधियाँ बहुत शानदार रहीं। मेरी तैयारी से लेकर बच्चों के साथ यह गतिविधि करने में बहुत आनन्द आया। बच्चों ने इसमें बहुत सहयोग दिया। ध्यान से सुनना, चर्चा करना, सवालों के जवाब देना, सब बहुत अच्छा और रोचक था। गतिविधि करने पर मुझे यह अनुभव मिला कि बच्चों को परस्पर संवादात्मक सत्र काफ़ी पसन्द आते हैं। यहाँ वे खुलकर अपनी भावनाओं को बता सकते हैं, कल्पना कर सकते हैं, और अपने जीवन में भी लागू करने की कोशिश कर सकते हैं। अपना डर, चिन्ता, दूसरों के प्रति संवेदनशील होना, समाज में क्या चल रहा है इसपर सवाल करना, अनुमान लगाना, समस्याओं का हल ढूँढ़ना, ये सारी चीज़ें कहानी कहने की गतिविधि के दौरान देखने को मिलीं।

संक्षेप में

एक शिक्षाकर्मी (शिक्षक) होने के नाते हमारा यह फ़र्ज़ बनता है कि हम बच्चों को अलग-अलग तरह की कहानियों की किताबों से अवगत कराएँ। उन किताबों से जो अलग-अलग विधाओं के बारे में बात करती हैं। मसलन, ऐसी किताबें जो जंगल की सैर करा दें; वे जो मौज-मस्ती, चुटकुले, मनोरंजन से भरी हों; जो बच्चों को सम्बोधित करते हुए उनके रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से जुड़े कामों को दर्शाती हों; बचपन की बहुलता को समझाने में मदद करती हों; सामाजिक-धार्मिक मुद्दों पर बात करती हों; वे किताबें जो परियों की कहानियाँ, लोककथाएँ, इतिहास बताती हों; आदि। जब हम बच्चों को ऐसी किताबें उपलब्ध कराएँगे, हम बच्चों के नज़रिए, उनके अनुभव, उनकी पसन्द-नापसन्द

अच्छे से जान सकेंगे। हम बच्चों की भावनाओं को समझ सकेंगे जिससे हमें उनसे बातचीत करने, घुलने-मिलने और पढ़ाने-सिखाने में काफ़ी मदद मिलेगी। पिपरिया विकासखण्ड के एकलव्य पुस्तकालय में पढ़ने वाले बच्चों में यह देखने को मिला है कि उन्हें एकलव्य प्रकाशन की *खिचड़ी, ज़िद्दी शन्नो, प्यारी मैडम, शलजम,* मुस्कान प्रकाशन की *बस्ती में चोर, पायल खो गई,* आदि के साथ पौराणिक लोककथाओं की और ओरिगामी किताबें बेहद पसन्द हैं। प्रथम बुक्स की यह छोटी पतली-सी किताब *वो रात* पठन स्तर 3 के लिए है, लेकिन यह सभी लोगों के लिए फ़ायदेमन्द और विचारणीय भी हो सकती है।

सन्दर्भ

मोहल्ला गतिविधि केन्द्र : यह एक शैक्षिक केन्द्र है जो साल 2020 में नर्मदा ज़िले के पिपरिया विकासखण्ड के कुछ गाँवों में गाँव के संचालक द्वारा संचालित किया जाता था। इसका संचालन अभी भी नियमित रूप से हो रहा है। इस केन्द्र में सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले कक्षा पहली से पाँचवीं तक के बच्चों को प्रतिदिन स्कूल के पहले या स्कूल के बाद दो घण्टे भाषा, गणित, और दूसरी किताबों का अध्ययन करवाया जाता है।

मेलोडी खलखो एकलव्य फ़ाउण्डेशन के साथ प्रोजेक्ट एसोसिएट के रूप में काम करती हैं। वे मध्य प्रदेश के पिपरिया ब्लॉक में होलिस्टिक इनिशिएटिव टुवर्ड्स एजुकेशनल चेंज प्रोजेक्ट (HITEC) में काम से जुड़ी हैं। उन्होंने 2020 में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु से एमए किया है। वह विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ बाल साहित्य पढ़ना पसन्द करती है। वे पेंटिंग और कविताओं / लेखों को लिखने का भी आनन्द लेती हैं, और शिक्षा में गहरी रुचि रखती हैं।

सम्पर्क : melody.xalxo18_mae@apu.edu.in

स्कूलों में बाल संसद चुनाव

शिशु रंजन

हमारा देश एक लोकतांत्रिक देश है, यह हम सभी ने सुना है। लेकिन लोकतंत्र के असली मायने क्या होते हैं, इसके बारे में शायद कुछ ही लोग बता पाएँ। इसकी एक वजह यह भी है कि पाठ्यपुस्तकों में लोकतंत्र और उससे जुड़ी अवधारणाओं पर विषयवस्तु के होते हुए भी विद्यालयों में ऐसे ठोस प्रयास व गतिविधियाँ नहीं होतीं जो बच्चों की लोकतंत्र को समझने में मदद कर सकें। लेखक ने एक विद्यालय के साथ इस विषय पर काम किया। इसमें उन्होंने शिक्षकों के साथ मिलकर बाल संसद की स्थापना, और उस संसद के लिए उम्मीदवारों के चयन हेतु चुनाव, चुनाव प्रचार, आदि पहलुओं पर काम किया। इस पूरी प्रक्रिया का विवरण, और इस प्रक्रिया से बनी शिक्षकों व विद्यार्थियों की समझ के बारे में इस लेख में बातचीत है। -सं.

"बच्चे 18 साल की उम्र में एक सुबह उठकर यह नहीं जान सकते कि लोकतंत्र में कैसे भाग लेना है, कैसे उसका संरक्षण करना है, और उसे कैसे बढ़ाना है, ख़ासकर तब जब उनके पास इसका कोई पूर्व व्यक्तिगत या यहाँ तक कि सेकेंड-हैंड अनुभव न हो, न ही सीखने के लिए कोई रोल मॉडल हो।" (*एनसीएफ़-2005,* पृष्ठ 83)

एनसीएफ़-2005 में लिखीं इन्हीं पंक्तियों के मर्म को समझते हुए मैंने उत्तराखंड के ऊधम सिंह नगर ज़िले के एक उच्च प्राथमिक विद्यालय में कुछ करके देखने का प्रयास किया। इस प्रक्रिया को 'बाल संसद' के ज़रिए समझना हमारी योजना का हिस्सा बना। यह लेख *एनसीएफ़* में दिए गए इसी उद्देश्य के बारे में है कि किस तरह 'बाल संसद' की प्रक्रिया के ज़रिए बच्चों में लोकतांत्रिक मूल्यों को विकसित किया जा सकता है।

समझ की इस अनुभव यात्रा में प्रमोद मैथिल और चंदन यादव के 'बच्चों की भागीदारी' (मैथिल, यादव 2014) जैसे लेखों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन लेखों में शिक्षार्थियों की सक्रिय भागीदारी द्वारा बाल संसद चुनाव के संचालन और कामकाज पर चर्चा की गई है।

नज़रिया

एक शिक्षक होने के नाते, मुझे संवैधानिक मूल्यों या शिक्षा के उद्देश्यों के किसी अन्य पहलू को विकसित करने के स्पष्ट उद्देश्य के साथ एक सह-पाठ्यचर्या गतिविधि का आयोजन करना था, साथ-ही-साथ एक शिक्षक-प्रशिक्षक (प्रशिक्षु) होने के नाते नियमित शिक्षकों को ऐसे किसी आयोजन में शामिल करना था। इसलिए मैंने आम चुनाव की तर्ज़ पर ही स्कूल में पूरे तरीक़े से बाल संसद के चुनाव कराने का फ़ैसला किया। मैंने शिक्षकों के साथ योजना साझा की। शुरुआत में उन्हें मेरे विचार पर सन्देह था क्योंकि वे ऐसे कुछ स्कूलों की स्थितियों से अवगत थे जहाँ समुदाय और शिक्षकों के बीच विद्यार्थियों के चुनाव से सम्बन्धित हितों का टकराव था। इसके अलावा, उन्होंने सोचा कि

स्कूल में 20 दिनों के अवलोकन और शिक्षण के थोड़े से समय में क्या शिक्षकों को ऐसी गतिविधि के लिए मनाना सम्भव होगा।

मैंने शिक्षकों को प्रस्ताव दिया कि मैं चाहता हूँ कि विद्यार्थी गतिविधि के उद्देश्य को समझकर चुनाव की पूरी प्रक्रिया से लैस हों। यह गतिविधि इस प्रकार थी :

उद्देश्य

विद्यार्थियों को सक्षम बनाना–

- लोकतंत्र की भूमिका को समझने के लिए;
- भारतीय लोकतंत्र में मतदान की प्रक्रिया को समझने के लिए;
- लोकतंत्र की प्रक्रिया में भाग लेने के लिए;
- जागरूक और ज़िम्मेदार नागरिकों का विकास करने के लिए;
- भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का सही उपयोग विकसित करने के लिए; आदि।

विज्ञान की एक शिक्षिका मेरे विचार से सहमत थीं, और वह इस गतिविधि को शनिवार को संचालित करने के लिए उत्साहित थीं। दूसरे शिक्षक पहले प्रतिक्रिया नहीं दे रहे थे, लेकिन जैसे-जैसे बातचीत आगे बढ़ी स्कूल के सभी शिक्षक इस विचार के साथ खड़े होते गए। मैंने निम्नलिखित विचार शिक्षकों को प्रस्तावित किए :

योजना

- दिन 1-2 : चुनाव की घोषणा और आचार संहिता की पूरी प्रक्रिया। चुनाव आयोग का गठन;
- दिन 3 : इच्छुक उम्मीदवारों का नामांकन;
- दिन 4 : नाम वापसी, यदि कुछ उम्मीदवार अपना नामांकन वापस लेना चाहते हैं;
- दिन 5-6 : अभियान और जागरूकता;
- दिन 7 : उम्मीदवारों के बीच बहस;
- दिन 8 : मतदान;
- दिन 10 : वोटों की गिनती और परिणाम की घोषणा; और
- दिन 11 : शिक्षक / चुनाव आयोग द्वारा एक सांसद का नामांकन, प्रधानमंत्री का चुनाव, शपथ ग्रहण समारोह, आम सभा की बैठक, और ज़िम्मेदारियों के लिए योजना।

कार्यान्वयन

बाल संसद चुनाव की घोषणा : दिनांक 6 नवम्बर 2023 को विद्यालय सभा में एक शिक्षिका ने चुनाव की घोषणा की। इसे मैंने

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

तारीख़ों के साथ पूरा समझाया, और नोटिस बोर्ड पर लिखा। इस घोषणा से विद्यार्थियों के बीच चुनाव को लेकर चर्चा शुरू हो गई।

इस घोषणा के दौरान कई मसले उठाए गए। मसलन, एक बात यह रखी गई कि जब कोई ग्राम प्रधान उम्मीदवार आपके घर वोट माँगने आता है तब क्या आपके माता-पिता कभी उम्मीदवार से पूछते हैं कि पंचायत चुनाव जीतने के बाद वे अपने बच्चों के स्कूल के लिए क्या करेंगे।

यही वह क्षण था जब प्रधानाध्यापिका ने खड़े होकर पंचायत प्रमुख के साथ हुए उनके अनुभव को साझा किया। उन्होंने बताया कि स्कूल में पानी की टंकी लगाने के लिए सरपंच ने स्कूल की कोई मदद नहीं की। इसके बाद प्रधानाध्यापिका भी चुनाव में रुचि लेने लगीं।

विचार यह था कि प्रत्येक कक्षा (6, 7, 8) से दो संसद सदस्यों (सांसद – एक लड़की और एक लड़का) का चुनाव किया जाए। इसलिए प्रत्येक मतदाता (विद्यार्थी) को संसदीय / विधानसभा चुनाव की तरह अपने सम्बन्धित वर्ग से एक लड़की सांसद और एक लड़के सांसद के लिए वैसे ही मतदान करना था जैसे एक मतदाता को अपने क्षेत्र के सांसद / विधायक के लिए करना होता है। चूँकि तीन कक्षाएँ थीं इसलिए एक सांसद को शिक्षकों द्वारा नामांकित किया जाना था ताकि यह एक विषम संख्या हो। प्रत्येक कक्षा से 2 सांसद चुनने पर संख्या 6 हो जाएगी जो शिक्षकों द्वारा नामांकित 1 सांसद को मिलाकर एक विषम संख्या (अर्थात 7) हो जाएगी। इसके बाद ये सांसद अपना नेता चुनेंगे जो स्कूल का प्रधानमंत्री कहलाएगा।

शिक्षकों के साथ चर्चा

दोपहर के भोजन के समय, मैंने शिक्षकों के साथ सामाजिक विज्ञान के अध्यायों और चुनाव प्रक्रिया के बीच सम्बन्ध पर बातचीत की। शिक्षकों ने पूछा कि इस प्रकार की गतिविधि सामाजिक विज्ञान विषय के उद्देश्यों को कैसे पूरा करेगी क्योंकि कक्षा 6वीं की एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तक *सामाजिक और राजनीतिक जीवन-1* में 'सरकार' और 'स्थानीय सरकार और प्रशासन' पर दो इकाइयाँ शामिल हैं। ये इकाइयाँ 4 अध्यायों में आती हैं। जबकि कक्षा 7वीं की पाठ्यपुस्तक *सामाजिक और राजनीतिक जीवन-*

अध्याय 3

संसद तथा कानूनों का निर्माण

हम भारतीयों को इस बात का गर्व है कि हम एक लोकतांत्रिक व्यवस्था का हिस्सा हैं। इस अध्याय में हम निर्णय प्रक्रिया में सहभागिता और लोकतांत्रिक सरकार के लिए नागरिकों की सहमति के महत्त्व जैसे विचारों के आपसी संबंधों को समझने की कोशिश करेंगे।

यही वे तत्त्व हैं जो सम्मिलित रूप से भारत में एक लोकतांत्रिक व्यवस्था का निर्माण करते हैं। इस बात को सबसे अच्छी अभिव्यक्ति संसद के रूप में मिलती है। इस अध्याय में हम यह देखेंगे कि किस तरह हमारी संसद देश के नागरिकों को निर्णय प्रक्रिया में हिस्सा लेने और सरकार पर अंकुश रखने में मदद देती है। इसी आधार पर संसद भारतीय लोकतंत्र का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रतीक और संविधान का केंद्रीय तत्व है।

© NCERT not to be republished

2 में 'राज्य सरकार' पर एक इकाई शामिल है, जो दो अध्यायों 'स्वास्थ्य में सरकार की भूमिका', और 'राज्य सरकार कैसे काम करती है' से सम्बन्धित है। कक्षा 8वीं की पाठ्यपुस्तक *सामाजिक और राजनीतिक जीवन-3* में बहु-आयामी अध्याय शामिल हैं। इन्हें पढ़ाकर बच्चों को प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान किया जा सकता है।

अध्याय 3

सरकार क्या है?

सरकार से कामगारों के अधिकारों की रक्षा की माँग

बाढ़पीड़ितों के लिए सरकार की ओर से राहत सामग्री

प्याज़ की दर में उछाल : सरकार ने प्याज़ के दाम तय किए

सर्वोच्च न्यायालय के लिए पाँच और न्यायाधीश - सरकार

सरकार ने 15000 से अधिक गाँवों को सूखाग्रस्त घोषित किया

जागरूकता और चुनाव अभियान

अगले दिन विद्यार्थियों से चुनाव आयोग के गठन और नामांकन प्रक्रिया के बारे में बात हुई। चुनाव लड़ने के इच्छुक बच्चों को एक नामांकन फ़ॉर्म प्रदान किया गया। प्रधानाध्यापिका मुख्य आयुक्त की भूमिका में थीं। उनका दायित्व उम्मीदवारों को नामांकन फ़ॉर्म का वितरण करना और उन्हें वापस लेना था। विज्ञान शिक्षिका कक्षाओं के दौरान विद्यार्थियों के बीच चर्चा कर रही थीं। उसी दिन, कक्षा 6वीं के 5 विद्यार्थियों (2 लड़के और 3 लड़कियाँ), कक्षा 7वीं से 7 विद्यार्थियों (4 लड़कियाँ और 3 लड़के), और कक्षा 8 से 4 विद्यार्थियों (2 लड़कियाँ और 2 लड़के) ने अपनी कक्षा के सांसद पद के लिए अपना नामांकन दाख़िल किया।

दो कामकाजी / स्कूल दिनों, जिनमें दिवाली की छुट्टियों के कारण पूरा सप्ताह शामिल था, में हमारी योजना के अनुसार हमने जागरूकता कार्यक्रम अभियान, मतदान प्रक्रिया, समस्याओं की पहचान और समाधान प्रस्ताव (जिसमें उम्मीदवारों ने विभिन्न मुद्दों और समस्याओं के समाधान को लेकर वे क्या सोचते हैं, इसपर बात रखी। यह कुछ-कुछ चुनावी मैनिफेस्टो की तरह था), इत्यादि का आयोजन किया। इसके साथ ही, शिक्षकों ने भाषण तैयार करने में मदद की। यह काफ़ी प्रेरणादायक था जब विद्यार्थियों ने 'स्कूल परिसर को साफ़ रखेंगे', 'कक्षाओं को साफ़ रखेंगे', 'स्कूल परिसर की हरियाली बनाए रखेंगे', 'शुक्रवार (जुम्मा) को उपस्थित विद्यार्थियों की संख्या में वृद्धि करेंगे', और 'पढ़ाई में कठिनाई का सामना करने वाले विद्यार्थियों की मदद करेंगे', आदि जैसे अद्भुत विचार पेश किए। जब वे अपने एजेंडे की घोषणा कर रहे थे, शिक्षक विद्यार्थियों के भाषण से आश्चर्यचकित थे।

चुनाव चिह्न चुनने में विद्यार्थियों का बड़ा योगदान था क्योंकि चिह्न ढूँढ़ते समय बच्चों को अपने स्कूल के सामानों से सचेतता से (consciously) रूबरू होने का मौक़ा मिला। चुनाव

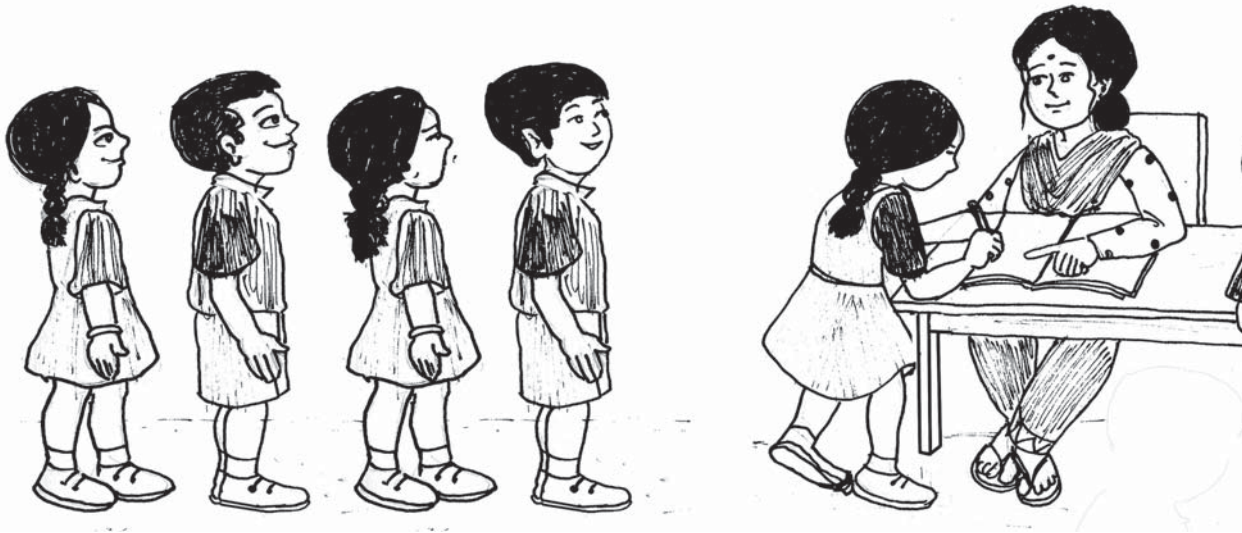

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

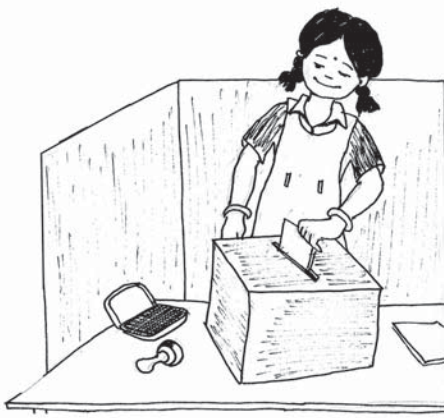

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

चिह्न इस प्रकार थे : पुस्तक, कलम, ग्लास, नोटबुक, एलसीडी टीवी, कंप्यूटर, टेबल, बेंच-डेस्क, दीवार घड़ी, ग्लोब, स्मार्टफ़ोन, बोतल, बल्ब, डस्टर, सीलिंग फैन, ब्लैकबोर्ड, स्कूल भवन, और खेल उपकरण।

मतदान पूर्व तैयारी

शनिवार 18 नवम्बर 2023 चुनाव का दिन था। चुनाव की तैयारी हम सभी ने मिलकर की। टेबल, पोस्टर, स्कूल के बैनर, मतपेटी के लिए छोटा बक्सा और रबर स्टाम्प लगी छोटी लकड़ी की छड़ी, आदि का उपयोग किया। इसके साथ ही एक कोना भी बनाया गया जहाँ मतदाता गोपनीयता के साथ मतदान कर सकें।

शिक्षकों को पीठासीन अधिकारी बनाया गया था। एक शिक्षिका नाख़ूनों पर मतदान स्याही लगा रही थीं, दूसरी शिक्षिका नाम सूचीबद्ध कर विद्यार्थियों के हस्ताक्षर ले रही थीं, तीसरी शिक्षिका प्रक्रिया के मिनटों को नोट कर रही थीं, और मुख्य शिक्षिका विद्यार्थियों को मतपत्र प्रदान कर रही थीं। इस प्रक्रिया में, मैं अनुशासन बनाए रखने, और मतदान प्रक्रिया को रिकॉर्ड करने के काम में शामिल था। मेरे पूरे स्कूल अवलोकन, शिक्षण और डेटा संग्रह के दौरान, मतदान के दिन विद्यार्थियों की सबसे अधिक उपस्थिति देखी गई। यह बाक़ी दिनों से काफ़ी ज़्यादा थी। कई उम्मीदवार अपने वोट शेयर को लेकर संशय में थे। वहीं कुछ विद्यार्थी बिलकुल स्पष्ट थे कि वे जीतने वाले नहीं हैं। मतदान प्रक्रिया पूरे 2 घण्टे चली। अन्ततः मतदाताओं (विद्यार्थियों) व प्रत्याशियों के समक्ष मतपेटी को सील कर कार्यालय में रखा गया।

मतगणना

मतगणना को लेकर सारे विद्यार्थियों में ग़ज़ब का उत्साह था। मतगणना का काम एक सप्ताह बाद किया गया। दोपहर के भोजन के बाद विद्यार्थियों को बुलाया गया और मतपेटी लाई गई। सभी उम्मीदवारों की उपस्थिति में मतपेटी खोली गई। उम्मीदवारों ने एक काग़ज़ पर हस्ताक्षर किए। इसमें लिखा था कि मतपेटी उनके सामने पारदर्शिता के साथ खोली गई, और वे मतदान गिनती शुरू करने के लिए सहमत हैं। एक शिक्षक ने कक्षा 6वीं का कार्यभार ग्रहण किया, जबकि दूसरे दो शिक्षकों ने कक्षा 7वीं और 8वीं का कार्यभार ग्रहण किया। प्रधानाध्यापिका ने प्रत्येक अभ्यर्थी के मिले मतों की संख्या को नोट करना शुरू कर दिया। शिक्षक कुछ परिणामों से पूरी तरह आश्चर्यचकित रह गए। उन्होंने देखा कि कुछ ऐसे विद्यार्थियों को बहुत कम वोट मिले जिनके बारे में उन्हें उम्मीद थी कि वे अवश्य ही जीतेंगे।

मैंने कुछ विद्यार्थियों और उम्मीदवारों के उनकी भविष्यवाणियों के बारे में कुछ वीडियो कवर किए। वहाँ के कथन काफ़ी दिलचस्प थे। मसलन, "मतगणना के बाद हमें पता चलेगा";

"हमारी तो साँसें थमी पड़ी हैं, हम कुछ नहीं कह सकते"; आदि। जबकि एक उम्मीदवार ने ख़ुद कहा था, "हाथीम (बदला हुआ नाम) जीतेगा।" तो मैंने पूछा, "आपको ऐसा क्यों लगता है कि आप नहीं जीतेंगे।" उसने जवाब दिया, "हमें वोट ही नहीं मिले।"

परिणाम पूरी प्रक्रिया के साथ घोषित किए गए

नतीजे घोषित हुए तो विद्यार्थियों में चुनाव जीतने और हारने का रोमांच देखने को मिला। परिणाम शिक्षकों की उम्मीदों से परे थे। जो विद्यार्थी लोकप्रिय थे, पढ़ाई में अच्छे थे, और जिनको लेकर शिक्षकों को जीत का भरोसा था वे चुनाव हार गए थे। साथ ही, शिक्षकों ने कक्षा में धार्मिक समीकरण के सन्दर्भ में जो भविष्यवाणी की थी वह भी फेल हो गई।

शिक्षकों के बीच चर्चा

इन सभी चर्चाओं ने शिक्षकों को स्कूल और कक्षा के अन्दर के सामाजिक प्रभाव के बारे में गम्भीरता से सोचने के लिए प्रेरित किया। इसके अलावा, चुनाव में सामाजिक प्रभाव की शिक्षकों की भविष्यवाणी को स्पष्ट रूप से चुनौती दी गई थी। आठवीं कक्षा के विद्यार्थियों ने अपनी कक्षा के बहुसंख्यक विद्यार्थियों (मुस्लिम समुदाय) की बजाय हिन्दू समुदाय के एक लड़के और मुस्लिम समुदाय की एक लड़की को जिताया था, जबकि चुनाव हारने वाले दोनों विद्यार्थी मुस्लिम समुदाय से थे। शिक्षकों की धारणा थी कि विद्यार्थी अपने समुदाय के उम्मीदवारों का समर्थन करेंगे जबकि हुआ इसके उलट। जो उम्मीदवार चुनाव जीते वे मृदुभाषी, सहयोगी स्वभाव के, पहल करने वाले थे जबकि हारने वाले उम्मीदवार सक्रिय और पढ़ने में अच्छे, लेकिन थोड़े कम मृदुभाषी थे। हालाँकि, शिक्षकों के चहेते होने के कारण उनका दबदबा था, लेकिन बच्चों के बीच लोकप्रियता कम थी। इस कारण उन्हें चुनाव में हार का सामना करना पड़ा।

पूरी प्रक्रिया के अन्त में विद्यार्थियों को पंचायत, विधान सभा और संसदीय चुनावों की पूरी प्रक्रिया समझाई गई। इससे विद्यार्थियों में चुनाव प्रक्रिया का एक ठोस विचार तैयार हुआ। इस प्रक्रिया को समझाने में सारे शिक्षकों ने सहयोग दिया क्योंकि उन्हें बच्चों की पृष्ठभूमि की जानकारी थी।

चिन्तन

इस प्रक्रिया में बच्चे और शिक्षक सब एक दूसरे से सीख रहे थे। इस चुनाव ने शिक्षकों की भूमिका, गतिविधि और सीखने के प्रति बच्चों के खुलेपन के बारे में मेरी कई धारणाओं को तोड़ दिया। *शिक्षक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2009 (एनसीएफ़टीई)* के दिशानिर्देशों के अनुसार, बच्चों को नियमित सहायता प्रदान की जानी चाहिए। यह सुझाव देती है कि "साप्ताहिक और मासिक आधार पर किसी के शिक्षण की योजना बनाना और साथ ही सहकर्मियों, स्कूल के शैक्षणिक प्रमुख और क्लस्टर या ब्लॉक स्तर पर संसाधन व्यक्तियों के साथ चर्चा करना, शिक्षण पेशे का एक अनिवार्य पहलू है।"

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

चुनाव के बाद शिक्षकों और विद्यार्थियों में महत्त्वपूर्ण बदलाव दिखा। शिक्षक विद्यार्थियों से सलाह-मशविरा करने लगे। जागरूकता प्रक्रिया में कई परिप्रेक्ष्यों पर चर्चा हुई थी जिसमें बच्चों ने महसूस किया कि उन्हें सुना जा रहा है। कई मायनों में बच्चे समाज में होने वाले चुनाव प्रचार की मदद ले रहे थे जिससे शिक्षकों को उन मुद्दों पर बात करने का मौक़ा मिला, जिनपर शायद ही पहले कभी मौक़ा मिला हो। इसके अलावा, ज़िम्मेदारी की बात के कारण विद्यार्थी भी ख़ुद से कई पहल करने लगे थे। जैसे– पौधों में पानी देना, कक्षा को साफ़ करने में अपने दोस्तों को शामिल करना, डिजिटल क्लासरूम की देखरेख करना, आदि।

पूरी प्रक्रिया में बहुत अधिक तैयारी, अतिरिक्त संसाधन और अतिरिक्त समय शामिल नहीं था। इसमें चुनाव चिह्न के साथ मतपत्र बनाने, प्रिंटआउट के कुछ काग़ज़ात लेने आदि जैसे कुछ संसाधनों को तैयार करने में ही सिर्फ़ कुछ अतिरिक्त घण्टे लगे। यह पूरी प्रक्रिया 100 रुपए से भी कम की लागत में पूरी हुई। इसके अलावा, इसके लिए अतिरिक्त समय की ज़रूरत नहीं पड़ी, क्योंकि सभी घोषणाएँ विधान सभा और आनंदम अवधि (उत्तराखंड में ध्यान और ख़ुशी से सम्बन्धित पाठ्यक्रम के लिए समर्पित एक अवधि) के दौरान की गई थीं। साथ ही, एक शनिवार जो 'नो बैग डे' के लिए समर्पित है, उसका उपयोग चुनाव और मतगणना के संचालन के लिए किया गया।

इस पूरी प्रक्रिया में किसी तरह की कोई दिक़्क़त नहीं हुई। अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि कोई शिक्षक लोकतंत्र का सही मायना जितना इस गतिविधि के ज़रिए बच्चों को सिखा सकता है उतना शायद ही कक्षा में लैक्चर से सम्भव हो पाए।

इस दौरान मुझे भी चुनौती मिली कि कैसे बच्चों के साथ लोकतांत्रिक होना है। सामान्यतः गाँव के स्कूलों के बच्चों को यही मानकर पढ़ाया जाता है कि इन बच्चों को कुछ नहीं आता। लेकिन जब हमने बच्चों के नज़रियों को सुना, जाना और समझा तो हमारी यह धारणा ग़लत साबित हुई। इस प्रक्रिया ने सभी शिक्षकों को, और कुछ हद तक मुझे भी बच्चों को बराबर मानना, और उनकी बातों को बराबर तवज्जो देना सिखाया।

सन्दर्भ

1. Anandam Curriculum for class 6th to 8th : Final_6_to_8.pdf. (n.d.). Retrieved January 11, 2024, from https://siemat.uk.gov.in/files/Final_6_to_8.pdf
2. George, A. (2008). *Children's Perception of Sarkar: A Critique of Civics Textbooks.* Esocialsciences. Com, Working Papers.
3. NCERT. (n.d.–a). Retrieved January 11, 2024, from https://ncert.nic.in/textbook.php?fess3=ps–8
4. NCERT. (n.d.–b). Retrieved January 11, 2024, from https://ncert.nic.in/textbook.php?gess3=ps–8
5. NCERT. (n.d.–c). Retrieved January 11, 2024, from https://ncert.nic.in/textbook.php?hess3=ps–8
6. NCFTE_2009.pdf. (n.d.). Retrieved December 10, 2023, from https://ncte.gov.in/website/PDF/NCFTE_2009.pdf
7. NCF2005–english.pdf. (n.d.). Retrieved January 11, 2024, from https://ncert.nic.in/pdf/nc–framework/nf2005–english.pdf

शिशु रंजन ने अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु से शिक्षा में एमए किया है। उन्होंने रांची विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान में एमएससी, और जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली से बीएड किया है। उनकी रुचि सामाजिक न्याय और विज्ञान शिक्षा के शोध में है।
सम्पर्क : shishu.ranjan22_mae@apu.edu.in

गणित तर्क की क्षमता कैसे बढ़ाता है ?

मुकेश मालवीय

हम सभी मानते हैं कि विद्यार्थियों को गणित पढ़ाने का मक़सद उनमें गणितीय सोच और तार्किक बुद्धि का विकास करना है। इस लेख में बताया गया है कि स्कूल में गणित पढ़ाने के जो तौर-तरीक़े अपनाए जाते हैं, वे इस मक़सद को हासिल नहीं कर पाते हैं। क्योंकि विद्यार्थी सुझाए गए नियमों, सूत्रों, विधियों का इस्तेमाल और अभ्यासभर कर रहे होते हैं। सीखने की इन स्थितियों में विद्यार्थियों के ख़ुद से सोचने, विचारने और तर्क करने के मौक़े कम ही बन पाते हैं। गणित की कुछ अवधारणाओं पर चर्चा करते हुए लेख बताता है कि गणितीय तर्क और सोच की समझ क्या हैं, और ये कैसे विकसित होती हैं। इसकी कुछ गतिविधियाँ और प्रक्रियाएँ भी लेख सुझाता है। -सं.

गणित विषय के बारे में प्रायः यह कहा जाता है कि इस विषय को जानने-समझने से तार्किक बुद्धिमत्ता विकसित होती है। जिस तरह से मैंने स्कूल में गणित सीखा है उस गणित ने तो मुझे सवालों को हल करने के लिए सूत्र और क़ायदों या विधियों का अनुपालक और इस्तेमालकर्ता ही बनाया। आज जब मैं सोचता हूँ कि गणित को सीखना-समझना, तार्किकता को विकसित करना कैसे हो सकता है, मुझे इसके सैकड़ों आधार इस विषय में दिखते हैं। स्कूलों में गणित सीखने-समझने के दौरान ऐसा समय प्रायः बहुत कम आता है जहाँ इसे सीखने वाले अपनी सीख के आधार पर अपनी सोच से कोई निष्कर्ष या दावा या कोई कथन या सूत्र ख़ुद से बना सकते हों। गणित सीखते समय सीखने वालों के लिए ख़ुद से सोचने का अवसर आना जिसमें वह समझ-सोचकर कोई निष्कर्ष वाली बात कह सके, एक तरह से तर्क को उपजाने वाला समय होता है। जैसे– मैं दो संख्याओं को जोड़ने के बहुत सारे अभ्यास करता हूँ, और मुझे सिखाए गए तरीक़े से मैं सही जोड़ कर लेता हूँ। यहाँ जोड़ना सीखना, बताई गई प्रक्रिया का पालन करना सीखना है। पर यहीं मुझसे कोई यह सवाल करे कि इन जोड़ के अभ्यास से आप दो संख्याओं के जोड़ के बारे में ऐसा कुछ कह सकते हो जो प्रत्येक जोड़ की प्रक्रिया पर लागू हो। इस सवाल के जवाब के लिए मैं अपने जोड़ के अभ्यास, जो मैंने ही किए हैं, देखते हुए यह सोचता हूँ कि एक संख्या में दूसरी संख्या जोड़ने पर एक तीसरी संख्या आ रही है। यह तीसरी संख्या कैसी है? यह संख्या उन दोनों संख्याओं से बड़ी है। यह सभी जोड़ में दिख रहा है। अब मैं यह बात पक्के तौर पर कह सकता हूँ कि किन्हीं भी दो संख्याओं को जोड़ने पर बनने वाली संख्या उन दोनों संख्याओं से बड़ी होगी। (यदि इस दावे में आप शून्य के जोड़ की घुसपैठ नहीं कर रहे होंगे।) मेरा यह निष्कर्ष शायद आपको बहुत हल्का लगा हो, पर मैं यही निष्कर्ष यदि 7 या 8 वर्ष की उम्र में जोड़ के उन सवालों को हल करने के साथ सोचने का अवसर पाकर निकाल सका होता तो यह आपको वज़नी लगता।

गणितीय तर्क की ये क्षमता गणित सीखते-समझते हुए या गणित की समस्या से जूझते

चित्र : मुकेश मालवीय

हुए उपजती है, या पहले बनी किसी समझ या अनुभव के आधार पर नई परिस्थिति में उस समझ को इस्तेमाल करने से बनती है। गणित के सन्दर्भ में विशेष रूप से मात्रा, आकार, माप, आदि से जुड़ी समस्या या सवाल की व्याख्या करना, और ख़ुद तय करना कि इस समस्या या सवाल को करने के लिए क्या-क्या करना होगा, और इस तरह ही क्यों करना होगा? यह सब सोचना, करना और कहना तर्क करना कहला सकता है। तर्क हर बार समस्या के हल के लिए ही नहीं बनाए जाते, कई बार वह विचार की तरह भी आ सकते हैं। जैसे– कक्षा 4 की एक लड़की को 5 का पहाड़ा लिखते हुए यह सूझा कि 5 ऐसी संख्या है जिसमें किसी भी संख्या का गुणा करो, उत्तर की संख्या में 0 या 5 ही आएगा। मैंने समझने की कोशिश की कि वह क्या कह रही है। आप भी समझे न, वह क्या कह रही थी? किसी सवाल के लिए सीधे सूत्र और विधि का इस्तेमाल करना सीखना तकनीकी सिखाना है, गणित नहीं। तर्क के कुछ उदाहरण लेते हैं :

संख्या की ज़रूरत से पहले

मैं जब छोटा था, मेरे घर के पास एक बग़ीचा हुआ करता था। मैं इस बग़ीचे में रोज़ जाता था। वहाँ एक गुलाब का पौधा था। मुझे किसी दिन इसमें कम गुलाब दिखते, किसी दिन काफ़ी ज़्यादा। मैं घर आकर बताता कि आज गुलाब कम खिले हैं या ज़्यादा। संख्याओं को समझना सीखने के पहले से मेरी संचेतना में कम-ज़्यादा, बड़ा-छोटा, दूर-पास, थोड़ा-बहुत, आदि शब्दों के अर्थ आ गए थे। ये अर्थ कैसे बने होंगे? क्या ये गणित की पाठ्यपुस्तक के 'संख्या पूर्व अवधारणा' नामक अध्याय को पढ़ने से बने होंगे? मेरा मानना है कि स्कूल की उम्र में पहुँचने के पहले ही तुलना की समझ बच्चों के संज्ञान में बन जाती है। वे आकार, दूरी और मात्रा में तुलना कर सकते हैं। हम सभी को हासिल 'तुलना' की इस समझ या तर्क को गणित सीखने का बुनियादी आधार बनाना चाहिए।

मुझे और मेरी दोस्त को गिनना नहीं आता। मैंने हाथ में कुछ चूड़ियाँ पहनी हैं। उसने भी कुछ पहनी हैं। वह कहती है, "मेरी चूड़ियाँ ज़्यादा हैं।" मैं कहती हूँ, "मेरे हाथ में चूड़ियाँ ज़्यादा हैं।" हम दोनों स्कूल की मैडम के पास गए। उन्होंने इसके लिए हमें गिनती सीखने को कहा।

उसी दोस्त ने मुझे एक खेल सिखाया। उसने पहले मुझे एक चूड़ी निकालने को कहा, फिर उसने अपने पास की चूड़ी मेरी चूड़ी पर रखी। इसके बाद मेरी एक चूड़ी रखने को कहा। उसके ऊपर भी उसने अपनी चूड़ी रख दी। इस तरह हम चूड़ियों की जोड़ी बनाते रहे। हमें समझ में आ गया कि किसके पास ज़्यादा चूड़ियाँ हैं।

तुलना का तर्क आदिम समय से अपनाया जाता रहा है

गिनती सीखने में संख्या का नाम बच्चे पहले सीखते हैं। संख्या नाम का मात्रात्मक सम्बन्ध बच्चे बहुत बाद में बनाते हैं। इंसान ने भी जब गिनती बनाई तब पहले संख्या नाम बना लिए हों बाद में उनको मात्रा से जोड़ा हो, शायद ऐसा

नहीं हुआ होगा। गिनती, एक और की अवधारणा से बनी। एक काल्पनिक उदाहरण देता हूँ। मेरे पास गाय जैसे कुछ जानवर हैं। अब यदि मुझे इन्हें गिनने की ज़रूरत पड़े तो सबसे पहले मुझे जो तर्क मिलेगा वह एक-एक की संगतता का होगा। माने, हर एक गाय के लिए कोई एक निशान बना सकता हूँ। जैसे– मेरे पास इतनी ////////// गाय हैं। इन डण्डियों (//////////) का अर्थ तभी खुलता है जब मैं एक डण्डी को एक गाय के रूप में देखूँ। अगर (सदियों बाद) मुझे यह ज़रूरत पड़े कि यह ////////// कुल कितनी गायें थीं तब मैं यह सोचूँगा कि यह निशान (/) एक गाय थी। इसमें एक और गाय // मिली है जो / से एक अधिक है। फिर एक और गाय /// है जो // से एक अधिक है। इस तरह एक और गाय //// है जो /// से एक अधिक है। आज के समय में इस तरह सोचना और लिखना अजीब लग रहा है। अब मैं संख्या नाम के उदाहरण पर आ जाता हूँ, और कहता हूँ मेरे पास 11 गाय हैं। पर सवाल वही है, ग्यारह क्या होता है? ग्यारह 10 से एक अधिक है। तब 10 क्या है? दस 9 से एक अधिक है। इस तरह हम क्रमशः एक पर पहुँचेंगे। हम किसी संख्या के नाम और उसमें निहित मात्रा को समझने के लिए एक से उस संख्या की तुलना कर रहे होते हैं। हम 546 को इसलिए समझते हैं क्योंकि हमने 1 की समझ के आधार पर ही इसका अर्थ बनाया है, पर हमारे लिए इसे स्वीकारना मुश्किल है। संख्याओं की हमारी समझ में 1 से तुलना के आधार पर बने अर्थ स्वतःस्फूर्त हो गए हैं। जैसे– संख्या 546 को समझने के लिए कहते हैं कि यह संख्या पाँच सौ और चालीस व छह से मिलकर बनी है। क्या पाँच सौ और चालीस व छह स्वतंत्र अवधारणाएँ हैं?

नियम और विधियों को सीखना

स्कूलों में बच्चे संख्याओं को ठीक से समझे बिना ही उन्हें जोड़ने-घटाने के नियम सीख लेते हैं। 35 + 24 को हल करने का नियम है, पहले 5 और 4 को जोड़कर लिखो फिर 3 और 2 को जोड़कर लिख दो। इस तरह के कई जोड़ कर लेने पर दिमाग़ में यह नियम पक्का हो जाता है। नियम अभ्यास करने से पक्के हो जाते हैं। इसलिए गणित में अभ्यास प्रश्नावलियाँ होती हैं। इस तरह गणित अभ्यास का विषय बनने लगता है। गणित में समझ का इस्तेमाल इतना सीमित हो गया है कि यह सिर्फ़ तरीक़ा या सूत्र का इस्तेमाल करना सिखाता है। उदाहरण के लिए, 35 + 24 = 59 होता है। यह सवाल मैं बताए गए तरीक़ों का इस्तेमाल करके सही कर लेता हूँ। इस तरह के जोड़ने के सवाल हल करने से मेरी संचेतना में कोई ज़्यादा फ़र्क़ नहीं पड़ा क्योंकि जोड़ कैसे किया जाता है, इसके नियम मैंने अपना लिए हैं। अगर मुझसे (जब मैं यह जोड़ सीखने की उम्र में था) यह 2 सवाल पूछे जाते,

1. किन दो संख्याओं को जोड़ने पर 59 आता है?
2. 35 और 24 का जोड़ कितना होता है?

तब मैं दूसरे का जवाब जल्दी से देता। पहले सवाल का भी दे सकता था, पर थोड़ा सोचना

चित्र : मुकेश मालवीय

पड़ता। और उत्तर में यही कहता कि 35 और 24 जोड़ने पर 59 आएगा। पर इस सवाल का जवाब तो बिलकुल ही नहीं दे पाता कि 35 और 24 के अलावा कोई दूसरी दो संख्या बताएँ जिनका जोड़ 59 आता हो। कितने ही सवाल थे जोड़ को समझने के, या जोड़ के ज़रिए संख्याओं को समझने के। वे सारे सवाल ऐसे होते जिनके जवाब के लिए मुझे बताया गया तरीक़ा या विधि इस्तेमाल करने के अलावा ख़ुद से कुछ सोचना पड़ता, तर्क बनाना पड़ता लेकिन वो मेरे गणित ने मुझसे पूछे ही नहीं। और मैं सिर्फ़ तरीक़े सीखता गया।

स्कूलों में शुरुआती गणित का पहला तर्क एक-एक से संगतता को भी ज़्यादातर एक नियम की तरह ही बताया जाता है। नियम या तरीक़ा अपनाने से हमारे तर्क नहीं बनते।

मान लीजिए, 1/2 + 1/3 को जोड़ना है। शिक्षिका बच्चों को समझा रही हैं कि पहले 1/2 में 3/3 का गुणा कर दो, तो यह 3/6 हो गया। अब 1/3 में 2/2 का गुणा कर दो यह 2/6 हो गया। अब 3/6 + 2/6 में ऊपर के 3 और 2 को जोड़ दो। जोड़ 5 आयेगा। उत्तर 5/6 आ गया।

इस तरह के 10 से 15 सवालों को बच्चों से हल करवाया जाएगा तब वे भिन्न के जोड़ करने में सक्षम हो जाएँगे। इस तरह की प्रक्रिया को सिखाना, सीखने वालों के सारे तर्क को मारने वाला या कुन्द करने वाला होता है। बच्चे जब 1/2 + 1/3 को अपने तर्क से हल करते हैं तब उसका उत्तर 2/5 लाते हैं। इस उत्तर को नकार कर हम यदि उत्तर 5/6 चाहते हैं, तब समझ बनाने के स्वाभाविक क्रम को अपनाना होगा, जोकि इतना आसान नहीं होगा।

1/2 किसी एक का आधा हिस्सा है। यदि मैं 1 के दो बराबर हिस्से करूँ तो हर हिस्सा 1/2 होगा। मुझे कई सारे उदाहरण, चित्रों के ज़रिए या किसी वस्तु जैसे काग़ज़ के हिस्से करके बताना होगा।

इसी तरह किसी इकाई का 1/3 हिस्सा क्या होता है, इसे पहले उदाहरण के आधार पर बच्चे ख़ुद समझ लेंगे।

अब 1/2 + 1/3 का क्या मतलब है?

हमारे पास एक इकाई का 1/2 हिस्सा है उसमें वैसी ही इकाई का 1/3 हिस्सा जोड़ना है।

1/2 हिस्सा

1/3 हिस्सा

यहाँ ये दोनों हिस्से हम जोड़ सकते हैं

+

=

पर यह कैसे बताएँ कि दोनों हिस्से मिलाकर कितना हो गए?

जब हम 2 और 3 को जोड़ते हैं, तो इसमें जो 2 है वो 1 + 1 से मिलकर बना है, और 3 भी 1 + 1 + 1 से मिलकर बना है। यानी इसमें 2 और 3 की इकाई एक जैसी ही है।

परन्तु भिन्न में 1/2 हिस्से और 1/3 हिस्से में क्या समानता है?

हमें 1/2 हिस्से और 1/3 हिस्से की तुलना करनी चाहिए।

हम सोच सकते हैं कि 1/2 हिस्से और 1/3 हिस्से में क्या सम्बन्ध है?

1/3 हिस्से को मैं यदि 1/2 वाले हिस्से के ऊपर रखूँ, तब 1/2 का कुछ हिस्सा बचा रहता है। 1/3 हिस्से को यदि 1/2 पर 2 बार रखूँ तब दूसरे 1/3 का कुछ हिस्सा बाहर निकल

जाएगा। यानी 1/3 का 1/2 हिस्से से कोई सीधा (गुणात्मक) सम्बन्ध नहीं है।

अब हमें क्या करना चाहिए?

1/3 वाले हिस्से को छोटे हिस्से में बाँट सकते हैं।

1/3 वाले हिस्से को यदि दो बराबर भाग कर दें तब 1/3 का यह आधा भाग कितना होगा? 1/3 का आधा को क्या कहें?

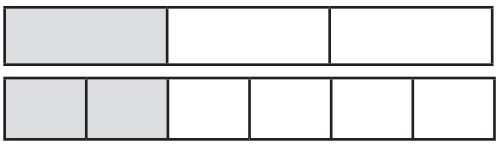

हम भिन्न को या हिस्सों को उसकी पूरी इकाई के सन्दर्भ में ही बता सकते हैं।

1/3 का आधा हिस्सा करने पर यह उस पूरी इकाई के 1/6 हिस्से के बराबर होगा।

इस 1/6 हिस्से को जब मैं 1/2 वाले हिस्से पर रखता हूँ तब यह 1/2 को 3 बार में पूरा ढँक लेता है। इसका मतलब यह हुआ कि 1/6 का 3 गुना, दूसरे हिस्से 1/2 के बराबर है।

इसे हम इस तरह लिख सकते हैं।

1/6 + 1/6 + 1/6 = 3/6 = 1/2

और 1/3 को

1/6 + 1/6 = 2/6 = 1/3

अब हम इन हिस्सों को जोड़कर बता सकते हैं क्योंकि हमें दोनों हिस्सों को बताने वाली इकाई मिल गई।

यानी 1/6 जैसे पाँच हिस्से मिलकर 5/6 हो जाएँगे।

मैं जब बच्चों के साथ इस तरह भिन्न का जोड़ कर रहा था तब बच्चों के हाथ में काग़ज़ कि स्ट्रिप थीं, वे मेरे सवालों पर सोच रहे थे, साथ-साथ ख़ुद भी इन भिन्नों को समझने की कोशिश कर रहे थे। सीखने वालों के लिए यह एक सन्तुष्टि थी क्योंकि बताए गए तर्क से उनकी सहमति (सह + मति) थी।

आगे जाकर अलग-अलग हर वाले भिन्न को जोड़ने या घटाने के सवाल हल करते हैं जैसे 2/5 + 3/7 = ?

मेरे शिक्षक ने मुझे बताया था कि यहाँ भिन्न के हर का LCM लेना पड़ेगा। यह LCM क्या है, क्यों लेना है, इसका जवाब सोचने और तर्क की प्रक्रिया से मैंने ख़ुद समझा, क्योंकि मुझे अपने बच्चों को उनके क्यों का जवाब देना था।

कक्षा 11 तक ही गणित पढ़कर मैं शिक्षक बन गया। यह संयोग था कि मैं जिस स्कूल में शिक्षक बना, वह उन दिनों एकलव्य नाम की एक शैक्षिक संस्था के प्रायोगिक स्कूल का अंग था। यह संस्था शिक्षकों के लम्बे प्रशिक्षण और उनके साथ संवाद करती थी। यहाँ शिक्षकों के प्रशिक्षणों में वे सवाल थे जो हमारे सीखे हुए का मतलब समझने पर मजबूर करते थे। जैसे– लम्बाई में चौड़ाई का गुणा करने पर क्षेत्रफल कैसे निकल जाएगा; क्षेत्रफल क्या है; मूलधन × दर × समय / 100 = ब्याज, इसका क्या मतलब है कोई बताए; भाग करने की विधि में जो तरीक़ा अपनाया जा रहा है, वह वैसा ही क्यों है; आदि। कुल मिलाकर, हम यहाँ पहली बार अपने सीखे हुए गणित पर ख़ुद सवाल उठा रहे थे, और ख़ुद से सोचकर तर्क से अपने जवाब खोज रहे थे। यह समय ज़्यादा दिनों तक नहीं रहा, पर इस संवाद ने हम शिक्षकों में सोचने, विचारने, चिन्तन करने, और ख़ुद का मौलिक नज़रिया विकसित करने का बीजारोपण किया।

मैं छठवीं, सातवीं कक्षाओं को पढ़ाता हूँ। अभी 15 दिन पहले 10वीं कक्षा के कुछ विद्यार्थी मेरे पास आए और पूछने लगे, "सर, पाई क्या होता है?" मैंने उनसे कहा, "मुझे भी नहीं मालूम, पर हम मिलकर सोचते हैं। तुमने पाई कहाँ पढ़ा?" उन्होंने कहा, "वृत्त की परिधि का सूत्र है– वृत्त की परिधि = $2\pi r$"

हमने मिलकर वृत्त की परिधि को समझा कि यह एक गोलाकार दूरी (परिधि को दूरी कहना भी सोचने की प्रक्रिया से आया) है। किसी एक वृत्त की परिधि निकालनी है तो इस दूरी को मापकर हम बता देते कि यह परिधि इतने सेमी की है। तब सूत्र बनाने का क्या मतलब है? सूत्र बताता है कि अलग-अलग माप के सभी वृत्तों के लिए यह सही होगा कि किसी भी वृत्त की परिधि की माप उस वृत्त के व्यास और पाई के गुणनफल के बराबर होगी। यह समझ हमारी थोड़ी देर की आपसी चर्चा से बन गई। हम अब इस निष्कर्ष पर थे कि किसी वृत्त की परिधि की माप उस वृत्त के व्यास (2 आर) की माप में पाई का गुणा करने पर आती है। अगले चरण में हमारे पास यह सवाल था कि यदि पाई का गुणा व्यास की माप में करना है तब यह पाई क्या है? कुछ उदाहरणों से हमने समझा कि गुणा हम संख्याओं का ही कर सकते हैं, माने पाई कोई संख्या ही है। (यह निष्कर्ष भी सोचने और तर्क की प्रक्रिया से आया कि पाई एक संख्या है।) एक बच्चे ने कहा, "यदि पाई एक संख्या है तब उस संख्या को लिखना चाहिए। पाई क्यों लिख रहे हैं?" अब इस उत्तर पर सहमति थी कि यह दूसरी संख्या जैसी नहीं होगी, कुछ फ़र्क़ होगी। हमने पाई का मान तय करने के लिए निर्णय लिया कि यह परिधि के माप में व्यास की माप के भाग देने पर आता है। हमने फ़र्श पर 6 सेमी त्रिज्या का एक वृत्त बनाया। व्यास को मापना आसान है। यह सीधी दूरी है जो 12 सेमी थी, पर परिधि वृत्ताकार दूरी थी। इसके लिए हमने एक धागे का उपयोग किया। धागे को वृत्त की परिधि पर सावधानी से जमाया। फिर धागे को सीधा करके माप लिया। हमारी माप लगभग 38 सेमी थी। हमारे वृत्त की परिधि 38 में व्यास 12 का भाग देने पर लगभग 3.16 आया। इस तरह हमने वृत्त के पाई को समझा, और उसका मान निकाला। इस पाई के ज़रिए हमने वृत्त की परिधि और व्यास को समझा। बाद में हमने पुस्तकों से पढ़कर यह भी जान लिया कि पाई एक अपरिमेय संख्या है जिसका मान 22/7 के आसपास है। पर यहीं हमारी अगली चर्चा, अपरिमेय संख्या क्या है, पर चली गई।

यह पाई वाली चर्चा ख़त्म होने से पहले हम इस बात पर थोड़ा रुके, और उस पहले व्यक्ति के इस सुन्दर एहसास के बारे में सोचने लगे जिसे यह सूझा होगा कि वृत्त की परिधि और उसके व्यास में कोई रिश्ता ज़रूर है। तब हमने गणित में कुछ और रिश्तों पर बात की जैसे समकोण त्रिभुज की भुजाओं के रिश्ते के बारे में। मैंने बच्चों से कहा, "आप गणित में ऐसे कुछ और रिश्तों ढूँढ़ पाओ तो मुझे बताना।"

मुकेश मालवीय पिछले दो दशक से भी ज़्यादा समय से स्रोत शिक्षक के रूप में सरकारी और ग़ैर-सरकारी भूमिकाओं में सक्रिय हैं। कक्षा अनुभवों को लेकर सतत लिखते रहते हैं। वर्तमान में अनुसूचित जाति विकास विभाग के शासकीय आवासीय ज्ञानोदय विद्यालय, होशंगाबाद (मध्य प्रदेश) में शिक्षक पद पर कार्यरत हैं। आप एनसीईआरटी की प्रिपरेटरी स्टेज की कक्षा 3, 4 और 5 की गणित की पाठ्यपुस्तकों के लेखन में शामिल रहे हैं।

सम्पर्क : mukeshmalviya15@gmail.com

रीडिंग कॉर्नर का रोमांचक अनुभव

शाह आलम

पुस्तकालय हमारे स्कूल का अभिन्न हिस्सा है। इसके बिना स्कूल की संकल्पना करना मुश्किल है। पुस्तकालय बच्चों में स्वतंत्र पठन की आदतों को विकसित करने में मदद करता है। पुस्तकालय का ही एक छोटा प्रारूप कक्षाओं में 'पढ़ने का कोना' के रूप में हमारे स्कूलों में स्थापित किया जाता है। यह बच्चों के पढ़ने-लिखने, और उन्हें कुछ अन्य पहलू सिखाने में बेहद महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। रीडिंग कॉर्नर क्या है; कक्षा में इसका संचालन कैसे किया जा सकता है; बच्चे और शिक्षक इसका उपयोग कैसे कर सकते हैं; यह भाषा शिक्षण सीखने, और स्कूल में पढ़ने-लिखने के समृद्ध वातावरण को विकसित करने में कैसे मदद करता है; आदि बातों पर प्रकाश डालने का प्रयास इस लेख में किया गया है। -सं.

परिचय

अपने काम के दौरान मैंने कुछ स्कूलों में रीडिंग कॉर्नर के महत्त्व को समझने का प्रयास किया था। इस दौरान मुझे लगभग 50 से अधिक स्कूलों में जाने का मौक़ा मिला। मैंने पाया कि स्कूलों में पुस्तकालय तो है लेकिन इस्तेमाल में नहीं है, और कुछ स्कूलों ने पुस्तकालय के साथ-साथ रीडिंग कॉर्नर भी बनाए थे लेकिन उनका इस्तेमाल 5 स्कूलों को छोड़ सभी में नगण्य था। अपने इन अवलोकनों के आधार पर मैंने 6 स्कूलों के शिक्षक साथियों के साथ मिलकर रीडिंग कॉर्नर बनाने, और स्कूल में इनका प्रभाव समझने का प्रयास किया जो बेहद यादगार अनुभव रहा।

इस मुद्दे पर शिक्षक साथियों के साथ बातचीत में, मैंने पाया कि कुछ सवाल जो अकसर स्कूल के शिक्षक साथियों के द्वारा पूछे जाते हैं, वे हैं– क्या स्कूल की हर कक्षा के लिए रीडिंग कॉर्नर होना आवश्यक है? या, जब स्कूल में पुस्तकालय होता है, तब रीडिंग कॉर्नर की ज़रूरत ही क्या है? कई बार मुझे बहुत-से शिक्षक साथी रीडिंग कॉर्नर बनाने को लेकर दुविधा की स्थिति में भी दिखे। मसलन, रीडिंग कॉर्नर की क्या ज़रूरत है; उसे सँभालेंगे कैसे; बच्चे पुस्तकालय से ही किताब लेकर पढ़ लेंगे; आदि। अतः पुस्तकालय और रीडिंग कॉर्नर में कोई अन्तर है भी या नहीं, इसपर कुछ बातचीत ज़रूरी है।

रीडिंग कॉर्नर क्या है?

रीडिंग कॉर्नर या पढ़ने का कोना, कक्षा में बच्चों के लिए एक ऐसी आनन्ददायक जगह होती है जहाँ बच्चे स्वयं या समूह में बैठकर स्वतंत्र रूप से पढ़ते हैं। रीडिंग कॉर्नर का अर्थ कक्षा के किसी कोने में रस्सी पर कुछ किताबें टाँगना, या कक्षा में उपलब्ध मेज़ या अलमारी में भी किताबों को रखना है। ये किताबें उस समय बच्चों के स्तर व रुचि के अनुकूल होती हैं। पुस्तकालय वह जगह होती है जहाँ सभी कक्षाओं के लिए विभिन्न प्रकार की किताबें रखी होती हैं। यहाँ अलग-अलग कक्षा के बच्चे एक

साथ बैठकर पढ़ रहे होते हैं। पुस्तकालय बड़ा व विविध पाठकों के लिए होता है, इसलिए वहाँ बच्चों का अपने स्तर के अनुरूप सामग्री को ढूँढ़ पाना, और ये सुनिश्चित करना, कि वे अपनी रुचि व आवश्यकतानुसार कुछ पठन कर सकें, तुलनात्मक रूप से मुश्किल हो जाता है। ख़ासतौर पर छोटी कक्षा के बच्चों, अथवा जिन्हें पढ़ने में कम रुचि है उनके लिए। रीडिंग कॉर्नर पर व्यवस्थित और योजना के तहत काम करने पर शिक्षक को बच्चों के पठन कौशल को निखारने में मदद मिलती है। यहाँ उनके स्तर के अनुसार सामग्री उपलब्ध कराने में सहूलियत होती है। चूँकि रीडिंग कॉर्नर बच्चों की कक्षा में ही होता है, इसलिए उन्हें कभी भी पुस्तकें देखने, पढ़ने की छूट होती है, और यहाँ बच्चों की पहुँच ज़्यादा होती है।

रीडिंग कॉर्नर का महत्त्व या ज़रूरत

रीडिंग कॉर्नर कई प्रकार से मदद करता है। जैसे–

- यह विद्यार्थियों में पढ़ने-लिखने की आदत विकसित करने में सहायक है;
- यह विद्यार्थियों को रचनात्मकता के मौक़े देता है;
- बच्चों में बाल साहित्य के प्रति रुचि बढ़ाता है, जिससे वह आसानी से भाषा सीखते हैं;
- रोचकता से भरा रीडिंग कॉर्नर बच्चों की पढ़ने-लिखने में रुचि पैदा करता है, और बच्चों को आकर्षित कर सकता है; आदि।

कक्षा में रीडिंग कॉर्नर, वर्तमान में ज़्यादातर कक्षाओं में सामान्य तौर पर व्याप्त एकरसता और बोरियत को दूर करने का भी एक महत्त्वपूर्ण तरीक़ा है। चूँकि पढ़ना पढ़ने से ही आता है, और लिखना लिखने से ही, इसलिए रीडिंग कॉर्नर का हमारी कक्षाओं में होना ज़रूरी हो जाता है।

मेरे कुछ अनुभव

अपनी नई ज़िम्मेदारियों में मैंने सबसे पहले अकलतरा विकासखण्ड के कापन संकुल के प्राथमिक स्कूल महुआडीह में मैडम के साथ

मिलकर कक्षावार रीडिंग कॉर्नर बनाने की योजना बनाई। हर कक्षा में किताबों की संख्या कितनी होगी; बच्चों के स्तर के अनुरूप किताबों का चयन कैसे किया जाएगा; किताबों के चयन में बच्चों की भूमिका क्या होगी; आदि तय करने के लिए हमने निम्नलिखित प्रक्रियाओं को अपनाया :

- सबसे पहले हम एक मज़बूत रस्सी और काजू क्लिप बाज़ार से लाए, और उसे स्कूल की हर कक्षा में लगाया गया।
- स्कूल में आई हुईं 100 दिन 100 कहानियों वाली किताबें, और प्रथम फ़ाउण्डेशन व एनबीटी से कुछ किताबें लेकर पहले हर कक्षा के स्तर के अनुसार 20-20 किताबों का चयन किया गया।
- हमने तय किया कि इन किताबों को बच्चे ख़ुद ही रस्सी पर टाँगेंगे, और इनमें से अपनी-अपनी पसन्द की किताबों का चयन करेंगे।
- एक रंग-बिरंगे चार्ट पेपर पर 'पढ़ने का कोना' लिखकर लगाया।

- हमने एक रजिस्टर यह दर्ज करने के लिए रखा कि बच्चे किताब यहीं पढ़ेंगे या घर ले जाएँगे, ताकि यह देखा जा सके कि कोई बच्चा महीने में कितनी किताबें पढ़ रहा है। सत्र के अन्त में देखा जाएगा कि हर बच्चा कितनी किताबें पढ़ पाया।

इसके बाद हमने बच्चों की मदद से रीडिंग कॉर्नर को लेकर कुछ नियम बनाए। ये नियम इस प्रकार थे :

बच्चों की ज़िम्मेदारियाँ

- किताबों को नहीं फाड़ेंगे;
- जिन किताबों को बच्चे घर ले जाएँगे, सबसे पहले रजिस्टर में अपना और किताब का नाम दर्ज करेंगे, और किताब को सुरक्षित वापस करेंगे;
- किताबों को पढ़ने के बाद उसे ख़ुद ही रीडिंग कॉर्नर में लटकाएँगे; और
- बच्चे हर दिन 30 मिनट रीडिंग कॉर्नर से किसी भी एक किताब को पढ़ेंगे।

शिक्षकों की ज़िम्मेदारियाँ

- हर एक महीने में टाँगी हुई किताबों को हटाकर कुछ नई किताबों को टाँगना;
- किताबें कटने-फटने पर बच्चों के साथ मिलकर उनकी मरम्मत करना;
- जो बच्चे किताबें नहीं पढ़ पा रहे हों उनकी मदद करना;
- किताब पढ़ने के बाद कुछ बच्चे अकसर उसे उलटा-पुलटा लटका देते हैं। इन किताबों को सीधे और सही तरीक़े से लटकाना, और बच्चों को यह समझाना कि वे हर दिन किताब पढ़ने के बाद उसे सही तरीक़े से ही लटकाएँगे; और
- शिक्षक ख़ुद भी पढ़ेंगे, और कभी-कभी बच्चों के साथ बैठ कुछ पढ़कर सुनाएँगे भी, या उनसे उनका पढ़ा हुआ सुनेंगे।

इन्हीं प्रक्रियाओं और नियमों के साथ मेरे सहयोग से कुछ दूसरे माध्यमिक व प्राथमिक स्कूलों में शिक्षकों ने रीडिंग कॉर्नर बनाए।

इस प्रयास में कई तरह की चुनौतियाँ भी सामने आती रहीं। जैसे—

- बच्चे किताबों को फाड़ रहे थे;
- वे अपने द्वारा बनाए नियमों को भूल चुके थे;
- कई बच्चे किताबें घर ले जा रहे थे पर रजिस्टर में नाम दर्ज नहीं करा रहे थे; और
- बच्चे रोज़ किताबें पढ़ तो रहे थे, लेकिन उतनी रुचि के साथ नहीं।

इस प्रकार की चुनौतियाँ आना लाज़िमी भी था क्योंकि बच्चों को इस प्रकार से किताबें पढ़ने की आदत ही नहीं थी। ख़ासकर प्राथमिक स्कूल के बच्चों में पढ़ने की आदत न के बराबर होती है, और बड़ी कक्षाओं में भी यही स्थिति है, यहाँ भी पाठ्यपुस्तकों के अलावा बहुत कम बच्चे ही दूसरी किताबें पढ़ते थे। इन चुनौतियों के समाधान के लिए हम सभी शिक्षकों ने मिलकर चर्चा की। यह राय बनी कि शुरुआती दिनों में तय की गईं ज़िम्मेदारियों को अच्छे से लागू करने की कोशिश करें। इसके तहत बच्चों को किताब पढ़ने के लिए रोज़ 30 मिनट का एक कालखण्ड देना होगा जिसमें बच्चे सिर्फ़ किताब ही पढ़ेंगे। साथ ही शिक्षक उन बच्चों की मदद करेंगे जो पढ़ नहीं पा रहे होंगे। शिक्षक भी बच्चों के साथ बैठकर पढ़ेंगे, और उन्हें पढ़कर भी सुनाएँगे। शिक्षक बच्चों में किताब न फाड़ने की भावना का विकास करने का प्रयास करेंगे। इसके लिए कुछ शिक्षक साथियों ने अलग-अलग पर कारगर तरीक़े अपनाए। जैसे— जब भी कोई

बच्चा किताब फाड़ता, रश्मि मैडम एक उदाहरण देते हुए पूछतीं, "बच्चो! अगर कोई हमारी शर्ट को फाड़े तो कैसा लगेगा?" बच्चे बोले, "बुरा लगेगा।" "तो ज़रा सोचो, जब आप लोग किताब को फाड़ोगे तब किताब को कैसा लगेगा?" कुछ बच्चों ने कहा, "किताब को बुरा लगेगा।" वहीं कुछ बोले, "किताब रोने लगती होगी।" "फिर बताओ, क्या हमें किताब फाड़ना चाहिए?" सभी बच्चे एक स्वर में बोले, "नहीं।" इसका काफ़ी सकारात्मक असर दिखा और प्राथमिक शाला खपरीडीह में अब बच्चे एक भी किताब नहीं फाड़ते हैं। इसके अलावा यह भी है कि शिक्षक साथियों को भी कुछ कठोर क़दम उठाने चाहिए। मसलन, जो किताब को फाड़ेगा उसे ही उसकी मरम्मत करनी होगी, आदि।

पठन में रोचकता लाने के लिए भी शिक्षकों ने कुछ रचनात्मक क़दम उठाए। माने, जो पढ़ेगा उसको चॉकलेट मिलेगी। कुछ शिक्षकों ने बच्चों को स्माइली देने की प्रक्रिया अपनाई। धीरे-धीरे जब बच्चों में किताब पढ़ने की आदत बनने लगी, ये समस्याएँ थोड़ी कम हो गईं। जब शिक्षक साथी विकासखण्ड के व्हाट्सअप समूह में कक्षा के रीडिंग कॉर्नर के बारे में बातचीत साझा करने लगे, दूसरे शिक्षक साथी भी इससे प्रेरित हुए। उन्होंने अपने स्कूलों में भी रीडिंग कॉर्नर बनाने का प्रयास शुरू किया। जब मैं प्राथमिक शाला घनवा में मैडम के साथ मिलकर रीडिंग कॉर्नर बनाने के लिए गया, शिक्षक साथियों ने कहा, "सर, हम लोग कक्षा 3, 4 और 5 में रीडिंग कॉर्नर बनाएँगे।" मैंने पूछा, "पहली और दूसरी कक्षा में क्यों नहीं?" शिक्षक साथियों का मानना था कि पहली और दूसरी कक्षा में बच्चे सिर्फ़ किताब देखते हैं। वे पढ़ नहीं पाते हैं। लेकिन अब हम पहली और दूसरी कक्षा में बनाए गए रीडिंग कॉर्नर के महत्त्व और उसके इस्तेमाल को समझने लगे हैं।

कक्षा पहली और दूसरी में रीडिंग कॉर्नर

मैं यहाँ प्राथमिक शाला खपरीडीह की शिक्षिका और प्राथमिक शाला महुआडीह की शिक्षिका के कक्षा 1 और 2 में किए जा रहे

प्रयोगों का ज़िक्र ज़रूर करना चाहूँगा। इन दोनों शिक्षिकाओं के साथ भी ऊपर बताए गए नियमों के साथ रीडिंग कॉर्नर बनाए थे, और इन्हें भी वैसी ही समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ा था जिनका उल्लेख ऊपर किया है। और ये पहली और दूसरी कक्षा के बच्चे थे। आप समझ सकते हैं इन बच्चों को सँभालना कितना मुश्किल होता होगा! इन दोनों शिक्षिकाओं ने बच्चों को इंगेज करने में रीडिंग कॉर्नर का उम्दा इस्तेमाल किया। इसका नतीजा ये रहा कि जब मैडम कक्षा में नहीं होती हैं, बच्चे स्वत: से पुस्तकों को लेकर देखते रहते हैं। आपके मन में सवाल आ रहा होगा कि सिर्फ़ देखते ही तो होंगे, वे पढ़ कहाँ रहे हैं। बात बिलकुल सही है कि कक्षा 1 और 2 के बच्चों से यह अपेक्षा करना कि वो धाराप्रवाह पढ़ लेंगे, कपोल कल्पना होगी। फिर भी बच्चों का किताब के साथ जुड़ाव और किताब के चित्रों को देखकर उनपर बातचीत करना उनकी मौखिक भाषा के विकास में काफ़ी सहायक होता है। अब समझते हैं कि इन दोनों शिक्षिकाओं ने कैसी किताबों का चयन किया।

- कक्षा पहली के लिए सिर्फ़ चित्रात्मक किताबों को रखा गया।
- कक्षा 2 के लिए 5 किताबें सिर्फ़ चित्रात्मक और 5 ऐसी किताबें जो

चित्रात्मक हों और उनमें एक-एक लाइन के छोटे वाक्य लिखे हों।

इन्हीं दो प्रकार की किताबों का चयन कर शिक्षिका ने अपनी कक्षा में लगातार प्रयोग करना शुरू किया। शुरुआती दिनों में वे हर बच्चे के साथ बैठकर चित्र पठन करतीं, और बच्चों से बातचीत करतीं। जो बच्चे पहले बिलकुल भी नहीं बोलते थे, उन्होंने धीरे-धीरे बोलना और चित्रों को पहचानना शुरू किया। ये छोटी-सी सफलता दिखाती है कि कक्षा पहली और दूसरी में रीडिंग कॉर्नर का होना कितना ज़रूरी है। अगर शिक्षक साथी कक्षा पहली से बच्चों में किताबों के प्रति रुचि जागृत करेंगे, मेरा मानना है कि कक्षा 5 तक आते-आते बच्चों का पठन और लेखन दोनों बेहद शानदार हो सकते हैं। अब हम यह बात करेंगे कि इस रीडिंग कॉर्नर का इस्तेमाल रचनात्मक लेखन के रूप में कैसे कर सकते हैं।

लेखन के रूप में रीडिंग कॉर्नर का इस्तेमाल

हम सभी जानते हैं कि अगर बच्चों के हाथ में किताब होती है, वे न सिर्फ़ पढ़ते हैं बल्कि उसमें शामिल कहानियों-कविताओं की नक़ल भी लिखते रहते हैं। लेकिन इससे लिखने का अर्थ और फ़ायदा पूरी तरह सामने नहीं आता। इस प्रकार लिखने से उनकी लिखाई तो बेहतर होती है, लेकिन उनकी अभिव्यक्ति और रचनात्मकता छूट जाती है। इसलिए मैंने सोचा कि क्यों न बच्चों को रचनात्मकता की ओर भी ले जाया जाए। मैंने इसका प्रयोग प्राथमिक स्कूल घनावा में कक्षा 5 के उन बच्चों के साथ किया जिनका लेखन उतना अच्छा नहीं था। मैंने सोचा कि अगर ये बच्चे अपनी पढ़ी किसी एक किताब के बारे में 4-5 लाइन में अपने अनुभवों को लिख दें तो ये भी एक बड़ी सफलता होगी।

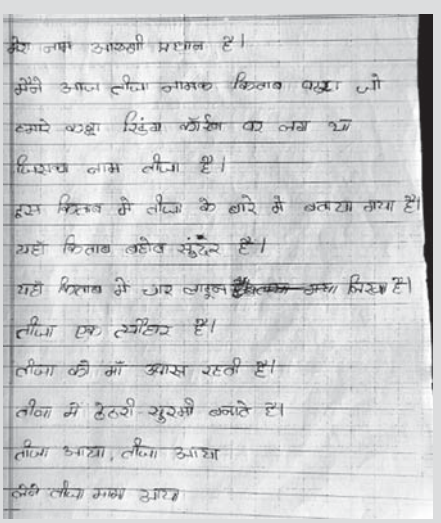

लंच के बाद का समय था। मैं जब स्कूल पहुँचा, बच्चे रीडिंग कॉर्नर से किताबें लेकर पढ़ रहे थे। मैंने पूछा, “आप कौन-कौन-सी किताब पढ़ रहे हैं?” किसी ने कहा कि वह *तीजा* नाम की किताब पढ़ रही है, वहीं कोई बोला कि वह *बस* नाम की किताब पढ़ रहा है। मैंने कहा, “आज आप लोग जो-जो किताब पढ़ रहे हैं उसके बारे में कुछ लिखना है।” सभी बच्चे मेरी ओर ऐसे देखने लगे मानो मैंने कुछ अजीब-सा असम्भव काम दे दिया हो। फिर मैंने एक उदाहरण देकर समझाया कि मान लो मेरा नाम रोहन है, और मैं आज *बस* नाम की किताब पढ़ रहा हूँ। इस किताब में किसके बारे में बात की गई है? तब उस बच्चे, जिसने *बस* नाम की किताब पढ़ी थी, ने कहा, “बस के बारे में।” फिर मैंने पूछा, “ये किताब पढ़कर आपको कैसा लगा?” वह बच्चा

मेरा नाम आरती प्रधान है।
मैंने आज तीजा नामक किताब पढ़ा जो
हमारे कक्षा रिडिंग कॉर्नर पर लगा था
जिसका नाम तीजा है।
इस किताब मे तीजा के बारे मे बताया गया है।
यहा किताब बहोत सुंदर है।
यहा किताब मे चार लाइन ~~...~~ अच्छा लिखा है।
तीजा एक त्यौहार है।
तीजा की माँ उपास रहती है।
तीजा मे ठेठरी खुरमी बनाते है।
तीजा आया, तीजा आया
तीजा मना आया

मेरा नाम कल्याणी गढ़वाल है।
मै आज एक किताब पढ़ही हूँ
जीसका नाम गिलहरी है
इस किताब बहुत सुंदर है।
इस किताब मे गिलहरी के बारे मे बताया
इस किताब मे चार लाइन है की बहुत अच्छा
अच्छा लग रहा है
एक गिलहरी इधर फुदकती उधर फुदकती
यहाँ घुमती, वहाँ घुमती
पेड़ पर चढ़ती, डाल पर झुलती
छत पर जाती.
आँगन मे आती.
मुँगफली खाती, खुश हो जाती।

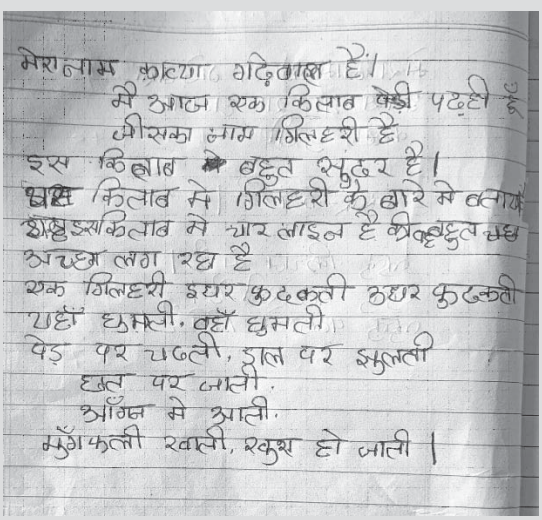

बोला, "बहुत मज़ा आया।" मैंने कहा, "आप सभी को इन्हीं सब बातों को लिखना है।" कुछ बच्चों ने बेहद शानदार प्रयास किए जिनमें से कुछ पेज 5 पर दिए गए हैं। इसके अलावा, पढ़ी जा रही किताब से सम्बन्धित थीम देकर भी हम रचनात्मक लेखन करवा सकते हैं। इस प्रकार का लेखन बच्चों के लिखना सीखने में सहायक होगा। इस प्रकार, रीडिंग कॉर्नर का इस्तेमाल कक्षा में प्रिंट रिच वातावरण के साथ स्कूल में समृद्ध वातावरण विकसित करने में भी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

रीडिंग कॉर्नर का बच्चों और स्कूल पर प्रभाव

जिन स्कूलों में रीडिंग कॉर्नर बने उनमें कई फ़ायदे होते नज़र आए। हर स्कूल में कुछ-न-कुछ फ़ायदा दिखा, और कुछ बातें कमोबेश हर स्कूल में समान दिखीं। इनमें से मुख्य हैं :

- बच्चों में किताबों के प्रति ज़िम्मेदारी की भावना विकसित हुई;
- बच्चों में पढ़ने-लिखने की आदत का विकास हुआ। जो बच्चे किताबों से दूर भागते थे उनमें किताबों के प्रति रुचि पैदा हुई;
- बच्चों में किताबों के प्रति स्वामित्व व अपनत्व की भावना का विकास हुआ। इसकी वजह से किताबों को बिना पूछे ले जाने की आदत दूर हुई, और किताबों को फाड़ना भी बन्द हुआ;
- बच्चों ने किताबों को अपने घर ले जाना भी शुरू किया। हमने पाया कि अभिभावकों ने भी पढ़ने में उनकी मदद की; आदि।

मुझे लगता है कि अगर सभी शिक्षक अपनी-अपनी कक्षाओं में रीडिंग कॉर्नर बनाएँ, और उनका इस्तेमाल करना शुरू करें, इससे बच्चों में किताबों के प्रति रुचि और रोचकता दोनों विकसित करने में मदद मिलेगी। इसके साथ ही बच्चों के पढ़ने-लिखने के स्तर में भी वृद्धि होगी।

शाह आलम बिहार के गोपालगंज ज़िले के रहने वाले हैं। इनकी प्रारम्भिक पढ़ाई गाँव के स्कूल में हुई है। उन्होंने अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर की पढ़ाई इलाहाबाद विश्वविद्यालय से की है। फ़िलहाल अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में सन्दर्भ व्यक्ति के रूप छत्तीसगढ़ के जांजगीर ज़िले के अकलतरा ब्लॉक में कार्य कर रहे हैं।

सम्पर्क : shah.alam@azimpremjifoundation.org

कविता–कहानी की मज़ेदारी : कक्षा के अनुभव

रंजीता वर्मा

यदि सेवाकालीन प्रशिक्षण शिक्षकों के लिए प्रासंगिक हों, वे उनकी शैक्षिक ज़रूरतों को संजीदगी से पूरी करते हों, और पूरी तैयारी, गहरी समझ व गुणवत्ता के साथ आयोजित किए जाएँ तो उनका असर शिक्षकों के पढ़ाने के तौर-तरीक़ों पर भी दिखाई देता है। इस लेख की लेखिका ने दो साल 'हम होंगे कामयाब' परियोजना-प्रशिक्षण के कई सत्रों में भाग लिया। इन सत्रों में बनी समझ के आधार पर कक्षा में बच्चों को भाषा सिखाने के तरीक़ों में कहानी-कविता के योजनाबद्ध और चरणवार उपयोग के अनुभवों को प्रस्तुत किया है। इनमें कविता-कहानियों को चुनना, कहानियों पर चित्र बनाना, उनके शीर्षक बनाना, सवाल बनाना, सारांश लिखना और आकलन के लिए आज़माई गई प्रक्रियाओं आदि के अनुभव शामिल हैं। -सं.

सन्दर्भ

पिछले दो वर्ष के दौरान 'हम होंगे कामयाब' परियोजना में शामिल होने का अवसर मिला। हम होंगे कामयाब परियोजना, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन और राज्य शिक्षा केन्द्र द्वारा संचालित की गई थी। पिछले सत्र के दौरान इसमें कुल 6 सत्र आयोजित किए गए थे, और इस वर्ष भी 6 सत्र ही आयोजित किए गए। इनमें अधिकांश सत्रों में मैंने प्रतिभाग किया। अपने शैक्षिक जीवन में इस तरह के सत्र मैंने पहली बार देखे। सत्रों में कक्षा में काम करने के तरीक़ों व सहायक सामग्री को इस्तेमाल करने और सतत मूल्यांकन को केन्द्र में रखने पर ज़ोर दिया गया था। भाषा / गणित के सत्रों में कुछ सत्र कहानी-कविता पर कार्य करने के विभिन्न तरीक़ों पर केन्द्रित किए गए थे। बच्चों के भाषा सिखाने के तरीक़ों में कहानी-कविता के इस्तेमाल का मेरा यह पहला अनुभव था। मुझे भी लगता था कि पढ़ना-लिखना सीखे बिना बच्चे कविता-कहानी पर कैसे काम कर पाएँगे? लेकिन जैसे-जैसे मैंने सत्र के दौरान सुझाए गए तरीक़ों पर काम करना शुरू किया, मुझे आश्चर्य हुआ कि बच्चे इस तरीक़े से काम करने में ज़्यादा बेहतर प्रदर्शन कर रहे हैं। बच्चों के सीखने की स्थितियाँ ज़्यादा सकारात्मक दिखाई देती हैं। मैंने अब निरन्तरता में इन तरीक़ों को अपनी कक्षा शिक्षण की प्रक्रिया में शामिल करना शुरू किया। इन तरीक़ों के परिणाम मुझे उत्साहजनक लगे।

पूर्व आकलन

मेरी कक्षा (4-5) के बच्चे शुरुआत में पढ़ तो पाते थे, पर जो वे पढ़ते थे उसे समझने में उन्हें चुनौतियाँ होती थीं। इसी तरह पठन के उपरान्त बच्चे उसे अपने सन्दर्भ से जोड़ते हुए नहीं बता पाते थे। वे कहानी में अपनी कोई बात जोड़ पाने, कहानी पर सवाल बना सकने, कहानी से कविता बना पाने, कहानी का अन्त बदल पाने जैसे काम नहीं कर पाते थे। इसलिए मैंने अपने कक्षा शिक्षण के शुरुआती उद्देश्य पर सोचते समय तय किया कि मुझे अपने काम को उन दक्षताओं पर केन्द्रित करना चाहिए

जो बच्चे अभी तक हासिल नहीं कर पाए हैं, ताकि बच्चों में उन दक्षताओं और कौशलों का विकास हो सके जो इस कक्षा के बच्चों के लिए अपेक्षित हैं।

कक्षा में काम करने की योजना बनाना

चरण–1 : कहानी–कविताओं का चुनाव करना

मैंने पाठ्यपुस्तक की कहानी 'खूँटे का घोड़ा' और 'मिट्ठू' पर काम करने का निर्णय लिया। इन कहानियों को लेने का आधार यह था कि ये कहानियाँ बच्चों के स्थानीय अनुभवों से मेल खाती हैं। मुझे लगा कि इस वजह से इनपर काम करते हुए बच्चों को भी प्रतिभाग करने में सहजता होगी।

कक्षा में काम करने की रणनीति

शुरुआत में मैंने बच्चों के साथ कहानी के चित्रों पर बातचीत की। इस बातचीत में कहानी के चित्र और कहानी के पात्रों पर चर्चा की। 'खूँटे का घोड़ा' कहानी के चित्रों पर बातचीत कुछ सवालों के साथ की। जैसे– कहानी में क्या हो रहा होगा; कहानी किसके बारे में है; कहानी में कौन–कौन है; आदि। बच्चों द्वारा इन सवालों पर निम्न जवाब दिए गए :

- कहानी घोड़ा और जंगल के बारे में है।
- कुछ बच्चों ने अनुमान लगाया कि कहानी में कोई चोर बूढ़े बाबा का घोड़ा चुरा लेता है। ऐसे कुछ और जवाब बच्चों की ओर से आए। इसके बाद कहानी बच्चों को पढ़कर सुनाई गई, और मैं बीच–बीच में बच्चों को सवालों के बारे में अनुमान लगाने के मौक़े देती रही। जैसे– बूढ़ा व्यक्ति गड्ढे में कैसे गिरा होगा? इसपर बच्चों के जवाब थे : उपटा लग गया होगा; गड्ढा ढँका होगा; बाबा को गड्ढा न दिखाई दिया होगा; आदि। मुझे अच्छा लगा कि कक्षा में बच्चों के सन्दर्भ लाने को लेकर जो काफ़ी चर्चा होती है, वह मेरी कक्षा में स्वतः होने लगा। इसमें मुझे अपने इस सवाल का जवाब कुछ हद तक मिल गया कि कक्षा में बच्चों के सन्दर्भ कैसे आ सकते हैं, और उन्हें कैसे जोड़ा जा सकता है।

कहानी के आख़िरी हिस्से में मैंने बच्चों से पूछा, "क्या बंजारे ने घोड़ा पाने के लिए कुछ नहीं किया होगा?" बच्चों ने कुछ रोचक जवाब दिए। एक बच्ची ने बताया, "ठग से बहस की होगी।" दूसरी ने बताया, "पुलिस को बुलाया होगा।" तीसरी ने कहा, "अपने दोस्तों और गाँव वालों को लेकर गए होंगे।" इन जवाबों से मुझे लगा कि बच्चे कहानी की समस्या का अपने अनुभवों पर आधारित जवाब दे रहे हैं, और मैंने सोचा कि यह कहानी बच्चों के अनुभवों व उनकी सोच के क्षेत्र को विस्तार देगी।

कहानी पर चित्र बनाना

शुरुआत में कहानी पर बच्चों ने जो चित्र बनाए वह कहानी के चित्रों से मिलते–जुलते थे।

शायद बच्चों को कृत्रिम चित्र बनाने की आदत-सी लग गई थी। मैंने बच्चों से बातचीत की, और कहा कि कहानी के आधार पर जो जवाब आपने दिए हैं वह चित्र में बनाने हैं। शुरुआत में बच्चे हिचक रहे थे, और कह रहे थे कि हमसे नहीं बनेगा। जब मैंने उन्हें भरोसा दिलाया कि आप कोशिश करो, और जैसा भी बने, बनाओ। बच्चों ने सोचा, और बनाने की शुरुआत की। कुछ बच्चे कठिनाई भी महसूस कर रहे थे। इसका कारण मुझे समझ आया कि न तो इन्होंने पहले कभी चित्र बनाने का कार्य किया है, और न ही मैंने अपनी सोच, कल्पना, भावना, आदि के आधार पर इस तरह के चित्र बनाने को लेकर बच्चों से कोई काम करवाया है। ख़ैर, बच्चों को लगातार प्रोत्साहित करने से वे काम करना शुरू कर देते हैं।

इस काम में कुछ बच्चों ने बेहतर प्रयास किए। कुछ ने किताब से चित्रों की नक़ल की। लेकिन एक बच्चे ने खूँटे से बँधे घोड़े का चित्र बनाया, और बताया कि यह फ़ोटो तब का है जब बंजारा घोड़े को ठग से छुड़ाकर ले जाता है, और उसे दाना खिलाता है। यहाँ बच्चों ने कहानी के आधार पर कल्पना से नए चित्र बनाने की कोशिश की। पर मुझे लगा कि आगे की प्रक्रियाओं में इसपर और काम करने की ज़रूरत होगी।

कहानी का सारांश लिखवना

इसके बाद की प्रक्रिया में बच्चों ने कहानी का सारांश अपने शब्दों में बताया। बच्चों ने लिखित एवं मौखिक दोनों रूपों में सारांश बताया। जैसे, एक लड़की ने जो सारांश लिखा था, उसमें उसने क्रम से पूरे वाक्यों में अपनी बात कही। इस सारांश में उसने अपने घर की भाषा (बुन्देली)

के शब्दों का भी इस्तेमाल किया। इस सारांश में कई सारी वर्तनीगत अशुद्धियाँ तो थीं, पर महत्त्वपूर्ण यह है कि वह कहानी को पढ़ और सुनकर समझ भी पाई थी, और अपनी भाषा में बता पाई थी।

चरण–2

दूसरे चरण में बच्चों के साथ मिलकर एक और कहानी पर काम किया गया, और कहानी के आधार पर सोचने और कल्पना करने के मौक़े बनाए गए। इस प्रक्रिया में बच्चों ने नए शीर्षक बनाए, कहानी पर सवाल तैयार किए, पात्रों के नए नाम रखे, और कहानी का अन्त बदला। उन्होंने कहानी के बहुत-से शीर्षक दिए। मसलन, गोपाल और बंदर की दोस्ती, नटखट बंदर, सर्कस, बंदर की कहानी, बंदर की वफ़ादारी, नक़लची बंदर, मिट्ठू, आदि।

इसके बाद की प्रक्रिया में बच्चों ने कहानी का अन्त बदलने पर भी काम किया। अन्त बदलने की शुरुआत में बच्चे इस बात को लेकर थोड़ा असमंजस में थे कि किस तरह से अन्त बदलने हैं। मैंने बच्चों को एक कहानी का अन्त बदलकर बताया। जैसे– इस कहानी में गोपाल जब बंदर ख़रीदने के लिए

पहले मैं पाठ पढ़ाने और सवाल–जवाब करने के अलावा और काम नहीं करती थी। अब मैं पाठ को समझने के बाद बच्चों में उसपर बनी उनकी समझ के आधार पर कोई–न–कोई गतिविधि बनाती हूँ और उसमें बच्चों को उनकी समझ दिखाने के अवसर देती हूँ। इससे बच्चों को पाठ पर अलग–अलग तरह से काम करने का अवसर मिलता है, और उन्हें भी अच्छा लगता है। जैसे— कहानी को उनकी अपनी भाषा में फिर से कहना; कहानी में आई घटनाओं को अपने जीवन से जोड़ते हुए उनपर बात करना; आदि। ऐसी कुछ गतिविधियों के उदाहरण इस लेख में विस्तार से दिए गए हैं।

अपनी माँ से अठन्नी लेकर आता है, फिर क्या हुआ होगा? इसपर बच्चों ने कहानी का अन्त बदला। एक बच्ची ने 'मिट्ठू' कहानी का अन्त बदलते हुए एक नया दृश्य सोचा। उसने लिखा कि गोपाल बंदर को आज़ाद कराके जंगल ले जाता है, और गोपाल व बंदर मिलकर फल खाते हैं। इस तरह, कुछ दिन वे लोग जंगल में ही समय गुज़ारते हैं, और तब तक सर्कस वहाँ से चला जाता है। गोपाल और बंदर मिलकर जंगल में रहते हैं।

यहाँ मुझे लगता है कि बच्ची बंदर के दुख को अपने दुख से जोड़कर देख पा रही है। कहानी का अन्त बदलते हुए बच्ची बंदर को घर नहीं ले जा रही, बल्कि गोपाल उसे जंगल ले जाकर कुछ दिन वहीं गुज़ारता है। यहाँ सोनिका (जिस बच्ची ने कहानी का अन्त बदला) ने सम्भवतः यह सोचा होगा कि यदि गोपाल इसे घर ले जाएगा तो उसकी मम्मी बंदर को वापस सर्कस, और उसे स्कूल भेज देगी।

कहानी पर सवाल बनवाना

शुरुआत में बच्चों ने कहानी पर जो सवाल बनाए, वह बेहद सूचनात्मक थे। इनमें ज़्यादातर सवाल इस बारे में थे कि कहानी में कौन-कौन है; कौन क्या कर रहा है; कहानी किसके बारे में है; बंदर का नाम 'मिट्ठू' किसने रखा होगा; गोपाल को मिट्ठू कैसे मिला होगा; आदि।

इसके आगे मैंने बच्चों से कहा कि अब हमें, कहानी में कौन-कौन है; क्या हो रहा है; से हटकर सवाल बनाने हैं। यहाँ भी बच्चे असमंजस में थे कि किस तरह के सवाल बनाने हैं। मैंने उनकी मदद की, और कहा कि इस कहानी पर हम कौन-कौन सी बातें सोच सकते हैं। इसके बाद कुछ बच्चों ने सवाल बनाने शुरू किए। 'रमा और मुनमुन' कहानी पर बच्चों ने कुछ बेहतर सवाल बनाए। हम बच्चों के बनाए सवालों पर ग़ौर करते हैं :

बच्चों द्वारा बनाए गए सवाल –

1. जूही कबूतर के अण्डे को क्यों देखना चाहती है?
2. जूही टंकी पर चढ़ी तो उसकी बहन ने उसे क्यों डाँटा?
3. कबूतर ने जूही के घर अण्डे क्यों रखे?
4. रूबी को यह कैसे पता चला कि बिल्ली को भूख लगी है?
5. तोता क्यों उदास बैठा है?

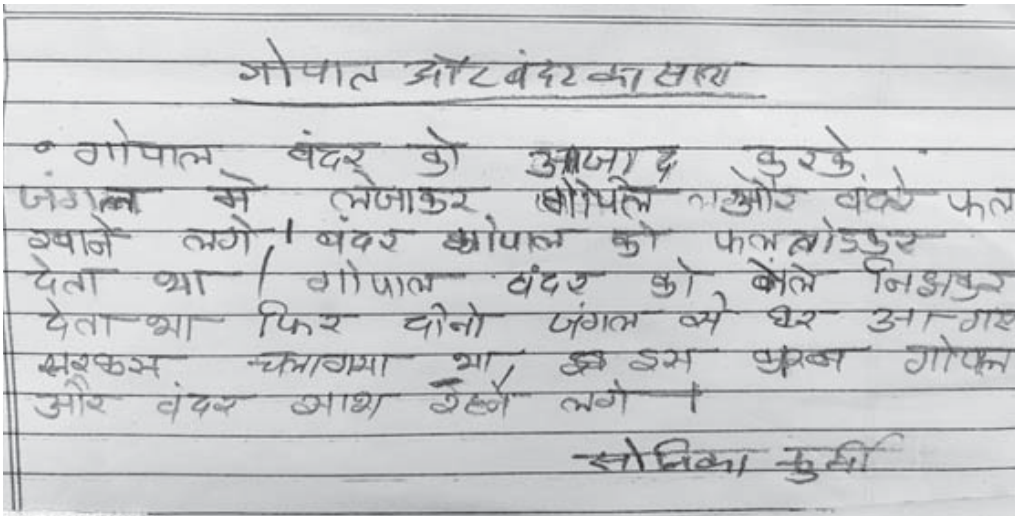

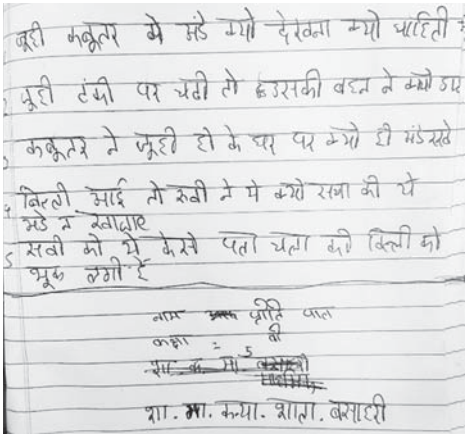

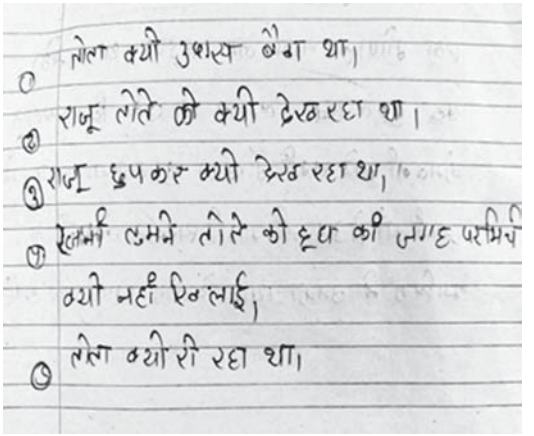

जूही कबूतर के अंडे क्यों देखना क्यों चाहिती
जूही टंकी पर चढ़ी तो उसकी बहन ने क्यों डर
कबूतर ने जूही हो के घर पर क्यो ही अंड रखे
बिल्ली आई तो रूबी ने ये क्यो रक्षा की ये
अंडे न खावाए
सबी को ये कैसे पता चला की बिल्ली को
भूक लगी है

नाम प्रीति पाल
कक्षा : 5वी
शा. मा. कन्या. शाला. बसाहरी

1. तोता क्यों उदास बैठा था।
2. राजू तोते को क्यों देख रहा था।
3. राजू छुपकर क्यो देख रहा था,
4. रजनी उसने तोते को दूध की जगह मिर्च क्यो नहीं खिलाई,
5. तोता क्यो रो रहा था।

6. तोता क्यों रो रहा होगा?
7. उसने तोता को दूध की जगह मिर्च क्यों नहीं खिलाई?

यहाँ यदि ग़ौर करें तो बच्चों ने शुरुआत में सूचनात्मक सवाल (क्या और कौन वाले) बनाए थे, बाद की प्रक्रियाओं में बच्चों ने सोचने वाले सवाल बनाने का प्रयास किया। बच्चों ने इस तरह के सवाल बनाए जिनमें सोचने के साथ-साथ भाषा के इस्तेमाल के ज़्यादा मौक़े थे।

चरण–3

तीसरे चरण में मुख्य रूप से बच्चों ने कहानी पढ़ी, उसपर चर्चा की, और नई कहानी बनाने का प्रयास किया। इस प्रक्रिया में मैंने *बरखा* सीरीज़ की स्तर एक की पुस्तकों से बच्चों को समूह में पढ़ने के लिए केवल चित्रात्मक कहानी दी। यहाँ बच्चों ने कहानी के चित्रों का अवलोकन किया, और समूह में कहानी की घटनाओं पर बातचीत की।

शुरुआत में बच्चों को एक तरह की झिझक थी कि कहानी को किस तरह से बनाया जाए। समूह में बातचीत के बाद बच्चों को बस यह कहा कि चित्रवार जो चीज़ें हो रही हैं उनपर चर्चा करो, और उसे लिखो। इसके बाद बच्चों ने सबसे पहले कहानी के पात्रों का नाम समूह में चर्चा के बाद रखा। कहानी के चित्रों की घटनाओं पर बातचीत करते हुए बच्चों में चर्चा भी हो रही थी, और वे तर्क-वितर्क भी कर रहे थे। मसलन, कोई बच्ची कह रही थी कि इस चित्र में वह बच्ची कबूतर के अण्डे को छू लेगी, तो कोई कह रही थी कि वह उनकी देखभाल के लिए आई है।

चर्चा के बाद बच्चों ने कहानी बनाई, और उसमें बुन्देली भाषा के शब्दों का भी इस्तेमाल किया। कहानी को उन्होंने एक पेज पर लिखकर प्रस्तुत किया।

तोते की उदासी
1. राजू तोते को देख रहा है।
2. तोता गमले के पास बैठा है।
3. राजू और रजनी तोते को देख रहे हैं।
4. तोता उदास बैठा है।
5. तोता पेड़ पर बैठा है।
6. रजनी कुछ सोच रही है और राजू उसे देख रहा है
7. तोता रो रहा है।
8. राजू कटोरे मे दूध और आम लेकर जा रहा है।
9. तोते के पास कटोरे मे दूध और आम रखा है।
10. तोता पेड़ के पास उदास बैठा है।
11. रजनी कटोरे मे दूध और आम लेकर तोते के बैठी है।
12. तोता देख रहा है।
13. राजू और रजनी जीने के पास छुपकर देख रहे
14. तोता आम खा रहा है
15. राजू और रजनी बारिश मे नाच रहे हैं।

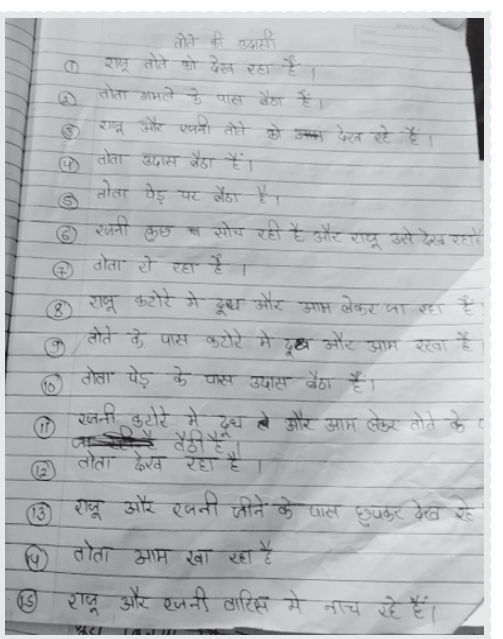

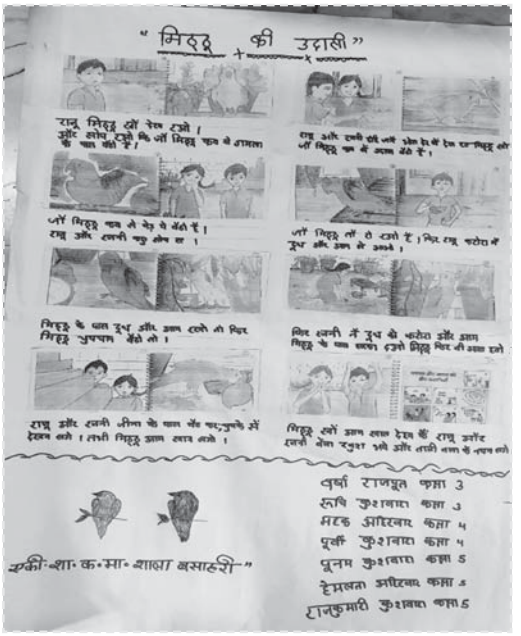

दोनों समूहों के बच्चों ने कहानी के एक से ज़्यादा शीर्षकों पर चर्चा की, और उनमें से एक का चुनाव किया। बच्चों ने शीर्षक का चुनाव इस आधार पर किया कि जो शीर्षक कहानी की ज़्यादातर बातों से जुड़ता है वही उसका शीर्षक होगा। उन्होंने एक कहानी का नाम 'मिट्ठू की उदासी' एवं दूसरी का 'जूही और बिलैया की दोस्ती' रखा।

कहानी पर बच्चों द्वारा बनाए गए शीर्षक

1. कबूतर के अण्डे
2. जूही और रूबी की कहानी
3. जूही और बिल्ली की दोस्ती
4. कबूतर और कबूतरी की कहानी
5. जूही को कबूतर से लगाव

कहानी के शीर्षक बनवाना

कहानी लिखते हुए बच्चों ने पूरे-पूरे वाक्यों का इस्तेमाल करने के साथ बुन्देली भाषा के शब्दों को भी शामिल किया। बच्चों ने चित्र के विवरण के आधार पर कहानी का निर्माण किया। बच्चों द्वारा निर्मित कहानी में एक वाक्य का जुड़ाव दूसरे वाक्य और घटना से भी था। इस पूरी प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण यह था कि बच्चे कहानी के आधार पर सोचें, कल्पना करें, और भाषा का रचनात्मक इस्तेमाल करें।

जब बच्चों ने कहानी का शीर्षक बनाया, कहानी के चित्रों के आधार पर नई कहानी बनाई। एक शिक्षिका के रूप में, मैं यह सोच रही थी कि बच्चे सृजनात्मक लेखन की प्रक्रिया में शामिल हों। वे कितना बेहतर कर पाएँ, यह मेरे लिए ज़्यादा महत्त्वपूर्ण नहीं था। महत्त्वपूर्ण था कि बच्चों को इस तरह के ज़्यादा-से-ज़्यादा मौक़े मिलें। कक्षा में मिलने वाले इस तरह के लगातार मौक़े बच्चों को उनके बेहतर लेखन में मदद करेंगे, और वे नई कहानी-कविता का निर्माण कर सकेंगे।

बच्चों की एक चिन्ता यह थी कि उन्होंने जो कहानी बनाई है उसमें कुछ ग़लत शब्द भी होंगे। उन शब्दों को कैसे ठीक किया जाए? यहाँ मैंने बच्चों को भरोसा दिलाया कि तुम कहानी बनाओ। इसके बाद हम मिलकर उन ग़लतियों को ठीक कर लेंगे। एक बार जब कहानी बेहतर

तरीक़े से बन जाएगी, उसके बाद शब्द भी ठीक हो जाएँगे।

इस पूरी प्रक्रिया में बच्चों ने भाषा सीखने के कई कौशलों पर काम किया। बच्चों ने अवलोकन व कल्पना करना, सोचना, तर्क लगाना, चर्चा करना, समूह में काम करना, मौखिक एवं लिखित रूप से भाषा का सृजनात्मक प्रयोग करना, जैसे काम किए।

अगले दिन मैंने बच्चों को इस कहानी का बुन्देली भाषा में अनुवाद करने को कहा। इस अनुवाद को एक कार्ड शीट पर लगाया। बुन्देली में अनुवाद के दौरान बच्चे शब्दों के चयन, वाक्य कौन-से होंगे, आदि पर भी चर्चा कर रहे थे। मसलन, इस चित्र में कबूतर को देखकर राजू क्या सोच रहा होगा; उसे संक्षिप्त रूप से कैसे लिखा जाए; आदि।

बाद का आकलन

- पाठ्यपुस्तक एवं पुस्तकालय की कहानियों को बच्चे अब समझकर पढ़ने लगे हैं।
- क़रीब 22 बच्चे कहानी को पढ़कर समझने लगे हैं। वे कहानी पर अपनी बात, अनुभव और समझ साझा करने लगे हैं।
- तक़रीबन 15 बच्चे कहानी के आधार पर सवाल बनाने, और उनपर समूह में चर्चा करने लगे हैं।
- 14 बच्चे नई कहानी बनाने की प्रक्रिया में शामिल होने लगे हैं।

मैंने सीखा

इस पूरी प्रक्रिया के दौरान मेरी बहुत-सी भ्रान्तियाँ दूर हुईं। ये भ्रान्तियाँ बच्चों की क्षमताओं को लेकर थीं। बच्चे यह कैसे कर पाएँगे; पढ़ना-लिखना सीखे बिना भी भाषा के कौशलों पर काम किया जा सकता है क्या; भाषा की कक्षा में समग्रता में काम करने का मतलब क्या होता है? ऐसे कई सवालों के जवाब मुझे मेरी कक्षा में मिल पाए।

भाषा की कक्षा में समग्रता में काम करने के परिणामों को देखते हुए, इस पूरी प्रक्रिया में मेरा विश्वास बनने लगा है। मेरी कक्षा के बच्चों के सीखने में आए बदलाव काफ़ी सुखद अनुभूति देते हैं। एक शिक्षक के बतौर यह मेरी शुरुआत है, जिसमें मुझे इस प्रक्रिया पर आधारित कक्षा में काम करने, और बच्चों के सीखने के प्रतिफलों को हासिल करने का आत्मविश्वास आया है। इस आत्मविश्वास को मैं अपनी प्रक्रियाओं में शामिल करूँगी।

रंजीता वर्मा शासकीय कन्या माध्यमिक शाला बसाहरी, खुरई, ज़िला सागर में कार्यरत हैं। वे विगत 18 वर्षों से अध्यापन कार्य कर रही हैं। उन्हें बच्चों को कहानी, कविता और गतिविधियों के माध्यम से पढ़ाने में विशेष रुचि है। वे अपने पढ़ने-पढ़ाने के अनुभवों को लिखती रहती हैं, और उन्हें अपने साथी शिक्षकों के साथ साझा करती हैं।

सम्पर्क : ranjeeta2705@gmail.com

लेखन में सहायक एक गतिविधि : डायरी लेखन

प्रतिभा शर्मा

बच्चों को लिखना सिखाने के लिए हम कई तरीक़े अपनाते हैं। लेखिका ने डायरी लेखन को ज़रिया बनाते हुए बच्चों को लिखना सिखाने की कोशिश की। डायरी लेखन की शुरुआत कैसे हुई; कैसे बच्चे इस प्रक्रिया में सीखते चले गए; किन मुद्दों पर उन्हें बच्चों से बातचीत करनी पड़ी; कब और किस तरह का सहयोग उन्होंने बच्चों को उपलब्ध करवाया? इन सभी बिन्दुओं पर विचार इस लेख में प्रस्तुत हैं। -सं.

जब कोरोना नामक संक्रामक बीमारी के डर से सभी काम-धन्धे, संस्थाएँ कुछ दिनों के लिए बन्द हो गई थीं, हम अज़ीम प्रेमजी स्कूल के शिक्षकों ने मिलकर यह तय किया कि बच्चों के लिखने-पढ़ने के क्रम में बाधा नहीं आनी चाहिए। हमने बच्चों से सम्पर्क किया और तय किया कि छोटे समूहों में बच्चों के साथ काम करें। यह बच्चों के मिश्रित समूह थे। उनके लिए पढ़ने की पाठ्यपुस्तकों से इतर पुस्तकालयों से किताबों की छँटनी करने का काम शुरू किया। छँटनी करते वक़्त बच्चों के कक्षा स्तर के अनुरूप किताबों का बँटवारा किया गया। ये बँटवारा या छँटनी कक्षा स्तर के अनुरूप तो थी ही, साथ में इसमें कक्षावार बच्चों के स्तर का भी सूक्ष्म रूप से ध्यान रखा जा रहा था। हमने बच्चों के लिए *बरखा* सीरीज़ की किताबों का चयन किया। इस सीरीज़ में चार स्तर और पाँच विषयवस्तुओं के अन्तर्गत चालीस किताबें हैं। इस तरह की किताबों का चयन इसलिए किया गया क्योंकि इनसे सभी बच्चों की ज़रूरतें पूरी होती हैं। बच्चा किसी भी स्तर का हो उसके लिए इनमें कुछ ख़ास है। इनमें बच्चों के स्थानीय-देशी खेलों से लेकर साधारण पारिवारिक दिनचर्या का विवरण भी है जो उन्हें किताबों से जुड़ने में मदद करता है। इससे हर बच्चा अपनी समझ के हिसाब से जो पढ़ा है, अपने दोस्तों से साझा करता है। इस तरह पढ़ने की गतिविधि से हर बच्चा जुड़ता चला जा रहा था और पढ़ने की गति को लेकर हर शिक्षक को सन्तुष्टि मिलने लगी थी। अब सवाल लिखने की गतिविधि को लेकर था।

बच्चों के लेखन पर काम

सबसे पहले ज़रूरत कुछ ऐसी गतिविधि के चयन की थी जिसमें सभी कक्षा स्तर के बच्चे बराबरी से रुचि के साथ भाग ले सकें।

लेखन की गतिविधि ऐसी हो जिसमें हर बच्चा अपनी रुचि और स्तर के हिसाब से स्वयं

प्रेरित रहकर तो लिखे ही, साथ में लेखन कौशल के विभिन्न आधारों, यथा– लेखन की तारतम्यता, क्रमबद्धता, रचनात्मकता, कल्पनाशीलता और तार्किकता, को भी बेहतर तरीक़े से समझे। इसी आधार पर सामान्य और साधारण प्रक्रिया 'दिनचर्या लेखन' को इन छोटे समूहों में शुरू किया गया। यहाँ विषयों का कोई बन्धन नहीं था। और तो और, कक्षा जैसा कोई दायरा भी नहीं था क्योंकि मिश्रित समूह बने थे। इन समूहों में कक्षा 3 से 8 तक के सभी बच्चे थे। उन्हें सिर्फ़ दिनभर की दिनचर्या को ही लिखना था, और आजकल उनके दिन कैसे बीत रहे हैं; उन्होंने किस किताब से क्या पढ़ा है; कुछ ख़ास घटित हुआ क्या; जैसे विषयों को ही अपने ज़ेहन में रखना था। बच्चों को निर्देश दिए गए कि अब सभी बच्चे अपने लिए एक डायरी बनाएँगे। वे उसे सुन्दर तरीक़े से सजा भी सकते हैं। रोज़ाना डायरी लिखने से पहले उसमें उस दिन की तारीख़ और शीर्षक भी देना होगा। बच्चों ने इन सभी बातों पर सहमति जताई। बच्चों ने अपनी-अपनी डायरी तैयार की, रंगीन कवर-जिल्द चढ़ाकर उसे सुन्दर बनाया, और फिर दिनचर्या लेखन का काम करना शुरू किया। यह काम उनके लिए बोझिल नहीं था क्योंकि जब वो लिखने बैठते थे, उनके पास वो पल और एहसास थे जिनको उन्होंने जी लिया था। इसलिए अब उनके लिए लिखना किसी विषय में बँधकर लिखने से परे आज़ादी से, और मनमाफ़िक़ लिखने से जुड़ा हुआ था। बच्चे जो लिखकर लाते उसको सभी के साथ साझा करना हमारा आगे का काम था। आमतौर पर बच्चे अपने लेखन को सबसे साझा करते थे, पर कुछ बच्चे ऐसे भी थे जो अपनी डायरी में लिखे मुद्दों को साझा नहीं करना चाहते थे। इसका कारण उनके घर की परिस्थितियाँ थीं जिनमें किसी बच्चे के पिताजी का घर के माहौल को बिगाड़ना था, वहीं किसी के कुछ निजी मुद्दे थे जिनका ब्यौरा देना बच्चों ने उचित तो नहीं समझा, पर लिखा। यहाँ एक चुनौती उभरकर आई।

जब कक्षा के कुछ बच्चों ने आवाज़ उठाई कि सबको अपने काम को साझा करना है, तब मैंने डायरी के प्रकारों पर बात शुरू की। इसमें निजी डायरी और दैनन्दिनी के अन्तर पर बच्चों से बातचीत हुई। इस मुद्दे पर बातचीत के अंश यहाँ प्रस्तुत कर रही हूँ :

मैं : बच्चो, आप अपनी सभी बातें और मन के भावों को सब लोगों से कह सकते हैं क्या?

बच्चे : नहीं दीदी, कुछ बातें हम अपने दोस्तों से ही कहते हैं।

मैं : ऐसा क्यों?

बच्चे : दीदी, सब बातों से सबको मज़ा थोड़ी आता है।

मैं : मतलब! मैं समझी नहीं।

बच्चे : दीदी, हम गपशप करते हैं। कभी-कभी चुपके से बहुत घण्टे खेलने की योजना बनाते हैं। अगर वो सबको पता चल जाए तो हमको कोई खेलने थोड़ी दे।

मैं : क्यों नहीं खेलने देते? खेलना तो अच्छा है न!

बच्चे : अरे दीदी, सारे दिन कौन खेलने देगा! घर पर और स्कूल में काम भी तो करना पड़ता है।

मैं : हाँ, ये बात तो तुम्हारी सही है। तो देखो, तुम्हारी इस बात से मुझे ये समझ आया कि कुछ बातें आपकी निजी हैं, जैसे– खेलने की कोई योजना। इसे आप सबको बताना नहीं चाहोगे।

बच्चे : हाँ दीदी!

मैं : क्या घर की या आपके जीवन की कुछ बातें और हैं जिन्हें आप ख़ुशी-ख़ुशी सबके साथ बाँटना / साझा करना चाहते हो?

एक बच्ची : हैं न दीदी! जैसे मेरे भाई हुआ उसकी बात मैं सबको बताऊँगी।

मैं : और...

एक बच्चा : मेरे घर में अगर नई गाड़ी आएगी तो मैं मिठाई दूँगा और सबको बताऊँगा।

मैं : और कोई बात बताओ।

एक बच्चा : दीदी, मैं पढ़ाई में अच्छा रहूँगा तो सबको बताऊँगा।

सभी बच्चे : अरे दीदी, हम अपनी अच्छी बातों को सबको बताते हैं जिससे सब ख़ुश रहें।

मैं : कौन-सी बातें ऐसी हैं जिन्हें आप सबको नहीं बताते?

सभी बच्चे : जिनसे कोई ख़ुश नहीं होता, या जिनको कहने से हम भी दुखी होते हैं। जैसे– किसी के घर की लड़ाई की बात, मारने-पीटने की बात, किसी के मरने की बात... इनमें अच्छा नहीं लगता।

इसी तरह से जब हम डायरी लिखते हैं, उसमें भी दो तरह की बातें होती हैं। कुछ जो हम सबको कह सकते हैं, माने सार्वजनिक रूप से कह सकते हैं, और कुछ जिन्हें लिखकर सिर्फ़ हम अपने मन को हल्का करते हैं। जब हम परेशान हों, अपनी बात किसी से न कह पाएँ तब डायरी लिख लें। हो सकता है हमें लगे, हमने अपनी बात को किसी से कह दिया है। इस तरह की बातचीत से बच्चे डायरी लेखन और उसके साझाकरण के भेद को समझ चुके थे। यहाँ उनके साथ डायरी के और भी प्रकारों की बात हुई। इनमें शिक्षकों के द्वारा बनाई जाने वाली योजना डायरी, किसी व्यापारी के लिए अपने कामों को ध्यान रखने के लिए बनाई जाने वाली डायरी, घर में मम्मी-पापा द्वारा घर के सामानों, दूध का हिसाब रखने, अख़बार, बिजली, पानी के हिसाब की डायरी, मकान बनाने वाले ठेकेदार की डायरी (क्योंकि मकान

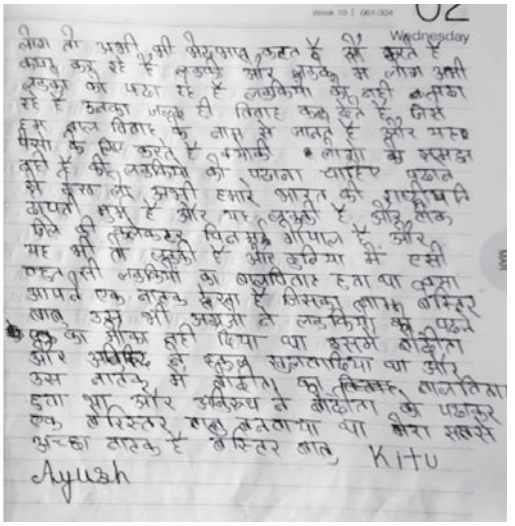

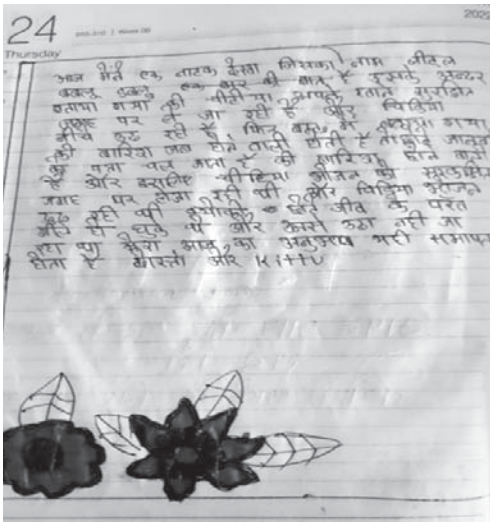

बनाने का काम बमोर में अधिक किया जाता है), आदि का ज़िक्र किया गया। ये सूचीकरण मैंने और बच्चों ने मिलकर किया।

डायरी के प्रकारों की बात के बाद, काम को विभाजित करने की सोच के साथ अगली कक्षा की योजना बनाई गई। इसमें प्राथमिक और उच्च प्राथमिक बच्चों की दिनचर्या साझाकरण से आगे अनुभव लेखन तक ले जाना था। अब यहाँ भी हमारे सामने एक चुनौती थी। अभी ज़्यादातर बच्चे दिनचर्या को ही साझा कर रहे थे। जैसा कि मैंने बताया, ये मिश्रित समूह थे जिनमें प्राथमिक और उच्च प्राथमिक के बच्चे शामिल थे, लेकिन प्राथमिक और उच्च प्राथमिक के लेखन में कोई बड़ा अन्तर नज़र नहीं आ रहा था। इसलिए पहले हर स्तर समूह के लेखन को मौखिक रूप से बच्चों को सुनाया गया, और उसपर पूछा गया कि क्या उनको दिनचर्या लेखन के स्तर पर कुछ अन्तर लग रहा है। इसे सुनने के बाद सभी को ये तो समझ आ ही गया था कि सब एक जैसी शैली में ही लिख रहे हैं। अब आगे का काम कुछ ख़ास बातों को लिखने का था। माने, सोचकर लिखने के लिए ख़ुद से कोई सन्दर्भ ध्यान रखने थे। यहाँ सोचनाभर ही प्रक्रिया का हिस्सा नहीं था, बल्कि लिखने के लिए रचनात्मक भी बनना था। इसी सोच को विकसित करने के लिए उन्हें अब पुस्तकालय की किताबों से चुने हुए डायरी के अंश पढ़ने के लिए दिए गए। इनमें *एन फ्रैंक की डायरी, दिनकर की डायरी, निराला की डायरी, डायरी के पन्ने,* आदि मुख्य थे। इनके साथ-साथ बच्चों के द्वारा पढ़ी जाने वाली कहानी की किताबों से पढ़े अंशों के कुछ ख़ास हिस्सों के विषय में लेखन की बात को अपनी योजना का हिस्सा बनाया गया।

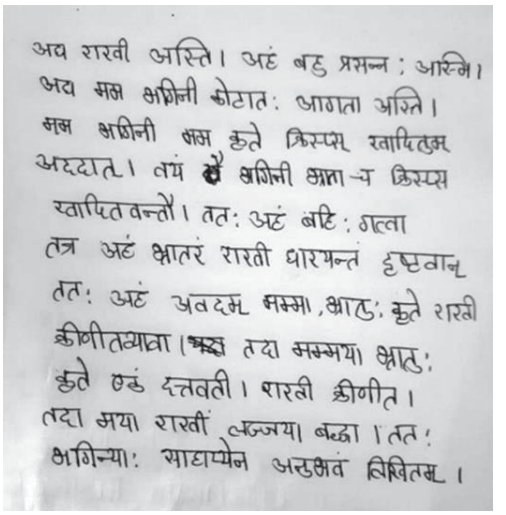

डायरी लेखन में अब बच्चों के निजी अनुभवों के साथ-साथ पठित पुस्तकों के अंश, कहानी के पात्रों की विवेचना, कुछ ख़ास घटनाओं की बात, किसी जगह घूमने / यात्रा का वर्णन, अपने जन्मदिवस को मनाने का अनुभव, किसी ख़ास दोस्त को अपनी भावनाएँ बताना, अपने पालतू जानवर की यादों को दर्ज करना, आदि लेखन में आने लगे थे। यहाँ प्राथमिक स्तर के कुछ बच्चे ऐसे भी थे जिनको अभी लिखना कम आता था, पर वे एक-दो लाइन लिखकर चित्रात्मक

अद्य राखी अस्ति। अहं बहु प्रसन्नः आस्मि।
अद्य मम भगिनी कोटातः आगता अस्ति।
मम भगिनी मम कृते क्रिस्पस् खादितुम्
अददात्। वयं भगिनी भ्राता च क्रिस्पस
खादितवन्तौ। ततः अहं बहिः गत्वा
तत्र अहं भ्रातरं राखी धारयन्तं दृष्टवान्
ततः अहं अवदम् मम्मा, भ्रातुः कृते राखी
क्रीणीतव्या। तदा मम्माया भ्रातुः
कृते एकं दत्तवती। राखी क्रीणीत।
तदा मया राखीं भ्रज्जया बद्धा। ततः
भगिन्याः साहाय्येन अनुभवं लिखितम्।

तरीक़े से अपनी बात कहने को तैयार रहते थे। जब उनको लिखने के लिए काम दिया जाता, वे चित्र बनाने की इच्छा ज़ाहिर करते थे। उच्च प्राथमिक कक्षा स्तर के भी बहुत-से बच्चे अपनी डायरी में चित्र बनाने के साथ अपने विचारों और अनुभवों को अभिव्यक्त करते थे। इससे मेरी योजना में निहित उद्देश्य भी धीरे-धीरे पूरे हो रहे थे। डायरी लेखन से पढ़ना-लिखना सिखाने, और जिनको पढ़ना-लिखना आता है उनके पढ़ने-लिखने को दुरुस्त करने के साथ-साथ और भी उद्देश्य इस प्रक्रिया में निहित थे, जो इस प्रकार थे :

- स्वतंत्र लेखन के लिए अवसर देना;
- बच्चों को पुस्तकालय से जो किताबें दी गई हैं उनके मुख्य बिन्दुओं, पात्रों, घटनाओं को समझते हुए अपने-आप से जुड़ाव बनाते हुए अनुभवों को लिखना;
- बच्चों को चित्रात्मक-रचनात्मक लेखन के अवसर देना;

- विभिन्न विधाओं की कलात्मकता और रचनात्मकता को समझते हुए उनकी शैली से परिचित होने का मौक़ा देना;
- लेखन की जटिल प्रक्रिया को रुचिपूर्ण बनाना; आदि।

इन सभी बिन्दुओं पर बच्चों का ध्यान आकर्षित करने के लिए उनके साथ मिलकर भी काम किया। कभी उनसे कहा कि आज सभी कक्षा में बैठकर ही अपनी डायरी लिखेंगे। उनके साथ बैठकर मैंने भी डायरी लिखी, और उनसे साझा की। इस तरह, हर दिन कुछ नया जोड़ते हुए इस काम को आगे बढ़ाया जाने लगा। एक दिन मैंने बच्चों को आँखें बन्द करने को कहा, और उन्हें ऑडियो से संगीत की मधुर धुन सुनाई। यह धुन मॉर्निंग रागा से सम्बन्धित थी। इसके पीछे उद्‌देश्य था– अपने मन के भाव या अनुभव को लिखने का अभ्यास करना। जब धुन पर बात करना शुरू किया, और जानना चाहा, कुछ बच्चों के अनुभव ऐसे थे कि उन्हें तो कुछ महसूस ही नहीं हुआ! मैं एक बार तो आश्चर्यचकित और सकते में थी कि अब कैसे इनको फ़ीलिंग्स या भावों को महसूस करना सिखाऊँ। फिर दूसरे बच्चे से उसके अनुभव को सुना। उसने बताया कि उसे संगीत सुनकर लग रहा था जैसे दूर पहाड़ों के ऊपर से चिड़ियाँ उड़कर कहीं जा रही हैं, और नीचे कहीं झरना बह रहा है। इसी तरह एक अन्य बच्चे ने उसी धुन पर कुछ अलग-सा अनुभव सुनाया। उसने कहा कि एक बच्चा स्कूल जाने को तैयार हो रहा है, और अपनी मम्मी से उसे स्कूल छोड़कर आने की ज़िद कर रहा है। किसी ने बताया कि बहुत-से मज़दूर काम पर निकल रहे हैं। अब मैंने बच्चों के साथ फिर से बातचीत शुरू की। उनसे बात करते हुए मैंने कहा, "ज़रूरी नहीं, हमें सब देखकर कुछ अनुभव हो, और हम लिखने लगें। कभी हमें कुछ सामान्य बात भी लग सकती है। यानी, अनुभव के लिए बाध्यता नहीं है। इसलिए डायरी को भी बिना बाध्यता के लिखना ही बेहतर है।" आज की कक्षा से मुझे भी यह महसूस हुआ कि हर व्यक्ति अपने-आप में ख़ास है। उसके विचार करने, अभिव्यक्त करने के तरीक़े और महसूसियत अलग-अलग और अपने-आप में अनूठी होती है। इसलिए बच्चों के लिए स्वतंत्रता का ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है ताकि वो अपनी गति और सोच-समझ के साथ आगे बढ़ सकें। बच्चों की समझ को आधार बनाकर उन्हें सीखने के मौक़े देने होंगे। इस तरह से बच्चे अब जब उन्हें कुछ ख़ास लगता है तब कुछ अनोखा लिखते और उसे साझा करते हैं। यहाँ से सुनते हुए और डायरी के अंश पढ़ते हुए उनकी डायरी में अब अनुभव आने लगे थे। कुछ बच्चे किताबों से जुड़े

मम दिनचर्या
अहं प्रातकाले षड्वादने उत्तिष्ठामि
दैनिक कार्यात निवृत्य: विद्यालयाय
सज्जी भूत्वा। अहं विद्यालयम
गच्छामि। यतु: वादने गृहमागत्य।
अहम भोजनम कुर्म। अहं
कारवेल्लम शाकानि खादामि।
सप्तवादनपर्यन्त गृहकार्यम्करामि
सप्त सार्ध वादनम अहं
चलचित्राणी पिबती। अष्ठ वादने
गृहसदस्यें सत्रिभोजनम् करोमि
गृहसदस्ये: सहवार्तालाप करोमि
तदनतरं शयन।

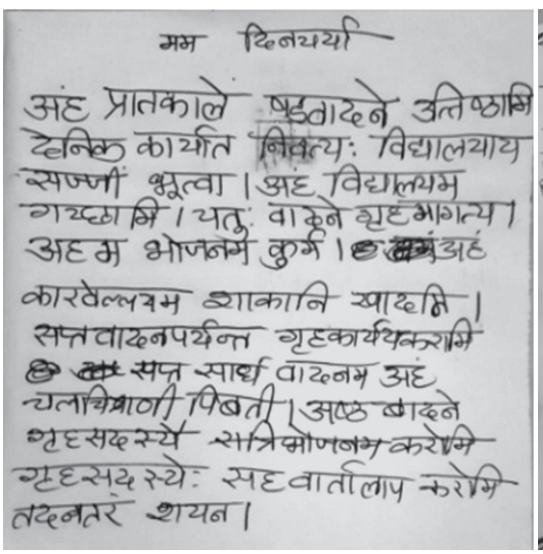

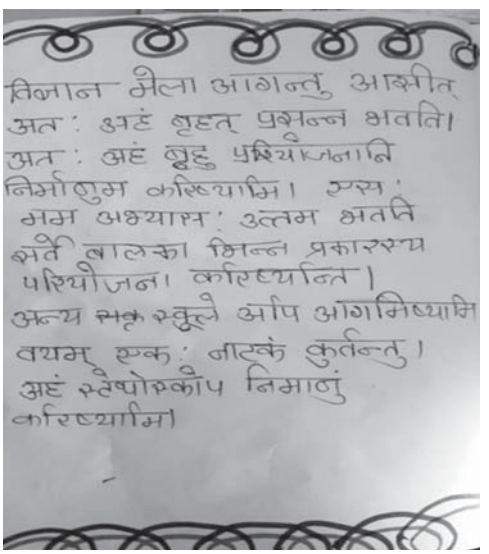

विज्ञान मेला आगन्तु आसीत
अत: अहं बृहत् प्रसन्न भवति।
अत: अहं बृहु प्रयोजनानि
निर्माणम करिष्यामि। एस:
मम अभ्यास: उत्तम भवति
सर्वे बालका भिन्न प्रकारस्य
परियोजना। करिष्यन्ति।
अन्य स्कूले अपि आगमिष्यामि
वयम् एक: नाटके कुर्वन्तु।
अहं स्टेथोस्कोप निर्माणं
करिष्यामि।

अनुभव लिखते थे, वहीं कुछ पात्रों के चरित्र की ख़ास बातों का ख़ुलासा करते थे। इस तरह से अब औसत बच्चे दिनचर्या लेखन से अनुभव लेखन पर आ गए थे। यह उनकी शब्दों के चयन की शक्ति, कल्पनाशक्ति, बिन्दास विचार अभिव्यक्ति को सशक्त बनाने के लिए पर्याप्त साधन का काम कर रहा था। अब बच्चे लगभग रोज़ाना लिख रहे थे।

स्कूल खुलने के बाद

स्कूल खुलने के बाद भी बच्चे डायरी लिख रहे थे, पर अब प्रतिदिन केवल 4-5 बच्चों की डायरी ही साझा हो पाती थी। हमने इस अभ्यास को यथावत रखने के लिए स्कूल स्तर पर बात की, और सप्ताह में एक दिन लिखी गईं डायरियों से कुछ ख़ास पन्ने बालसभा में साझा करने का प्रयास किया। शनिवारीय बालसभा में हम सभी बच्चों की डायरियों के साझा किए जा सकने वाले कुछ ख़ास पन्ने डिस्प्ले बोर्ड पर सजाते। इस प्रक्रिया में सभी बच्चे शामिल हो रहे थे, और लेखन का लगातार स्वतंत्र अभ्यास करते जा रहे थे।

अब इसी तरह का अभ्यास दूसरी भाषाओं में भी होने लगा है। इसमें हमारी तीसरी भाषा संस्कृत भी शामिल है। वर्तमान में बच्चों की रुचि संस्कृत में डायरी लेखन के प्रति जागृत की जा रही है। हिन्दी और संस्कृत शिक्षिका के रूप में मेरी ज़िम्मेदारी है कि मैं इस प्रयास को लगातार आगे बढ़ाती चलूँ, और भाषा में उनके लेखन को सहज और सरल बनाऊँ।

बच्चों द्वारा लिखी गई डायरी के कुछ पन्ने यहाँ संलग्न कर रही हूँ आप देखिए

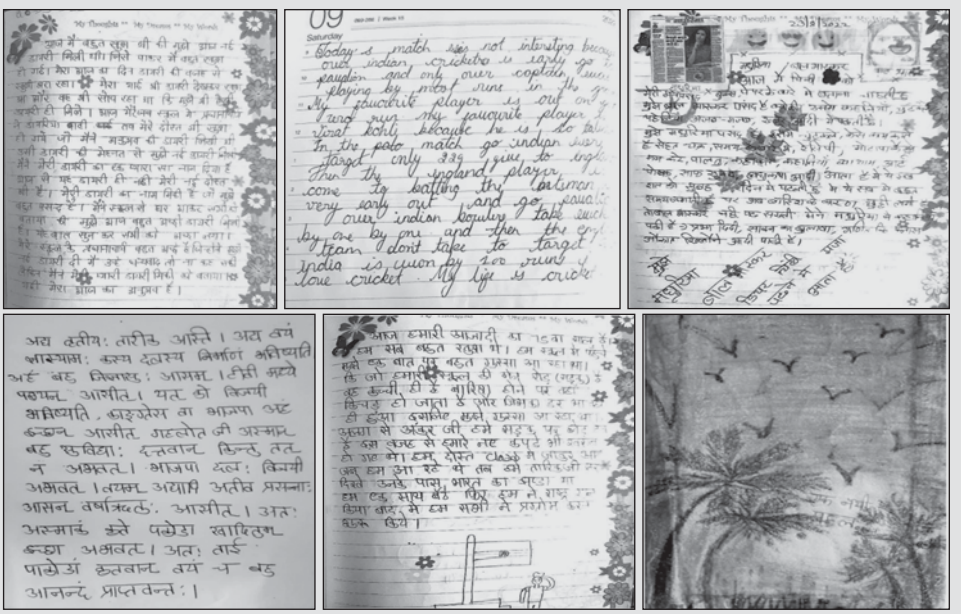

डॉ प्रतिभा शर्मा शिक्षा के क्षेत्र में 15 वर्ष से काम कर रही हैं। उन्होंने मानस गंगा सीनियर सेकेंडरी स्कूल (बोध शिक्षा समिति कूकस) में 6 वर्ष तक अध्यापन कार्य किया। प्रतिभा ने केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के जयपुर परिसर से संस्कृत भाषा में पीएचडी और बीएड की शिक्षा प्राप्त की। संस्कृत विषय पर लिखे उनके कई लेख संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं में छप चुके हैं। शिक्षा सम्बन्धी लेख 'टीचर्स ऑफ़ इंडिया' पोर्टल पर भी प्रकाशित हुए हैं। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी स्कूल टोंक, राजस्थान में अध्यापन कार्य कर रही हैं।

सम्पर्क : pratibha.sharma@azimpremjifoundation.org

विद्यार्थियों को रचनात्मक रूप से व्यस्त रखना
एक कला, एक संस्कृति

श्रीदेवी

स्कूल से जुड़ी ग़ैर-अकादमिक व्यस्तताओं के चलते कई बार शिक्षक कक्षा में पूरा समय नहीं दे पाते। ऐसी परिस्थितियों से निपटने के लिए एक स्कूल के शिक्षकों ने सोचा कि क्यों न बड़ी कक्षाओं के विद्यार्थियों की मदद ली जाए। इस मदद के लिए उन्होंने विद्यार्थियों से बात भी की, और उन्हें सक्षम भी बनाया कि वे छोटी कक्षा के विद्यार्थियों की मदद कैसे कर सकते हैं। यह लेख इन बिन्दुओं को भी पुख़्ता करता है कि विद्यार्थी एक दूसरे की सीखने में मदद कर सकते हैं। इस तरह एक दूसरे की सीखने में मदद करने की प्रक्रिया में वे ख़ुद भी सीखते हैं। -सं.

सरकारी विद्यालय में शिक्षकों के पास कक्षा में शिक्षण के साथ-साथ कई सारे ग़ैर-शिक्षकीय कार्य भी होते हैं। इन कार्यों में आमतौर पर मध्याह्न भोजन के दस्तावेज़ जमा करना, बैंक जाना, और चुनाव का वर्ष है तो बीएलओ का कार्य, यूडाइस डाटा अपलोड करने जैसे कार्य शामिल हैं। शिक्षक जब तक कक्षा में होते हैं, विद्यार्थी उनके द्वारा दिए गए कार्यों को करते रहते हैं। जैसे ही शिक्षक कक्षा से निकलकर दूसरे कार्य कर रहे होते हैं, कक्षा में कोहराम मचने लगता है।

एक सरकारी विद्यालय के शिक्षक इसी बात का समाधान खोज रहे थे कि शिक्षक की अनुपस्थिति में भी विद्यार्थियों को रचनात्मक रूप से व्यस्त कैसे रखा जाए। पहला समाधान यह सोचा गया कि छोटी कक्षाओं में बड़ी कक्षा के विद्यार्थियों की दो टोली बनाकर भेजी जाएँ जो छोटी कक्षा के विद्यार्थियों को कोहराम मचाने से रोकें। अतः बड़े विद्यार्थियों की दो टोलियाँ छोटी कक्षाओं में गईं। बड़े विद्यार्थियों के पास इन विद्यार्थियों को चुप रखने के तो निर्देश थे पर उन्हें यह नहीं मालूम था कि इन्हें चुप कैसे कराएँ। इसलिए बड़ी कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थी छड़ी लेकर कक्षा में घूमने लगे। कभी-कभी वे छोटे विद्यार्थियों को एक-दो छड़ी लगा भी देते। इससे छोटी कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थी शिक्षकों के पास उन विद्यार्थियों की शिकायतें लेकर पहुँचने लगे।

शिक्षकों के लिए यह एक नई तरह की मुश्किल थी। विद्यालय में सज़ा और पिटाई तो

चित्र : प्रशांत सोनी

होनी ही नहीं चाहिए। इसका हल खोजने के लिए इस मुद्दे पर बड़े विद्यार्थियों से बातचीत की गई कि वे शिक्षक की अनुपस्थिति में जब भी कक्षा में जाएँगे तब क्या काम करेंगे।

चित्र : प्रशांत सोनी

सभी शिक्षकों ने मिलकर विचार किया कि ऐसे क्या-क्या काम हो सकते हैं जो ये बड़े विद्यार्थी छोटे विद्यार्थियों को करवा सकें। साथ ही बड़ी कक्षाओं के विद्यार्थियों की तैयारी का भी सवाल था, और उसके लिए बड़ी कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के साथ एक अलग स्तर पर कार्य करना था। इसके बाद बड़े विद्यार्थियों से यह बातचीत हुई कि वे क्या-क्या काम कर सकते हैं। पता चला कि वे बहुत-से काम कर सकते हैं। मसलन, कुछ विद्यार्थी पढ़ सकते थे, मन से लिख सकते थे, चित्र बना सकते थे, आदि। फिर उनसे पूछा गया कि जिस तरह से तुम मन से लिखते हो, चित्र बनाते हो, क्या यही कार्य अपने विद्यालय में पढ़ने वाले छोटी कक्षा के विद्यार्थियों से करवा सकते हो? आपको अगर उनसे कुछ लिखवाना हो, आप क्या-क्या करोगे? इन सवालों पर चर्चा की गई। विद्यार्थियों ने बताया कि वे चित्र बनाएँगे, शब्द लिखेंगे, और फिर छोटे विद्यार्थियों से पढ़ने के लिए कहेंगे।

शिक्षकों ने सुझाया कि विद्यार्थियों को बात करना पसन्द है। क्या कक्षा में गतिविधि करने के लिए बातचीत का कोई ऐसा खेल दिया जा सकता है जिसे हम पहले बड़े विद्यार्थियों को सिखाएँ, और वे अपने छोटे दोस्तों के साथ कर पाएँ?

बड़ी कक्षा के विद्यार्थी छोटे विद्यार्थियों से उनके द्वारा पढ़ी गई कविता या कहानी पर चर्चा करें, और उन्हें चिन्तन के प्रश्न दें। वे अपने बनाए कुछ चित्रों और पढ़ी हुई कहानी पर विचार करें। शिक्षकों के द्वारा समय-समय पर किए जाने वाले रचनात्मक कार्यों को भी बड़ी कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के सहयोग से दूसरी कक्षाओं में किया जा सकता है। जैसे–

1. आज हम आइसक्रीम पर बात करेंगे। किस-किस को आइसक्रीम खाना पसन्द है, और क्यों? आइसक्रीम का एक चित्र बनाएँगे। पिछली बार आपने आइसक्रीम कब खाई थी? इसपर बात कर सकते हैं;
2. आज हम अन्त्याक्षरी खेलेंगे, और अपने-अपने बोले गए शब्दों को लिखेंगे;
3. आज किताब के चित्रों पर बात करेंगे;
4. आज हम अपनी एक कविता सुनाएँगे; आदि।

बड़े विद्यार्थियों ने इस तरह के काम छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों के साथ किए। इन गतिविधियों से विद्यालय में छड़ी से पिटाई पूरी तरह से समाप्त हुई, और सीखने-सिखाने का माहौल बनने लगा। इस प्रक्रिया में छोटे विद्यार्थी कम और बड़े विद्यार्थी ज़्यादा सीखने लगे। शिक्षक जब कक्षा में होते वे किताब पढ़ाते, और जब नहीं होते बड़े विद्यार्थी छोटी

कक्षाओं में शिक्षकों के द्वारा बताई गईं गतिविधियाँ करवाते। इनमें किसी खेल को कक्षा में खेलना और उसके बारे में लिखना, किसी अभ्यास पत्रक को पूरा करना, कविता गाना, आदि गतिविधियाँ शामिल थीं। इन गतिविधियों को नियमित रूप से करने के कारण बड़ी कक्षा के ऐसे विद्यार्थी भी पढ़ना सीखने लगे जिन्हें ज़्यादा पढ़ना नहीं आता था। इस तरह, छोटे विद्यार्थियों के साथ काम करने से बड़ी कक्षा के विद्यार्थियों के शैक्षणिक स्तर में भी सुधार हुआ। इस प्रक्रिया के कारण कक्षा चार और पाँच के 35 में से लगभग 25 विद्यार्थी पढ़ना सीख गए थे। उनका ख़ुद के प्रति विश्वास बढ़ा, और वे छोटे विद्यार्थियों के साथ बातचीत करना सीख पाए।

विद्यार्थी चाहे जिस परिवेश में रहते हों उनपर उनके आसपास की घटनाओं का सीधा प्रभाव पड़ता है। यह बात हम सब बेहतर तरीक़े से जानते हैं। इन घटनाओं का विद्यार्थी क्या अर्थ निर्मित करते हैं, ये इस बात पर निर्भर करता है कि उनके आसपास के वयस्क, उनके दोस्त, आपस में क्या और किस तरह की बात करते हैं।

इस बारे में विचार करने पर मुझे लगा कि विद्यार्थी चाहे जिस परिवेश में रहते हों उनपर उनके आसपास की घटनाओं का सीधा प्रभाव पड़ता है। यह बात हम सब बेहतर तरीक़े से जानते हैं। इन घटनाओं का विद्यार्थी क्या अर्थ निर्मित करते हैं, ये इस बात पर निर्भर करता है कि उनके आसपास के वयस्क, उनके दोस्त, आपस में क्या और किस तरह की बात करते हैं। जो व्यवहार विद्यार्थियों के साथ होता है, ज़्यादातर विद्यार्थी उसी व्यवहार को रिपीट करते हैं। विद्यालयों में शिक्षकों का ज़्यादातर समय इस बात को सुलझाने में निकल जाता है कि किसने, किसको और क्यों मारा; किसकी किताब या पेंसिल किसने ले ली है; आदि। इन मुद्दों को सुलझाने का कोई मानक तरीक़ा नहीं है। इसके लिए एक सुलझे हुए व्यक्ति की तरह विद्यार्थियों से लगातार बात करते रहना ज़रूरी है। इन सबमें बुनियादी मसला यह भी है कि हम शिक्षक इन समस्याओं के बारे में क्या और कितना जानते हैं; इन मुद्दों की वजहें कहाँ हैं; क्या ये वजहें उस तत्काल हुए मसले में हैं या हमारे सामाजिक-पारिवारिक परिवेश में ही कहीं निहित हैं?

इसके साथ ही यह भी कि कक्षा में किसी घटना के होने के बाद शिक्षक के निर्णय पर भी बहुत कुछ निर्भर करता है। शिक्षक भी कक्षा में हुए किसी विवाद पर जल्दी-से-जल्दी अपना निर्णय सुनाकर उस बात को समाप्त कर देना चाहते हैं। शिक्षकों की अपनी तल्लीनता है। उनकी भी कुछ तय ज़िम्मेदारियाँ हैं। कक्षा में भाषा, गणित और पर्यावरण का अध्यापन ज़्यादा ज़रूरी है। इसके साथ-साथ हम विद्यार्थी को एक अच्छा सोचने-समझने वाला इंसान भी बनाना चाहते हैं। आज का स्कूल का यह विद्यार्थी कल का एक नागरिक है। उसके सामने विद्यालय और समाज से जिस तरह के व्यवहार बार-बार सामने आएँगे, और उसके साथ जिस तरह का न्याय होगा वे उसे ही अपना बुनियादी विश्वास बनाएँगे।

श्रीदेवी ने पण्डित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर से साहित्य और अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की है। पिछले पन्द्रह वर्षों से प्राथमिक शिक्षा में भाषा शिक्षण के क्षेत्र में कार्य कर रही हैं। प्रमुख रूप से शिक्षक-शिक्षा, बाल साहित्य, और प्रारम्भिक साक्षरता में रुचि है। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, रायपुर (छत्तीसगढ़) में कार्यरत हैं।

सम्पर्क : sreedevi@azimpremjifoundation.org

कल्पना के लोक से आलोकित होता *तारिक का सूरज*

प्रतिभा कटियार

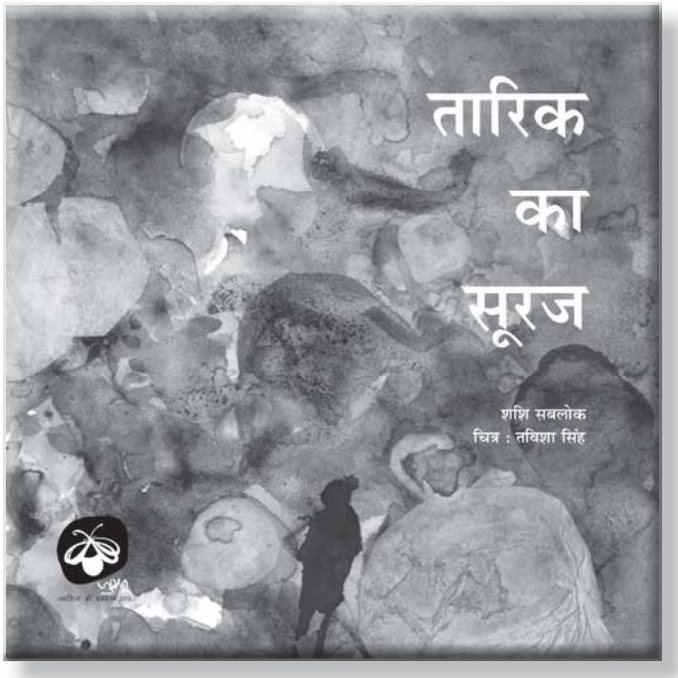

तारिक का सूरज

लेखिका : शशि सबलोक

प्रकाशक : जुगनू प्रकाशन

तारिक का सूरज एक ऐसी कहानी है जो कल्पना के कैनवास पर अपने मन की दुनिया गढ़ती है। ऐसी दुनिया जहाँ हर समय रोशनी है। *तारिक का सूरज* दुनिया को थोड़ा ज़्यादा रोशन करती है।

कहानी कुछ यूँ है कि तारिक को भी बाक़ी बच्चों की तरह खेलना बहुत पसन्द है, और उसका खेलना निर्भर है दिन पर। सूरज डूबा, रात हुई, और खेल बन्द। शाम होते ही अम्मी की पुकार, कि तारिक शाम हो गई आ जाओ, पढ़ाई करो, खाना खाओ, सो जाओ, के अनकहे निर्देश जो तारिक को ख़ास पसन्द नहीं। तारिक तो रात में भी खेलना चाहता है इसलिए उसे रात में सूरज की कमी खलती है। अब तारिक कर भी क्या सकता है! एक रोज़ यूँ ही वो काग़ज़ पर गोदा-गादी करते हुए सोचने लगा कि काश! रात में भी सूरज उगता तो उसे खेलने को और समय मिलता। यह सोचते-सोचते तारिक काग़ज़ पर सूरज बना देता है, और वो सूरज रात को चमकने लगता है। यही है इस कहानी की नई दुनिया।

तारिक का सूरज पढ़ते हुए हम कल्पना की एक ऐसी दुनिया में जा पहुँचते हैं जहाँ दुनिया के सारे बड़े और समझदार लोगों को पहुँच ही

जाना चाहिए, क्योंकि असल में तो हम सबके भीतर भी एक तारिक है जो कहीं खो गया है।

कल्पना, तर्क और संवेदनशीलता के बीच का समन्वय बनाती यह बाल कहानी बच्चों के लिए कल्पना के नए द्वार खोलती है। संवेदना के ऐसे महीन रेशे हैं इस कहानी में कि सूरज रात को उगे तो किसी को परेशानी भी न हो। तो कैसे सँभाल लिया जाए यह सब! यहाँ काम आती है तारिक की तरक़ीब।

किसी भी मनःस्थिति में पाठक इस कहानी के पन्ने पलटें, कहानी से गुज़रते हुए वे एक ख़ामोशी से भर उठेंगे। ऐसी ख़ामोशी जो दुनियादारी की तमाम पेचीदगियों से दूर ले जाती है।

इस छोटी-सी कहानी में बड़ी-सी दुनिया के तमाम बड़े-बड़े सवालों के जवाब मिलते दिखते हैं। जितनी बार इस कहानी को पढ़ते हैं, एक सँवरी हुई दुनिया का ख़्वाब मुस्कुराता नज़र आता है।

नन्हा तारिक रात में भी खेलने की ललक में अपने काग़ज़ पर बनाए सूरज को सेम की बेल पर टाँग देता है। बेल चढ़ जाती है आम के पेड़ पर, और उसका सूरज दिप-दिप करने लगता है। तारिक की दुनिया में अब रात में भी सूरज उगने लगता है।

तर्क कहता है कि भला रात को भी कहीं सूरज उगता है। लेकिन कल्पना के आकाश पर क्या नहीं हो सकता! पिछले दिनों आई फ़िल्म *स्काई इज़ पिंक* का एक संवाद याद आता है जिसमें माँ अपने बच्चे से कहती है, "अगर तुम्हारा स्काई पिंक है तो स्काई का कलर पिंक ही है। तुम्हें किसी के भी कहने से अपने स्काई का रंग बदलने की ज़रूरत नहीं है।"

शिक्षक जब बच्चों को कल्पनात्मक और सृजनात्मक होने के अवसर देते हैं, तब भी उसमें काफ़ी दीवारें खड़ी होती हैं। ये दीवारें सामाजिक संरचना के तमाम कारणों ने मिलकर

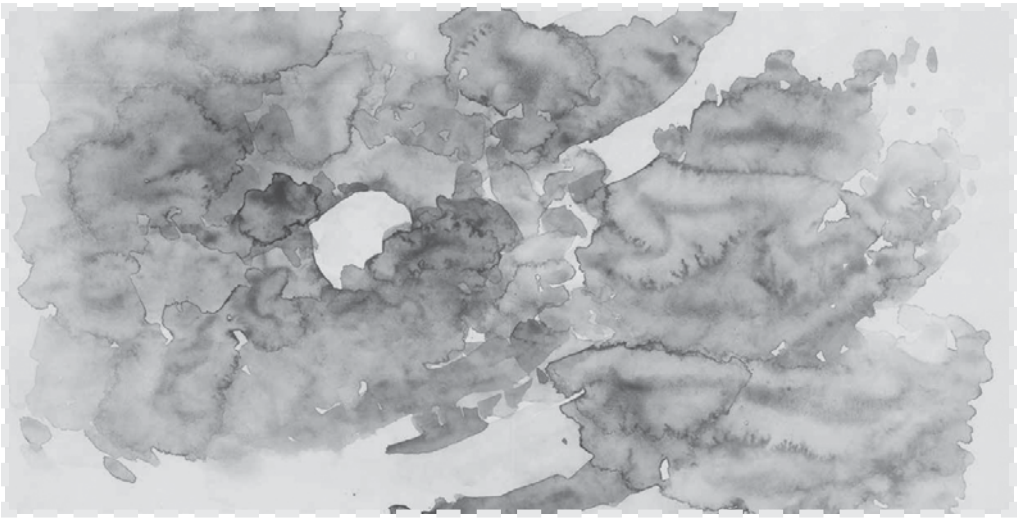

बनाई हैं जो खुलेपन को भी खुलने नहीं दे पातीं। ऐसे में, यह कहानी बताती है कि कहानियों में, कक्षा में मौजूद बच्चों के जीवन के अनुभवों को किस तरह पिरोना है, किस तरह उनका हाथ थामकर आगे बढ़ना है।

बात सिर्फ़ तारिक के सूरज के रात में भी उगने तक सीमित नहीं रहती है बल्कि उल्लू की परेशानी तक जा पहुँचती है। उल्लू जब रात में खाने की तलाश में निकलता है, वह रात में उगे सूरज के कारण परेशान होकर तारिक की खिड़की पर जा बैठता है।

मासूम तारिक ख़ुद के खेलने के लिए रात में सूरज तो चाहता है, लेकिन वो यह नहीं चाहता कि उल्लू भूखा रहे। वह उसे खाने के लिए दूध-रोटी देता है। अब यहाँ ठहरकर सोचने की बात यह है कि क्या यह सिर्फ़ उल्लू की या उसकी भूख की बात है। तारिक का उसे दूध-रोटी देना कितनी बड़ी रेंज खोलता है मासूमियत का हाथ थामे इस दुनिया को सँवार देने की।

उल्लू का यह कहना, "लेकिन मैं तो कीड़े खाता हूँ", तारिक को सोचने पर मजबूर कर देता है। ख़ुद के लिए कुछ चाहना क्या सिर्फ़ ख़ुद के लिए कुछ चाहना मात्र होना चाहिए। सवाल और जवाब दोनों इस नन्ही कहानी के बड़े-से फ़लक में समाए हैं।

रात को भी तो परेशानी है न सूरज के रात में उगने से। वो हवा से शिकायत करती है। हवा समझती है उसकी बात।

ये जो एक दूसरे को समझना, अलग होना स्वभाव में फिर भी सहगामी होना, अलग-अलग होकर भी साथ मिलकर सुन्दर दुनिया को

बनाने में, बचाने में अपनी भूमिकाओं को निभाना कितना ज़रूरी है, इसकी कहन है यह कहानी।

यह कहानी शिक्षकों को ढेर सारे अवसर उपलब्ध कराती है। वे इस कहानी के बहाने बच्चों के मन की दुनिया में क्या-क्या चलता है, कैसे वो सोचते हैं, क्या हो अगर जब वे जो सोचते हैं वो हो जाए तो, जैसे बिन्दुओं पर चर्चा कर सकते हैं। वे उन्हें सोचने, तर्क करने, कल्पना के आसमान में ऊँची उड़ान लेने को मुक्त कर सकते हैं।

"इस कहानी से यह शिक्षा मिलती है..." जैसे नीरस हो चुके वाक्य से दूर अगर इस कहानी के बारे में एक लाइन में कहें तो यह कहानी बच्चों को मज़ेदार और अपनी-सी लगने वाली कहानी है।

"दिन के सूरज में *तारिक के सूरज* की भी रोशनी है", यह पंक्ति हम सबके हिस्से की पंक्ति है। हम सबका होना कहाँ-कहाँ शामिल है। हमारे होने ने क्या इस दुनिया को ज़रा भी बेहतर बनाने में कोई भूमिका निभाई है? अगर नहीं, तो सोचने की ओर इशारा करता है तारिक का सूरज।

लेखिका शशि सबलोक ने क्या ही तरल और सरल गद्य का प्रयोग इस कहानी में किया है। कम शब्दों के उपयोग के साथ कैसे एक बड़ी दुनिया में गोता लगाया जाता है, यह इस कहानी में देखने को मिलता है।

तविशा सिंह ने सुन्दर चित्र बनाए हैं। उन्होंने कहानी के मर्म को जस का तस पकड़ा है। उन्होंने कहानी के चित्र वैसे ही बनाए हैं मानो तारिक ने बनाए हों। नन्हे मासूम हाथों की

लक़ीरों की छुअन महसूस होती है इन चित्रों में। अनगढ़पन का भी एक रंग होता है, उसकी भी एक ख़ुशबू होती है। लेकिन उसका उपयोग कम ही लोग कर पाते हैं। तविशा इन चित्रों को बनाते हुए सीधे तारिक के मन की दुनिया में प्रवेश करती हैं, और धीरे से उनकी उँगलियाँ तारिक की उँगलियाँ होने लगती हैं। कहानी के चित्र कहानी का विस्तार हैं। रंगों और लक़ीरों का लिखी गई कहानी से अच्छा सामंजस्य है।

तक्षशिला के अन्तर्गत जुगनू प्रकाशन ने इसे प्रकाशित किया है।

शिक्षकों को इस कहानी के ज़रिए कक्षा में काम करने के तमाम अवसर नज़र आएँगे। इस कहानी को बार-बार पढ़ने की ज़रूरत है। हर बार कुछ नई समझ, नए एहसास की परतें खुलती हैं। पढ़ते हुए हमें महसूस होगा कि आसमान में जो सूरज है उसमें तारिक के सूरज की रोशनी तो शामिल है ही, थोड़ी-सी हमारे मन के रोशन कोनों की ख़ुशबू और चमक भी है।

सभी चित्र तारिक का सूरज पुस्तक से साभार

प्रतिभा कटियार ने राजनीति शास्त्र में स्नातकोत्तर किया है। शुरुआत पत्रकारिता से करते हुए *स्वतंत्र भारत, पायनियर, हिन्दुस्तान, जनसत्ता, एक्सप्रेस* जैसे हिन्दी के अख़बारों में काम किया है। इसके बाद अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ जुड़कर उन्होंने शिक्षण को अपना करियर बनाया। *वह चिड़िया क्या गाती होगी* पत्र संकलन और *ख़्वाब जो बरस रहा है* व *चयनित कविताएँ* कविता संग्रह और *मारीना की जीवनी* किताब प्रकाशित हो चुकी है। अंडमान यात्रा पर लिखा यात्रा संस्मरण और कविता*ओ अच्छी लड़कियों* कर्नाटक के रानी चेनम्मा विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में शामिल हैं। उनकी दो कहानियों पर लघु फ़िल्मों का निर्माण हुआ है। उनकी कविताओं का गुजराती, मराठी और अँग्रेज़ी में अनुवाद हुआ है।

सम्पर्क : pratibha.katiyar@azimpremjifoundation.org

बच्चे स्कूल में रोज़ाना कुछ सीखकर जाएँ

शिक्षिका शगुफ़्ता बेग से सिद्धार्थ कुमार जैन की बातचीत

सिद्धार्थ : शगुफ़्ता, आपको क्यों लगा कि शिक्षक ही बनना चाहिए, अपने शिक्षकीय सफ़र के बारे में कुछ बताइए।

शगुफ़्ता बेग : मेरा 'जुनून' भारतीय सेना में जाने का था। लेकिन कुछ पारिवारिक परिस्थितियाँ ऐसी रहीं कि मैं वहाँ पर नहीं पहुँच सकी। मुझे मेरे स्कूल शिक्षक ने एक बात कही थी कि 'देश सेवा' का मतलब 'रक्षा' में ही जाना नहीं है, अगर आप कुछ ऐसा काम करती हो जिससे समाज में कुछ बदलाव आए, या समाज आपको देखकर प्रोत्साहित हो, वह भी सच्ची देश सेवा ही कहलाएगा।

मैं स्नातक की पढ़ाई के बाद शिक्षण कार्य से जुड़ी। मुझे शिक्षा में कार्य करते हुए 24 साल हो गए हैं। मैं अपने शिक्षकीय सफ़र को एक बेहतरीन अनुभव मानती हूँ। एक अच्छे शिक्षक को एक अच्छा शिक्षार्थी भी होना चाहिए। शिक्षक के लिए हर दिन, हर समय सीखते रहना बेहद ज़रूरी है। शिक्षक को अपने विषय में दक्ष होना चाहिए, लेकिन साथ-ही-साथ उसे शिक्षा और अन्य मुद्दों के बारे में पर्याप्त जानकारी ज़रूर होनी चाहिए। हम एक बच्चे के सर्वांगीण विकास की बात करते हैं तो पहले शिक्षक ख़ुद को भी बच्चों के विकास के लिए सक्षम बनाएँ।

मैंने अपने शिक्षकीय सफ़र की शुरुआत निजी स्कूल से की थी– एक मिडिल स्कूल शिक्षक के रूप में। और मुझे अच्छा लगा मिडिल स्तर पर पढ़ाना। मैं 2021 में शासकीय सेवा में आई। शासकीय सेवा में मेरा अनुभव तीन सालों का ही है। यक़ीन मानिए, यहाँ पढ़ाना चुनौतीपूर्ण है। शासकीय स्कूल में मुख्य रूप से शिक्षक ही अकेला होता है बच्चों को पढ़ाने के लिए। मैंने एक साल बैरसिया ब्लॉक के बेहद अन्दर बसे बागसी हाई स्कूल में पढ़ाया है। अभी शासकीय हायर सेकेण्डरी स्कूल में पढ़ाते हुए डेढ़ साल ही हुआ है।

सिद्धार्थ : अपने काम के दौरान ऐसी कौन-सी बातें हैं जो आपको अपना काम अच्छे से करने के किए प्रेरित करती हैं?

शगुफ्ता बेग : अच्छे काम करने का श्रेय मैं अपने स्कूल के शिक्षकों को देना चाहूँगी। गणित विषय पढ़ाने वाली पिल्लई मैडम और अँग्रेज़ी पढ़ाने वाले शिक्षक लालजी सर थे। ये दोनों शिक्षक इतने जुनूनी थे कि उनको देखकर मुझे लगता था कि शिक्षक हों तो ऐसे। आज मैं स्वयं शिक्षक हूँ, और मेरा व्यक्तित्व, साथ ही बच्चों को पढ़ाने का तरीक़ा, आदि उन शिक्षकों का ही प्रतिबिम्ब है। मैंने उनसे जुझारूपन सीखा है। मेरे लिए मेरे रोल मॉडल गणित व अँग्रेज़ी के शिक्षक रहे हैं। ये भी सही है कि यदि आप शिक्षकों से प्यार करते हैं तो चयनित विषय से भी प्यार करेंगे। इसलिए विषय भी मैंने वही लिया, जो आज मैं पढ़ाती हूँ।

सिद्धार्थ : बच्चों के साथ शिक्षण प्रक्रियाओं को बेहतर ढंग से आगे बढ़ाने के लिए कक्षा में जाने के पहले आप किस तरह की तैयारी करती हैं?

शगुफ्ता बेग : मुझे यहाँ आकर महसूस हुआ कि बच्चों में गणित शिक्षण का डर बैठा हुआ है। बच्चों के दिलो-दिमाग़ से गणित का भय निकालना मेरी प्राथमिकता बन गई। गणित कोई अमूर्त चीज़ नहीं है। इसलिए हमने स्कूल में गणित दिवसों के आयोजनों से इसकी शुरुआत की। गणित दिवसों के दौरान हमने बच्चों के साथ काम किया, और समझाया कि आप जो काम कर रहे हैं उसे अपने रोज़मर्रा के जीवन से जोड़कर देख सकते हैं। जैसे– विभिन्न प्रकार की आकृतियाँ हैं, इनको मिलाकर एक बेहतर आकृति बनाकर प्रस्तुत कर सकते हैं, आदि। बच्चों ने भी इसको बेहद सकारात्मक रूप से लिया, और धीरे-धीरे उनकी रुचि गणित में पैदा हुई। उनमें विश्वास जागा कि वे भी गणित में कुछ कर सकते हैं। हमने अलग-अलग मॉडल बनाए, इन सबके साथ गणित को उनके दैनिक जीवन से जोड़ने की कोशिशें कीं। ऐसे प्रयास लगातार किए ताकि बच्चों के मन से गणित का डर दूर हो। अब मेरी कक्षा में बच्चों का गणित के प्रति डर काफ़ी हद तक दूर हुआ है।

कक्षा में जाने के पहले मैं ख़ुद की तैयारी के लिए बच्चों का पूर्व आकलन और उनके स्तर को समझने की कोशिश करती हूँ। फिर इस सबके आधार पर शिक्षण कार्य करने की तैयारी करके कक्षा में जाती हूँ। मेरा मानना है कि सभी बच्चे एक जैसे नहीं होते, सबकी सीखने की क्षमता अलग-अलग होती है। इसलिए बच्चों के स्तरानुकूल समूहों का निर्माण किया जाता है। इससे बच्चों को समान स्तर पर लाने की कोशिश की जाती है। शुरुआत में बच्चों के साथ उन अवधारणाओं से जुड़े शिक्षण कार्य को प्रमुखता से किया जाता है जो उनके समझ के स्तर की होती हैं। बच्चों के स्तर को जानने के लिए कक्षानुरूप गणित की वर्कशीट तैयार करती हूँ जिसमें कुछ मौखिक, गतिविधि-आधारित व लिखित सवाल होते हैं। बच्चों के समूहों के

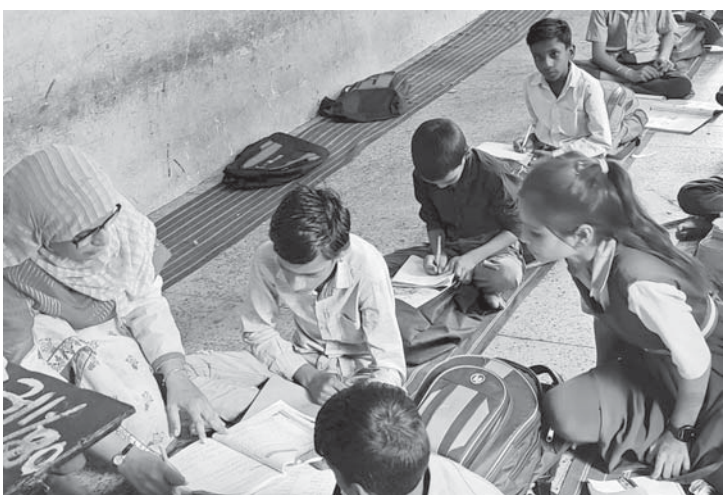

आधार पर शैक्षिक कार्यों को लागू करने के लिए उनपर ज़्यादा ध्यान देती हूँ।

मैं यह योजना भी बनाती हूँ कि जो भी अवधारणाएँ बच्चों को सिखाई जानी हैं, उनको किस तरह सिखाया जाए ताकि अलग-अलग समूह के बच्चों की बुनियादी समझ विकसित हो पाए। मैं इसके लिए कुछ आवश्यक टीएलएम भी तैयार करती हूँ। जैसे– जब हम ठोस आकार की वस्तुओं की बात करते हैं। 2डी, 3डी क्या होता है, इसे समझने में उन्हें मुश्किलें आती हैं। ऐसी मुश्किलें बच्चों को पेश न आएँ इसके लिए हम पहले से ही कुछ सवाल तैयार करते हैं।

शिक्षक के लिए ज़रूरी है कि पहले वह ख़ुद उन अवधारणाओं को समझे जिन्हें पढ़ाया जाना है। कक्षा शिक्षण के लिए चयनित अवधारणा से सम्बन्धित अधिगम प्रतिफल की मैपिंग की जाती है। इसके बाद हम कक्षा शिक्षण की योजना बनाते हैं। शिक्षण योजना पर काम करने के पहले बच्चों के साथ बेहतर रिश्ते बनें, इसके लिए कुछ गतिविधियाँ करते हैं। फिर सम्बन्धित अवधारणाओं के टीएलएम तैयार किए जाते हैं। मैं स्कूल में उपलब्ध टेबलेट का इस्तेमाल अवधारणाओं से सम्बन्धित वीडियो क्लिप, लिंक, आदि दिखाने के लिए करती हूँ। बच्चों को समझाने के बाद कुछ सवाल भी हमारे पास होने चाहिए ताकि हम बच्चों का आकलन कर पाएँ।

कक्षा में जाने के पहले मैं कक्षा का वातावरण तैयार करने की कोशिश करती हूँ जिससे बच्चे मेरी बातों को ध्यान से सुन सकें। उसके लिए मैं कक्षा में बच्चों से उनमें रुचि पैदा करने वाले सवाल पूछती हूँ। उन्हें कुछ ऐसी आकर्षक चीज़ें दिखाती हूँ ताकि उनका ध्यान शिक्षक की तरफ़ हो। कुछ वीडियो क्लिप दिखाकर भी बच्चों का ध्यान पढ़ाई की ओर आकर्षित किया जा सकता है।

सिद्धार्थ : अपने शिक्षकीय अनुभव से अध्यापन की जो ख़ास बातें आपको समझ में आईं, उन्हें साझा कर सकेंगी?

शगुफ्ता बेग : बच्चों में सीखने की ललक होती है। हर बच्चा सीखना चाहता है। भले ही बच्चा किसी भी स्तर का क्यों न हो। शिक्षक की ज़िम्मेदारी है बच्चों को सिखाना। इसके लिए शिक्षक को अपनी शिक्षण प्रक्रियाओं में बदलाव करना भी ज़रूरी है। कुछ हद तक, मैंने भी शिक्षण प्रक्रियाओं में बदलाव करने के प्रयास किए हैं।

कक्षा में शिक्षण कार्य के पहले शिक्षक को बच्चों को समझने की ज़रूरत है। बच्चों के साथ आपके आत्मीय रिश्ते होते हैं तो उनका ध्यान भी शिक्षण पर ज़्यादा होता है। बच्चों को सीखना है तो उन्हें शिक्षक भी रुचिकर, यानी उनसे जुड़ने वाला लगना चाहिए। मेरा अनुभव रहा कि मैं पहले बच्चों से जुड़ी, उनसे बातें कीं, उनकी पारिवारिक व सामाजिक पृष्ठभूमि को जाना, उनकी रुचियाँ क्या हैं, वे क्या चाहते हैं, उन्हें क्या चीज़ें पसन्द हैं, उनको कौन-से खेल अच्छे लगते हैं, उनके जीवन की छोटी-छोटी पसन्द-नापसन्द क्या रही हैं

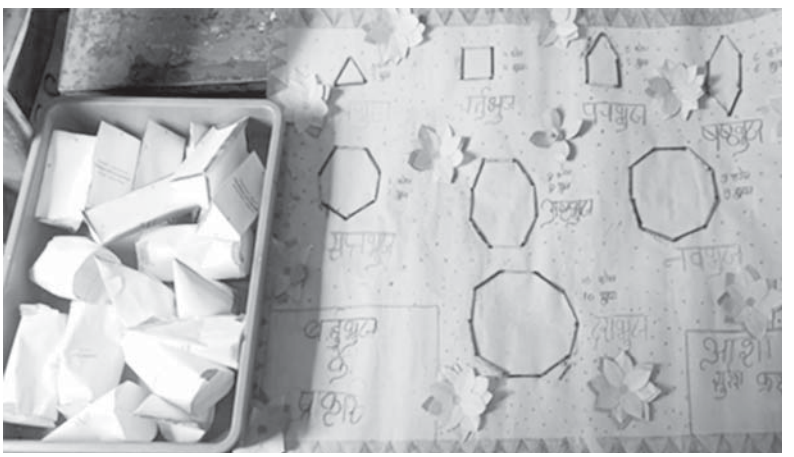

उन्हें समझने की कोशिश करती हूँ। एक अनुभव मुझे याद आ रहा है। स्कूल में एक सांस्कृतिक कार्यक्रम चल रहा था। एक बच्चे ने मुझसे पूछा, "मैडम, आपने जो कान में बड़े-बड़े ईयर रिंग पहने हैं, इनमें गणित कहाँ पर है?" ये बात मुझे भी क्लिक कर गई कि जितना हो सके, आप बच्चों की हरेक चीज़ों को, बातों को अपने विषय से जोड़ने की कोशिश करें। मेरा हमेशा यह प्रयास होता है कि हम भोजनावकाश में बच्चों के साथ बैठें। बच्चे टिफ़िन में क्या लेकर आए हैं; किसने खाना बनाया है; खाने में उन्हें क्या पसन्द है; कौन-कौन-सी सब्ज़ियाँ उन्हें अच्छी लगती हैं; आदि सवालों के ज़रिए मैं अनौपचारिक माहौल में बच्चों के साथ बातचीत करती हूँ। इस तरह, जब मैं बच्चों के साथ शिक्षण प्रक्रियाओं पर बात करती हूँ तब बच्चों का भी जुड़ाव महसूस करती हूँ। इससे बच्चों की अधिक-से-अधिक सहभागिता देखने को मिलती है।

अच्छे माहौल की बात है तो बच्चों को माहौल देने के लिए हम केवल पढ़ाई की ही बातें नहीं करते बल्कि उन्हें स्कूल की दिनचर्या में अलग-अलग रचनात्मक गतिविधियों, खेल स्पर्धा, बालरंग, आदि में शामिल करते हैं। इसके लिए हम शनिवार की बालसभा का इन्तज़ार नहीं करते।

सिद्धार्थ : शिक्षक और बच्चों के रिश्ते, स्कूल का माहौल, आदि महत्त्वपूर्ण प्रक्रियाएँ शिक्षण का अहम हिस्सा होती हैं। आप इन पहलुओं को कैसे देखती हैं?

शगुफ्ता बेग : जैसा मैंने पहले भी कहा कि शिक्षण में सबसे ज़्यादा ज़रूरी है एक शिक्षक और बच्चे के बीच आत्मीय सम्बन्ध होना। ये सम्बन्ध ही बच्चे को स्कूल आने के लिए प्रेरित करते हैं। यहाँ पर बच्चों के ड्रॉपआउट की जो समस्या है, वह कम होते देखने को मिली है।

दूसरी बात, जहाँ तक स्कूल के माहौल की बात है, बच्चों को माहौल देने के लिए हम केवल पढ़ाई की ही बातें नहीं करते बल्कि उन्हें स्कूल की दिनचर्या में अलग-अलग रचनात्मक गतिविधियों, खेल स्पर्धा, बालरंग, आदि में शामिल करते हैं। इसके लिए हम शनिवार की बालसभा का इन्तज़ार नहीं करते। हर वक़्त कक्षा में माहौल को ख़ुशनुमा बनाने की ज़रूरत होती है। बच्चों के साथ आपके सम्बन्ध अच्छे रहेंगे तो वे अपने दिल की बातें आपसे साझा कर पाते हैं। वे कभी माँग भी करते हैं कि मैडम, आज पढ़ने का मन नहीं है, बाहर खेलना है तो हमें उनके अनुसार भी निर्णय लेना होता है।

मैंने कक्षा के बाहर की दुनिया को समझने का प्रयास किया है। यहाँ पर परिधि पढ़ाने के लिए एक मॉडल है। इसका इस्तेमाल कक्षा के बाहर होता है। बच्चों के लिए यह एक खिलौना है। उनको पता है कि शिक्षक हमको इस मॉडल को पकड़ने, छूने की स्वतंत्रता देंगे। इससे बच्चों को एक अलग ही अनुभव मिलता है। दूसरे बच्चे भी सीखने के लिए सजग होते हैं। मुझे लगता है कि छोटी-छोटी चीज़ों से शिक्षक माहौल बना सकते हैं। इसके अलावा, शैक्षिक भ्रमण भी बच्चों को नए अनुभव देता है। स्कूल खुलने पर हम बच्चों को गाँवों में लेकर जाते हैं, और दूसरे बच्चों को स्कूल में आने के लिए प्रेरित करते हैं।

सिद्धार्थ: आपने विद्यालय में गणित शिक्षण को लेकर काम किया है। इस बारे में आपकी क्या सोच-समझ, तैयारी और अनुभव रहे?

शगुफ्ता बेग : गणित शिक्षण के काम की तैयारी के लिए मैंने अमूर्त वस्तुओं को मूर्त रूप में लाने के लिए शिक्षण सहायक सामग्री तैयार करने पर काम किया। गणित की 2डी, 3डी जैसी विविध अवधारणाओं पर मॉडलों के माध्यम से बच्चों को काम करवाए। परिधि की अवधारणा सिखाने के लिए एक मॉडल बनाया जो बच्चों को खिलौना भी लगे, और उनकी समझ को भी बढ़ाए। उदाहरण के लिए, मैंने कक्षा में साइकिल के एक छोटे पहिए के रूप में मॉडल बनाया।

कक्षा में बच्चों से प्रयोग कराया, और कुछ सवाल भी किए कि इस पहिए को चलाकर बताओ कि ये कितना घुमा है; यहाँ पर उसकी त्रिज्या क्या है; आदि। यहाँ पर पहिए की तानें उसकी 'त्रिज्या' है, और बीच में जहाँ पहिया जुड़ा हुआ है वह उसका 'केन्द्र' है, और जो पूरा पहिया घूम रहा है, और जो दूरी तय कर रहा है, वह उसकी 'परिधि' है। इस तरह मॉडल से बच्चे जल्दी समझ रहे होते हैं। मुझे लगता है कि हर शिक्षक अपने विषय में इस तरह के प्रयास करेंगे तो निश्चित ही बच्चे को समझाने में आसानी होगी।

मेरी कोशिश रहती है कि पाठ्यपुस्तक में दी गई अवधारणाओं के अनुरूप बच्चों के आकलन के लिए वर्कशीट का भी इस्तेमाल करूँ। आकलन की प्रक्रिया को मैं नियमित रूप से करती रहती हूँ ताकि मुझे यह जानकारी मिल सके कि कक्षा में कौन-से बच्चे किन अवधारणाओं को सीखने में दिक़्क़त महसूस कर रहे हैं। ऐसे बच्चों के साथ मैं विशेष तौर पर ध्यान देकर काम करती हूँ।

सिद्धार्थ : शैक्षिक संवादों के दौरान आपने गणितीय अवधारणाओं पर किए गए अपने काम को बेहतर तरीक़े से शिक्षक समूह के साथ साझा किया था। आप यह कैसे कर पाईं, इस बारे में कुछ बताएँ?

शगुफ़्ता बेग : ज़िले में हर माह शैक्षिक संवादों के आयोजन बीआरसी व अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के सहयोग से होते रहे हैं। शैक्षिक संवाद मेरे लिए सीखने का नया मंच रहे हैं। इन संवादों में गणित की हर अवधारणा पर बारीक़ी से बात की जाती है, और अवधारणा की गहराई में जाकर उसे समझाने का प्रयास होता है। मसलन, मैं भिन्न को समझने और समझाने का एक उदाहरण रखती हूँ। मैं अपनी बात कहूँ तो हम कक्षा में भिन्न समझाने के लिए कुछ सामग्री लेकर जाते थे, और उस सामग्री के माध्यम से इस अवधारणा को समझाते थे। लेकिन शैक्षिक संवाद में यह बताया गया कि भिन्न जैसी अवधारणा को बच्चों को कैसे समझाया जा सकता है। इसके लिए हमें 'भिन्न पट्टी' पर काम कराया गया, और इसके अनुप्रयोग पर चर्चा की गई। हमें समझ में आया कि इस तरह से बच्चों को सिखाएँ तो बेहतर होगा। हमने कक्षा में भिन्न पट्टी के प्रिंट निकलवाकर बच्चों से रंग करवाए। इसके अलावा चार खाने वाली कॉपी में बच्चों के नाम के पहले अक्षर पर रंग भरवाए। मुझे धनात्मक और ऋणात्मक पूर्णांकों वाली अवधारणाओं पर काम करने में काफ़ी मदद मिली। यहाँ हर महीने मुझे बहुत कुछ सीखने को मिला।

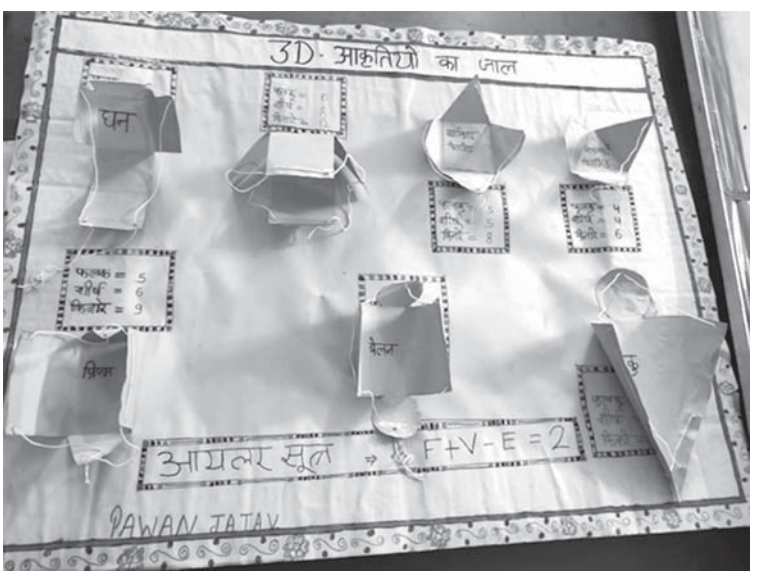

जब मैं स्कूल से शैक्षिक संवाद में जाती थी तो बच्चे अगले दिन पूछते, "मैडम, आपका किस तरह का प्रशिक्षण हुआ? आपको प्रशिक्षण की क्या ज़रूरत है?" मैं बच्चों को ईमानदारी से बताती हूँ कि आपको किस तरह बेहतर पढ़ाना है, जो अवधारणाएँ हैं उन्हें किस तरह

समझाना है, प्रशिक्षण में हमें यही सब सिखाया जाता है। इस तरह की बातचीत से बच्चों को भी प्रोत्साहन मिलता है, और उनकी सीखने की ललक बढ़ती हुई देखने को मिलती है।

दूसरा, शैक्षिक संवादों में शिक्षक बिरादरी के साथ एक दूसरे से सीखने के मौक़े भी मिले। इससे हुआ ये कि जहाँ मुझे दिक़्क़त आ रही थी लेकिन मैं बोल नहीं पा रही थी, ऐसे में दूसरे शिक्षकों ने उन मुद्दों पर चर्चा की। इससे मेरी समझ में भी इज़ाफ़ा हुआ। इससे हमें भी समाधान मिले, और जानकारी मिल पाई कि दूसरे शिक्षकों ने उस अवधारणा को किस तरह पढ़ाया क्योंकि गणित की समस्याओं के हल करने के एक से ज़्यादा तरीक़े होते हैं।

सिद्धार्थ : आप मानती हैं कि बच्चों को सवाल पूछने के भरपूर मौक़े देना शिक्षण प्रकिया का अहम हिस्सा है। इसके लिए आप शिक्षण के दौरान क्या करती हैं?

शगुफ्ता बेग : ये बात बिलकुल सही है। जैसा कि मैंने पहले भी कहा, शुरू से ही मेरा प्रयास रहा है कि पहले बच्चों के मन से गणित का डर हटा पाऊँ, और बच्चे सवाल कर पाएँ। इसके लिए मैंने कक्षा में एक प्रक्रिया निर्धारित की है। बच्चे शिक्षक से सीधे सवाल करने में झिझकते हैं। मैंने बच्चों की झिझक दूर करने के लिए समूहों का निर्माण किया। मैं समूह में बच्चों से सवाल करने को कहती हूँ। पहले सामान्य सवाल लेने को कहती हूँ कि यदि आप कभी किसी का इंटरव्यू करते हैं तब कैसे सवाल पूछेंगे। बस, यहीं से बच्चे का सोचना शुरू हो जाता है।

इसके अलावा, सवाल करने के मौक़े देने के लिए मैं पहले एक-एक से चर्चा न करके सीधे बच्चों से सवाल करवाती हूँ कि आप आपस में बातचीत करें। इसके लिए विषय दे देती हूँ। फिर मैं पूछती हूँ कि आपने बाक़ी बच्चों से क्या सवाल किया, और आपने क्या जवाब दिया। साथ ही, ऐसे ही दूसरे सवाल बनाओ, और पूछो।

इस तरह की प्रक्रिया से बच्चे स्वतंत्र महसूस करते हैं और बोलना सीखते हैं। फिर हम उनसे सवाल करते हैं। यहाँ पर पूछना गौण है। मुख्य बात यह है कि बच्चा बोले। जब बोलने का माहौल मिल पाएगा, बच्चा तरह-तरह के सवाल पूछ पाएगा। इसके लिए एक जुड़ाव शिक्षक और बच्चों का बेहतर सम्बन्ध है। बच्चे अपने दोस्तों से मुक्त भाव से सवाल पूछ सकते हैं, जबकि शिक्षक से नहीं पूछ पाते। इस तरह, साथ-साथ सीखने (पीयर लर्निंग) की बात आ जाती है। पहले बच्चों ने आपस में सवाल करना शुरू किया, अब वे मुझसे सवाल करते हैं।

इसके बाद बच्चों को कुछ और मौक़े भी दिए जाते हैं। उन्हें शिक्षक की जगह पर रखा जाता है, और बच्चों की तरह मैं बैठती हूँ। मैं उनसे कहती हूँ कि अब आप हमसे पूछो। ये भले ही सारे बच्चे नहीं कर पाएँ, लेकिन वे सोचने की प्रक्रिया में आगे बढ़ ही पाते हैं। मुझे इस बात का सुकून है कि मेरी कक्षा के ज़्यादातर बच्चे सवाल पूछते हैं। हमारे स्कूल में कक्षा 6, 7 व 8 में लगभग 150 बच्चे अध्ययनरत हैं।

सिद्धार्थ : आमतौर पर शिक्षकों का कहना होता है कि स्कूलों में शैक्षिक कार्य के अलावा दूसरों कार्यों में भी संलग्नता होने से शिक्षकीय कार्य प्रभावित होता है। आपको क्या लगता है?

शगुफ्ता बेग : यह सही है। शासकीय शिक्षक को पढ़ाने के अलावा दूसरे सरकारी कामों में लगाया जाता है। लेकिन एक बेहतर शिक्षक इन दोनों में सन्तुलन बना सकता है। ये शिक्षक की इच्छा शक्ति पर निर्भर करता है। शिक्षकों के आवासीय कैम्प के दौरान का एक अनुभव रखना चाहती हूँ। मैं एक शिक्षक की कार्य प्रणाली, और उनके स्कूल की उपलब्धियों से बहुत प्रभावित हुई थी। मैंने उनसे जानना चाहा कि वे स्कूल के शिक्षण के अतिरिक्त, मसलन मध्याह्न भोजन की गुणवत्ता सुधारना, स्कूली रिपोर्ट, दस्तावेज़ों की तैयारी, आदि कार्य साथ-साथ कैसे कर पाते हैं? उनका जवाब था कि प्राथमिकता हमें तय करनी होती है। काग़ज़ी कार्यवाही को स्थगित करके रोज़ कक्षा में जाकर बच्चों के साथ काम करें। बच्चा स्कूल आया है तो रोज़ाना कुछ सीखकर जाए, इसका ध्यान रखना बहुत ज़रूरी होता है। उन शिक्षक के केन्द्र में बच्चों का शिक्षण ज़्यादा ज़रूरी रहा है जिससे उनके कार्य करने की प्रणाली का फ़ोकस स्पष्ट होता है। शैक्षिक कार्य के अलावा दूसरे कार्यों में संलग्नता के लिए समय-सीमा का पालन करने की ज़रूरत होती है। बीएलओ की ड्यूटी के बावजूद शिक्षक अपने शिक्षकीय कार्य को ईमानदारी से कर सकता है, लेकिन यह जज़्बा शिक्षक में होना चाहिए।

सिद्धार्थ : शैक्षिक यात्रा में किस तरह की चुनौतियाँ आईं; और सामना करते हुए आगे का रास्ता आपने किस तरह तय किया?

शगुफ्ता बेग : छोटे बच्चों को गणित शिक्षण का कार्य करना मेरे लिए सबसे बड़ी चुनौती है। मुझे इसका कारण गणित विषय का पूरी तरह से भाषा पर निर्भर होना लगता है। वैसे यह सही भी है क्योंकि भाषा के बग़ैर आप किसी विषय को नहीं सीख सकते। जब हम प्राथमिक कक्षाओं में थे तब किताबों में गणित के सवाल अंकों, चित्रों या चिह्नों से पूछे जाते थे। अगर बच्चा भाषा नहीं पढ़ पाता था तो अंक पहचान लेता था, और जोड़ या घटाव को देखकर समझ जाता था कि क्या करना है। लेकिन आज कक्षा 1-2 की गणित की किताब देखें। यह पूरी तरह भाषा पर निर्भर है। आश्चर्यजनक रूप से कक्षा 1-2 की हिन्दी किताब में उचित शब्दों-वाक्यों का इस्तेमाल हुआ है। आप ख़ुद सोचिए, जो बच्चा पूरी तरह से वर्णमाला नहीं जानता, वह हिन्दी की किताब पढ़ पाएगा? और जब भाषा ही नहीं आती तब गणित पढ़ने पर दोहरा दबाव, एक भाषा का और दूसरा गणित की अवधारणा का, होता है। इसके लिए मैं भाषा पढ़ा-लिखाकर देखती हूँ कि बच्चे का भाषा स्तर क्या है। जब बच्चा सवाल पढ़ेगा तब ही वह सवाल को भी हल कर पाएगा, ख़ासतौर पर इबारती सवालों को। फ़िलहाल मेरी चुनौती यही है कि कैसे मैं दो मोर्चों पर संघर्ष कर पाऊँ।

सिद्धार्थ : अपनी कक्षा के बच्चों का शैक्षिक स्तर सीखने के प्रतिफलों के अनुरूप पाने के लिए आपके क्या प्रयास रहे हैं?

शगुफ्ता बेग : मुझे लगता है कि सीखने के प्रतिफलों के बारे में शिक्षक की स्पष्ट समझ होना

ज़रूरी है। वैसे भी गणित विषय से जुड़ी कक्षावार सभी अवधारणाओं के सीखने के प्रतिफल होते हैं। इन प्रतिफलों के माध्यम से हमें यह तय कर पाने में मदद मिलती है कि बच्चों को किस स्तर तक पहुँचाना है; इन प्रतिफलों को हासिल करने के लिए कक्षा में शैक्षिक प्रक्रियाएँ क्या होंगी; फिर शैक्षिक प्रक्रियाओं को कक्षा में करने के लिए पाठ योजना क्या होगी; किस तरह का टीएलएम होगा; शिक्षण के चरण क्या होंगे; पूर्व और पश्चात आकलन की प्रक्रिया क्या होगी; आदि। पूर्व आकलन कर बच्चों की समझ को समझने की कोशिश की जाती है, और उसके अनुरूप शिक्षण योजना बनाकर शिक्षण किया जाता है। कोशिश रहती है कि अवधारणाओं को अमूर्त न बनाते हुए ठोस रूप में टीएलएम के माध्यम से प्रस्तुत किया जाए। इसके साथ ही, अवधारणाओं को पिछली और अगली कक्षा की अवधारणा से जोड़ा जाता है, जिससे बच्चे को विषय नया नहीं लगे। विषय पढ़ा हुआ-सा, जाना हुआ-सा महसूस हो, और बच्चा रुचि लेकर उस विषय को समझे। जहाँ भी ज़रूरत महसूस होती है, हम वर्कशीट का इस्तेमाल करते हैं। इससे पढ़ाने के साथ-साथ बच्चों के स्तर का आकलन भी होता रहता है, और शिक्षक को भी दिशा मिलती रहती है। इस सब प्रकार से हम सीखने के प्रतिफलों को हासिल करने हेतु सतत प्रयास करते रहते हैं।

सिद्धार्थ : एक शिक्षक के तौर पर आप अपने शिक्षण कार्य में किन बातों को सबसे महत्त्वपूर्ण समझती हैं?

शगुफ्ता बेग : किसी शिक्षक के लिए शिक्षण हेतु सबसे ज़रूरी है अपने विषय की समग्र समझ होना। माध्यमिक स्कूल के शिक्षक को उच्चतर माध्यमिक स्तर की समझ होनी चाहिए। इससे शिक्षक को अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों को तय करने, और उन्हें हासिल करने में मदद मिलती है। इसके बाद विषय से जुड़ी अवधारणाओं को बच्चों को किस विधि या टीएलएम से समझाया जाना है, इसकी स्पष्टता होना ज़रूरी है। बच्चों में रचनात्मकता का विकास बेहद आवश्यक है। दूसरा, शिक्षक द्वारा सिखाई गई अवधारणा से क्या बच्चा ख़ुद समझकर उसे अपने ढंग से प्रस्तुत कर पा रहा है, और उसकी रचनात्मकता प्रदर्शित हो रही है? सीखने की वर्गीकरण प्रणाली का मॉडल भी सीखने के उद्देश्यों की जटिलता को अलग-अलग स्तरों पर वर्गीकृत करता है– बुनियादी ज्ञान और समझ से लेकर मूल्यांकन और सृजन तक। इस प्रणाली के मायने समझते हुए बच्चों की अवधारणाओं को ज्ञान से रचनात्मकता के स्तर तक ले जाना ही शिक्षण कार्य में महत्त्वपूर्ण है।

सुश्री शगुफ्ता बेग शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, पडरिया काठी, फंदा ग्रामीण, भोपाल में शिक्षिका के रूप में पदस्थ हैं। वे पिछले 24 सालों से अध्यापन के पेशे से जुड़ी हैं। उनकी गणित शिक्षण व बच्चों के साथ लगातार काम करने में गहरी रुचि रही है। वे अपने स्कूल में नए प्रयोग करती रहती हैं, और वहाँ सीखने-सिखाने का सक्रिय माहौल बना पाई हैं।

सम्पर्क : shagufta612baig@gmail.com

सिद्धार्थ कुमार जैन विगत तीन दशक से सामाजिक एवं अनौपचारिक / औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में सतत सक्रिय हैं। समाज कार्य, जनसंचार एवं भाषा अध्ययन की पढ़ाई की है। अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, भोपाल (मध्यप्रदेश) में सन् 2013 से कार्यरत हैं। इससे पहले आप दो दशक तक राज्य शिक्षा केन्द्र, मध्य प्रदेश एवं जन शिक्षण संस्थान, उज्जैन से जुड़े रहे। साहित्य निर्माण, शिक्षण-प्रशिक्षण सामग्री निर्माण, व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में आपका विशेष योगदान रहा है। नियमित तौर पर शिक्षा, पर्यावरण एवं सामाजिक पहलुओं पर देश के विभिन्न अख़बारों / पत्रिकाओं में लिखते रहते हैं।

सम्पर्क : siddharth.jain@azimpremjifoundation.org

विज्ञान, वैज्ञानिक मानसिकता और पाठ्यपुस्तकें

पाठशाला द्वारा आयोजित इस संवाद का विषय था– विज्ञान, वैज्ञानिक मानसिकता (साइंटिफ़िक टेम्परामेंट) और पाठ्यपुस्तकें। इस संवाद में हमारे साथ दो विज्ञान शिक्षिकाएँ शामिल हुई थीं– शासकीय माध्यमिक विद्यालय, मटका, ज़िला बेमेतरा से मंजू और शासकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, पांडराभाटा, रायपुर से राधिका महोबिया। इसके अलावा, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के छत्तीसगढ़ क्षेत्र से हुमा नाज़ सिद्दीकी और जयपुर, राजस्थान से मुकेश पायक थे। इस संवाद के फ़ेसिलिटेटर अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से राकेश तिवारी थे। –सं.

राकेश तिवारी : विज्ञान शिक्षा पर भारत में स्वतंत्रता के बाद से ही ज़ोर दिया जाता रहा है। इस ज़ोर दिए जाने का एक मुख्य मक़सद साइंटिफ़िक टेम्परामेंट यानी वैज्ञानिक चिन्तन, वैज्ञानिक दृष्टिकोण या वैज्ञानिक स्वभाव का विकास है। इस संवाद के लिए पहला बड़ा सवाल यह है, साइंटिफ़िक टेम्परामेंट का आशय क्या है? और दूसरा, बच्चों में, नागरिकों में वैज्ञानिक चिन्तन का विकास क्यों ज़रूरी है? ये दोनों सवाल दिलचस्प तो हैं ही, साथ ही इतने व्यापक भी हैं कि इनमें विज्ञान की प्रकृति, विज्ञान का सामाजिक व सांस्कृतिक ताना-बाना, विज्ञान का इतिहास, आदि के साथ-साथ स्कूलों में शिक्षा और विज्ञान शिक्षा जैसे मसले भी शामिल हैं। ये सभी मसले इन सवालों को जटिल बना देते हैं। स्कूल में काम करने वाले हम सभी लोगों को इन सवालों, और इनसे जुड़े पहलुओं को अपने-अपने काम के अनुभवों के सन्दर्भ में समझने की ज़रूरत है। आशा है, यह संवाद इसमें मददगार होगा। पहला सवाल है, वैज्ञानिक मानसिकता, वैज्ञानिक चिन्तन इन शब्दों से क्या आशय है?

मुकेश पायक : मैं विज्ञान का विद्यार्थी और शिक्षक दोनों ही रहा हूँ। वैज्ञानिक मानसिकता व्यक्तित्व से जुड़ा मसला है। सबसे पहले सन 1946 में पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी किताब *डिस्कवरी ऑफ़ इंडिया* में वैज्ञानिक मानसिकता शब्द का इस्तेमाल किया था। ये शब्द तभी से ज़्यादा चर्चा में आए। ये शब्द एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना करते हैं जिसमें तार्किक चिन्तन, आलोचनात्मक चिन्तन, और तर्कसंगत चिन्तन, इन सभी का समावेश हो। जब देश स्वतंत्र हुआ था (वैसे तो सदैव ही) हमें ऐसे नागरिकों की ज़रूरत थी जो उनको मिल रही जानकारी की सत्यता की जाँच कर सकें। नागरिक यह जानता हो कि जो जानकारी उसे मिल रही है वह कितनी सही है, और यह पता

करने के प्रमाण व तर्क पर आधारित तरीक़े और प्रक्रिया क्या होगी। वह यह समझे कि किसी भी बात को परखते समय दिमाग़ खुला रखना है, किसी भी तथ्य को बिना जाँचे स्वीकार नहीं करना है, और यह मानकर चलना है कि जो पहले सही था या जो आज सही माना जाता है, वह समय व नए ज्ञान के साथ बदल सकता है।

यह अपेक्षा है कि देश के हर नागरिक में सवाल व तर्क करने की शक्ति हो। वह चीज़ों को ध्यान से देखे, समझे और अन्धविश्वास या पूर्वाग्रह से प्रभावित न हो। वह विभिन्न मसलों को वर्गीकृत कर पाए, उनकी तुलना कर पाए, पैटर्न पहचान पाए, और पैटर्नों में कुछ सम्बन्ध बना पाए। इस सबकी विज्ञान ही नहीं बाक़ी विषयों में भी ज़रूरत होती है।

राकेश तिवारी : हुमा, आप इस बारे में कुछ कहना चाहेंगी?

हुमा नाज़ सिद्दीकी : जो अभी तक कहा गया है, मैं उसमें एक और पहलू जोड़ना चाहती हूँ। वैज्ञानिक सोच किसी विषय या विषय-वस्तु के दायरे में न रहकर एक सोच या नज़रिया विकसित करने की बात है। ऐसा नज़रिया जो शायद किसी भी परिस्थिति में एक बेहतर निर्णय लेने के लिए, किसी समस्या का बेहतर समाधान खोजने के लिए और बहुत सारी परिस्थितियों में नैतिक ढंग से सोचने, समझने और निर्णय लेने की बात करता है। इसमें तर्कसंगतता, जिज्ञासुपन, निष्पक्षता का होना भी शामिल है। एक ऐसा नज़रिया जो अलग-अलग सामाजिक, आर्थिक और परिवेशीय परिस्थितियों में भी व्यक्ति को एक बेहतर निर्णय लेने के लिए प्रेरित करे।

राकेश तिवारी : वैज्ञानिक मानसिकता, वैज्ञानिक चिन्तन का ताल्लुक क्या दूसरे विषयों से भी है? यदि है तो किस-किस तरह का? और इस ताल्लुक के सन्दर्भ में वैज्ञानिक दृष्टिकोण या स्वभाव के बारे में आप क्या कहेंगे?

मंजू : वैज्ञानिक मानसिकता का दूसरे विषयों से भी ताल्लुक है। जैसा कि अभी कहा गया, वैज्ञानिक सोच एक ख़ास विषय से ही नहीं जुड़ी है। हर विषय, मुद्दे के सन्दर्भ में यह लागू होती है। हमारी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में कई घटनाएँ होती हैं। उदाहरण के लिए, क्या थाली बजाने से कोरोना भाग सकता था? या फिर कई और रूढ़िवादी बातें हैं। जैसे– नवजात की जीभ पर शहद से धार्मिक चिह्न लिखने से वह बीमार नहीं होता, इत्यादि। वैज्ञानिक सोच, नज़रिया ऐसे सभी तथ्यों पर सवाल उठाना, और इनकी जाँच करना भी है। माने, यह हर परिवेश की हर घटना, परिस्थिति में समाहित होता है।

राकेश तिवारी : मुकेशजी, आप विषय से सम्बन्धित कुछ उदाहरण इसमें जोड़ना चाहेंगे?

मुकेश पायक : वैज्ञानिक मिज़ाज दूसरे विषयों से कैसे जुड़ता है, इसका एक उदाहरण देता हूँ। इतिहास, जो घटनाएँ घटित हुई हैं, उनका पुनर्निर्माण है। इसमें कुछ उपलब्ध

जानकारियों के आधार पर हम आगे साक्ष्य ढूँढ़ते हैं, उनका एक दूसरे के साथ सम्बन्ध देखते हैं, और इन सभी के आधार पर विश्लेषण करने की कोशिश करते हैं। भूगोल में भी हम कुछ संकेतों को देखकर सम्बन्ध देखते हैं, और यह पता करने का प्रयास करते हैं कि जलवायु पैटर्न कैसा होगा, या फिर यदि सतह के नीचे खनिज मिल सकते हैं तो कौन-से, इत्यादि। इतिहास में पुराने प्रतिलेखों से, और जीवशास्त्रीय इतिहास में जीवाश्म से वैज्ञानिक विधियों का सहारा लेकर समझ बनाते हैं कि वे किस काल के हैं, और उनके आधार पर क्या कहा जा सकता है। एक तरह की परिकल्पना, और फिर जो कहा गया है उसकी पुष्टि के लिए दूसरे स्रोतों से मिली जानकारी के सन्दर्भ में उसे देखना। यानी, वैज्ञानिक प्रक्रिया व मिज़ाज हमें सभी विषयों में दिख रहा है।

वैज्ञानिक सोच किसी विषय या विषय-वस्तु के दायरे में न रहकर एक सोच या नज़रिया विकसित करने की बात है। ऐसा नज़रिया जो शायद किसी भी परिस्थिति में एक बेहतर निर्णय लेने के लिए, किसी समस्या का बेहतर समाधान खोजने के लिए और बहुत सारी परिस्थितियों में नैतिक ढंग से सोचने, समझने और निर्णय लेने की बात करता है। इसमें तर्कसंगतता, जिज्ञासुपन, निष्पक्षता का होना भी शामिल है।

राकेश तिवारी : ऐसा भी होता है कि जो विज्ञान पढ़ते-पढ़ाते हैं, या इस क्षेत्र में काम करते हैं, कभी-कभी उनमें भी साइंटिफ़िक टेम्परामेंट नहीं दिखता। वहीं दूसरे विषय में काम करने वालों के जीवन में वैज्ञानिक चिन्तन बख़ूबी शामिल होता है। राधिकाजी, आप बताएँगी ऐसा क्यों होता होगा?

राधिका महोबिया : यह सही है। मैं कई उदाहरण दे सकती हूँ, पर एक और मसला समाज की मान्यताओं का भी है। कक्षा आठ में विज्ञान का एक अध्याय है 'किशोर अवस्था'। इस किशोर अवस्था के बारे में शिक्षक बच्चों को स्पष्टता से नहीं कह पाते। हम जानते हैं कि इस अवस्था में बहुत सारे शारीरिक परिवर्तन हो रहे होते हैं, फिर उनको लेकर बच्चों में भ्रान्तियाँ भी होती हैं। बच्चे हिचक की वजह से पूछ नहीं पाते हैं, और शिक्षक भी उस पाठ को पढ़ाने से बचते हैं। जैसे– माहवारी के बारे में बातचीत, उस दौरान क्या-क्या बातें ध्यान रखनी चाहिए, आदि। इस साल मैंने बच्चों के साथ इसपर चर्चा की थी। पर कई शिक्षक ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि माहवारी के दौरान रसोई में नहीं जाना चाहिए, बाल नहीं धोना चाहिए, आदि। वे कहते हैं कि ये हमारी परम्पराएँ हैं, और हम इन्हें छोड़ नहीं सकते हैं। किताब में जो बातें लिखी हैं वे अपनी जगह हैं, लेकिन जो हमारे व्यवहार में हैं, हमारी परम्पराएँ हैं, हमारे पूर्वजों ने जो नियम हमारे लिए बनाए हैं, हम उनको नहीं बदलना चाहते हैं।

राकेश तिवारी : हुमाजी, आप इसमें अगर कुछ जोड़ना चाहें?

हुमा नाज़ सिद्दीकी : विज्ञान से इतर विषयों में भी वैज्ञानिक मानसिकता का होना काफ़ी अहम मसला है। अकसर विज्ञान शिक्षा तथ्यों और सिद्धान्तों पर केन्द्रित होती है जबकि वैज्ञानिक मानसिकता से आशय आलोचनात्मक सोच या चिन्तन के साथ-साथ समस्या समाधान भी है। हमारी विज्ञान कक्षाओं को पाठ्यपुस्तक के तथ्य पहुँचाने तक सीमित कर दिया जाता है। कॉलेज व स्कूल में काम के अनुभवों के आधार पर दो उदाहरण रखना चाहूँगी। कॉलेज में विद्यार्थियों को जब भी अवलोकन के बाद कोशिका का चित्र बनाने को कहा जाता, वे पाठ्यपुस्तक में दिया चित्र ही बनाते। उन्हें क्या दिख रहा है उस बारे में सोचते ही नहीं थे।

चित्र : प्रशांत सोनी

उसी तरह का माध्यमिक कक्षाओं का अनुभव है। चूँकि पाठ्यपुस्तक में लिखा है कि दिल 1 मिनट में 72 बार धड़कता है। इसके अवलोकन के बाद भी बच्चों ने, यहाँ तक कि शिक्षकों ने भी, पहले से ही यह मान लिया कि 72 बार ही सही है। इसलिए किसी का अवलोकन फ़र्क़ नहीं आया। और फिर यह भी नहीं सोचा गया कि क्या सभी लोगों की हर परिस्थिति में धड़कन बराबर होगी।

वैसे अपने आम जीवन में आसपास के बदलावों को देखकर यह स्वाभाविक सोच होती है कि यह बदलाव क्यों हुए, और इनसे क्या होगा। मान लीजिए, किसी गाँव में दस साल पहले पाँच तालाब हुआ करते थे, और आज दो ही हैं तो कहीं-न-कहीं उसके कारणों पर सोचा जाता है और इसे सामाजिक परिवेश से जोड़कर समझने का प्रयास होता है। इनमें अनजाने में ही सोचना, तर्क करना, चिन्तन करना, और समस्या समाधान, खोजने जैसी प्रक्रियाओं में शामिल होता रहता है। कक्षा के विज्ञान का जुड़ाव ज़िन्दगी से नहीं होता इसीलिए शायद विज्ञान वाले लोगों को अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता।

मुझे यह भी लगता है कि विज्ञान शिक्षण को सामाजिक और परिवेशीय घटकों से जोड़कर देखना चाहिए। मिसाल के तौर पर, अगर हम इलेक्ट्रिसिटी पढ़ते हैं तो यह सोचना कि परिवेश में इसके क्या उदाहरण हैं; इलेक्ट्रिसिटी कैसे बनती है; कैसे यह एक जगह से दूसरी जगह पहुँचती है; अगर तार में बिजली होती है तो उसपर बैठी चिड़िया मरती क्यों नहीं; पानी से बनाई बिजली, हवा से बनाई बिजली और बादल से गिरी बिजली क्या एक हैं; आदि बहुत-से सवाल हैं। जो विज्ञान हम पढ़ रहे हैं उसका दूसरे विषयों व परिवेशीय सवालों के साथ समावेशन बहुत महत्त्वपूर्ण है।

राकेश तिवारी : इस बातचीत में दिख रहा है कि विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का जुड़ाव हमारे समाज, संस्कृति, परिवेश से है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि तार्किक सोच और रीति-रिवाज या परम्परा के द्वन्द्व को लेकर हम क्या करें। किशोरावस्था में हो रहे शारीरिक परिवर्तन, मानव शरीर के बारे में जानना, पुरानी चली आ रही परम्पराओं पर सवाल उठाना, ऐसे कई तरह के मुद्दों पर बातचीत होना ज़रूरी है। इन मुद्दों पर बात करने में शिक्षकों में झिझक होने पर बातचीत होनी चाहिए। क्या बातचीत न होने से इन मुद्दों से बचा जा सकता है? यह मसला इस बात से भी जुड़ा है कि क्या शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ़ विषयों में महारत हासिल करना है, या अलग-अलग विषयों के रास्तों से गुज़रते हुए तार्किक, मानसिक, खुले विचार वाले व्यक्तित्व गढ़ने की ओर बढ़ना है। 'शिक्षित होने' और 'विषय में महारथ हासिल करने' में क्या कोई अन्तर है?

मुकेश पायक : मैं एक बात कहना चाहता हूँ कि हम एकदम से आज की स्थिति में नहीं

पहुँचे हैं। आज जिन उड़ने वाली मशीनों का हम उपयोग कर रहे हैं उनके बारे में आज से 200 से 300 साल पहले ही सोचा जाने लगा था। लोगों ने उड़ने वाली मशीन के बारे में सोचा, वो कैसी होगी उसकी कुछ इनिशियल डिज़ाइन उन्होंने चित्रों के माध्यम से बनाई थीं। फिर उन्होंने काफ़ी सारे चित्र बनाए, और धीरे-धीरे बढ़ते हुए आज हम इन मशीनों का उपयोग कर रहे हैं। अगर खुले दिमाग़ से नहीं सोचेंगे तो यह सब नहीं हो पाएगा।

राकेश तिवारी : वैज्ञानिक दृष्टिकोण और स्वभाव का विकास, ये दोनों ही बातें विज्ञान की समझ व शिक्षा के लक्ष्य के रूप में शामिल होनी चाहिए। यह हो पाए, इसके लिए विज्ञान शिक्षण का तरीक़ा क्या होना चाहिए? हुमाजी, आप इसपर अपने विचार रखें।

हुमा नाज़ सिद्दीकी : महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह सब करने के लिए कक्षा में विज्ञान शिक्षण का तरीक़ा क्या हो। पहला यह कि कक्षा में ऐसा माहौल रचा जाए जहाँ बच्चे सिर्फ़ तथ्य पढ़कर याद न करें। वे किताब के प्रयोगों को जस का तस न दोहराएँ बल्कि ख़ुद प्रयोग करके देखें। मिसाल के तौर पर, अभी विद्यार्थी जल प्रदूषण जैसे प्रकरणों को भी याद करते हैं जबकि इस जैसे मुद्दों पर विद्यार्थियों को ऐसे प्रोजेक्ट या टास्क दिए जा सकते हैं जिनमें वे जल से जुड़े मुद्दों पर काम करें। वे देखें कि जल किस-किस काम आता है, कहाँ बर्बाद हो रहा है, कहाँ जल प्रदूषण हो रहा है, और क्या इसके कोई समाधान हो सकते हैं। दूसरा पहलू यह कि कक्षा में समूह में काम हो। समूह में विचार, चिन्तन-मनन, विचारों को साझा करना, और सुनना हो। बच्चों की सोच के दायरे इतने सीमित न हों कि वे दूसरे के तर्कों को समझने की कोशिश ही न करें। और तीसरा, दूसरे विषयों के साथ जुड़ाव भी बहुत अहम है।

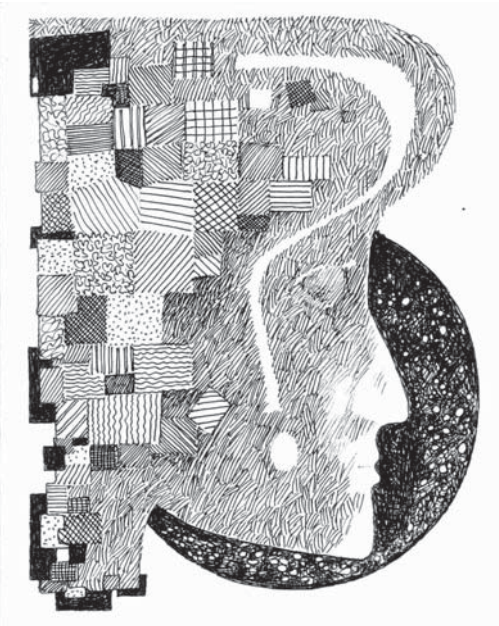

चित्र : प्रशांत सोनी

मुकेश पाटक : अकसर स्कूलों में (प्राथमिक हों या उच्च माध्यमिक) पीयर लर्निंग नज़र नहीं आती है। समूह में मिलकर काम करना, एक दूसरे से अपने अवलोकनों के बारे में बातचीत करना, एक दूसरे की मदद करते हुए अपने अवलोकन लिखना, साथियों से अवलोकन के बारे में चर्चा करना, मिलकर कोई प्रोजेक्ट करना, यह शायद होता ही नहीं है। वैज्ञानिक नज़रिए में यह शामिल है कि एक दूसरे की बात को, तर्कों को ध्यान से सुना जाए, उनको परखा जाए, और तब उनके प्रकाश में निर्णय लिया जाए।

राकेश तिवारी : क्या आज की पाठ्यपुस्तकें सही मायने में वैज्ञानिक चेतना का विकास करने का प्रयास करती हैं? क्या पाठ्यपुस्तकों की कमी को शिक्षक के बेहतर दृष्टिकोण व बेहतर पेडोगॉजी ऑफ़ साइंस टीचिंग से सन्तुलित कर सकते हैं? मंजूजी, आपके विचार चाहेंगे।

मंजू : आज की पाठ्यपुस्तकों में बहुत-से सकारात्मक बदलाव हुए हैं। जैसे बच्चों के सोचने के लिए, सवाल करने के लिए, खोजने के लिए, प्रयोग करने के लिए पाठ्यपुस्तकों में अधिक जगह बनी है। ऐसे प्रोजेक्ट और टास्क हैं जिनमें बच्चों को न सिर्फ़ जानने-समझने

बल्कि चीज़ों को परखने का मौक़ा भी मिले। शिक्षक चाहे तो एक बेहतर दृष्टिकोण और सीखने-सिखाने के बेहतर तरीक़ों का इस्तेमाल करते हुए बच्चों में एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण निर्मित करने का काम कर सकता है। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण होगा बच्चों की जिज्ञासा को, उनके सवालों को, भ्रमों को जगह देना, और बच्चों में जो जिज्ञासा होती है उसको बनाए रखना। ऐसे में विद्यार्थी बार-बार सवाल कर पाएँगे– क्यों, क्या, कैसे? दूसरा, विद्यार्थियों में पढ़ाई के प्रति रुझान उत्पन्न करें। विभिन्न प्रकार की गतिविधियाँ कक्षा में हों, और विद्यार्थियों में निरन्तर अध्ययन करने की आदत बने और बनी रहे। हम पाठ्यपुस्तक पढ़ाएँ, लेकिन बच्चों को उसपर भी सवाल करना सिखाएँ। उनकी निर्णय लेने की क्षमता को विकसित करें। ऐसा न हो कि किसी भी बात को बिना सोचे-विचारे मान लें। होमवर्क इस ढंग का हो कि उसमें तर्क व तर्क करने के कौशल आ जाएँ, और वे वैज्ञानिक ढंग से कुछ विचार उत्पन्न कर पाएँ। ऐसी बहुत-सी चीज़ें हैं जिनको करते हुए शिक्षक पाठ्यपुस्तक की कमी को बिलकुल सन्तुलित कर सकता है। साइंटिफ़िक टेम्परामेंट यही कहता है कि हमारा दिमाग़ खुला हो, और किसी भी चीज़ को हम ऐसे ही न मानें, उसके पीछे तर्क ज़रूर हो।

राकेश तिवारी : पहली बात यह कि कक्षा में सीखने-सिखाने के बेहतर तरीक़े क्या हों। दूसरा, कक्षा की कुछ चुनौतियाँ भी हैं, जैसे– सामान उपलब्ध न होना, कक्षा में बच्चों की संख्या का अधिक होना, आदि। इस सन्दर्भ में विज्ञान सीखने-सिखाने के तरीक़ों के बारे में आप कुछ आयाम बता सकती हैं?

हुमा नाज़ सिद्दीकी : बहुत-से स्कूलों में एक या दो शिक्षक ही होते हैं। वे ही सभी विषय पढ़ाते हैं, लेकिन तब भी ऐसी कई चीज़ें हैं जो स्कूल में की जा सकती हैं, और शिक्षक करते भी हैं। ऐसे शिक्षक जो शिक्षण को एक समग्र दृष्टिकोण में देखते हैं, वे उस विषय के साथ-साथ दूसरे विषयों को भी एकीकृत करते हैं। उदाहरण के लिए, सामाजिक विज्ञान और विज्ञान में जलवायु परिवर्तन जैसे कुछ प्रकरण होते हैं जहाँ दोनों विषयों को मिलाकर पढ़ाया जा सकता है। माने, जलवायु परिवर्तन कैसे होता है, और उसके सामाजिक प्रभाव क्या हैं?

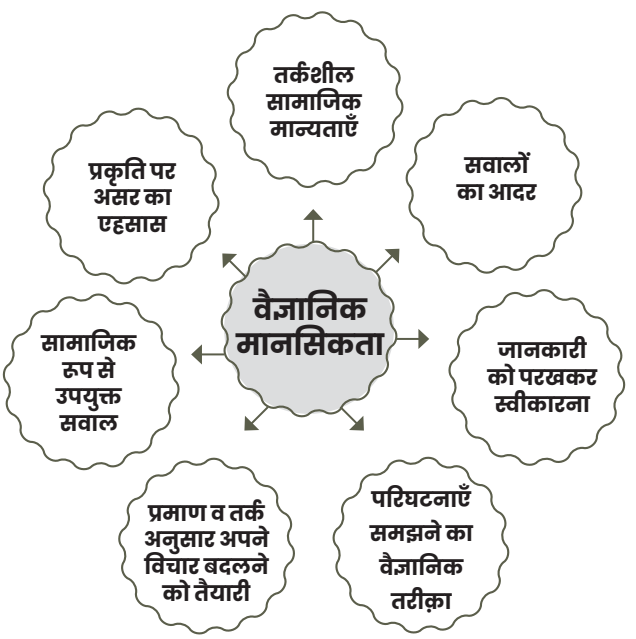

विज्ञान का अर्थ सिर्फ़ प्रयोग करना ही नहीं है। विज्ञान करने का आशय यह भी है कि बच्चे विज्ञान पढ़ पाएँ, लिख पाएँ, परिकल्पनाएँ बना पाएँ, और उन परिकल्पनाओं की जाँच करने के तरीक़ों के बारे में सोच पाएँ। अकसर कक्षा तीन व चार में बच्चों को सिखाया जाता है कि पत्तियों का रंग हरा होता है। बच्चे जानते हैं कि सभी पत्तियों का रंग हरा नहीं होता, लेकिन इसपर कक्षा में चर्चा नहीं होती। ऐसे ही कई तथ्य पढ़ा दिए जाते हैं। हम बच्चों को सवाल दे सकते हैं जिनके जवाब वो ख़ुद अपने परिवेश में जाकर खोजें। मुझे लगता है कि यह शिक्षक की और बेहतर तैयारी की भी माँग करता है। जहाँ पर बच्चे

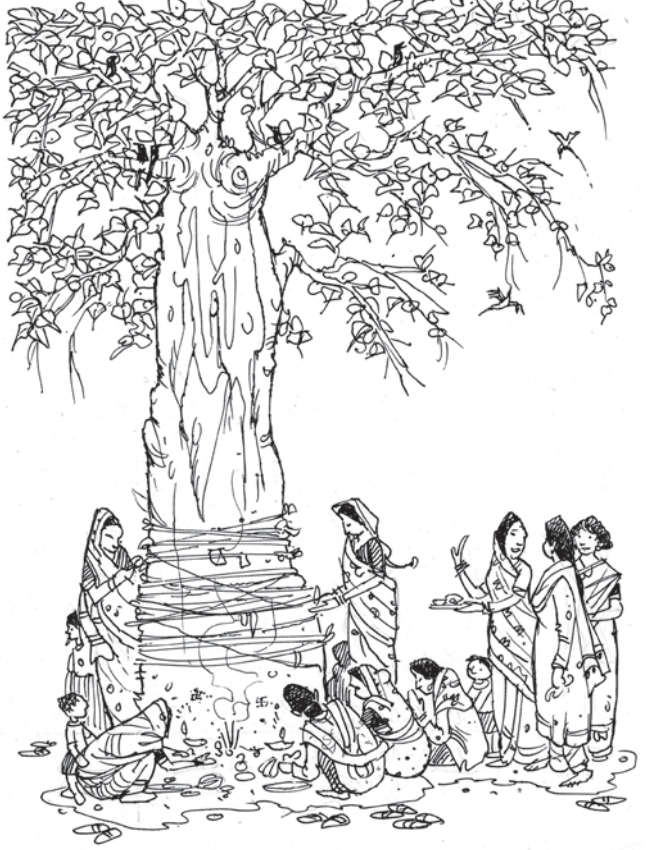

चित्र : प्रशांत सोनी

ख़ुद से अपने सवालों के जवाब ढूँढ़ सकते हैं और शिक्षक की भूमिका मार्गदर्शक के तौर पर है।

राकेश तिवारी : आख़िरी सवाल, वैज्ञानिक दृष्टिकोण समाज, सामाजिक-सांस्कृतिक मान्यताओं व आस्था के बीच किस प्रकार नेविगेट कर सकते हैं। यह कहा जाता है कि विज्ञान तर्क करने, खोजने, और जिज्ञासु बनने में हमारी मदद करता है, पर क्या यह गुण वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास के लिए पर्याप्त है? हुमाजी, इसपर आपके विचार चाहूँगा।

हुमा नाज़ सिद्दीकी : यह सवाल काफ़ी जटिल, रोचक और साथ-साथ संवेदनशील भी है। अन्ततः उपरोक्त सभी मुद्दे हमारे परिवेश और सामाजिक क्रियाओं से जुड़ते हैं। आख़िर शिक्षा, समाज, शिक्षक सब जुड़े हैं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सामाजिक-सांस्कृतिक मान्यताओं या आस्थाओं के बीच नेविगेट करना बेहद महत्त्वपूर्ण है, और जटिल भी। इसके लिए सिर्फ़ आलोचनात्मक सोच या फिर समस्या समाधान के कौशल पर्याप्त नहीं हैं बल्कि यह एम्पथी, सहानुभूति, जैसे गुणों की माँग करता है। इसमें किसी व्यक्ति विशेष के सामाजिक उत्तरदायित्व की बात शामिल होगी, और तथ्यों, विश्वास व मान्यताओं के बीच सन्तुलन बनाना भी। उदाहरण के लिए, मैं जहाँ रहती हूँ वो आदिवासी बेल्ट है। वहाँ लोगों की अपनी-अपनी मान्यताएँ हैं। कई समाजों में किसी ख़ास पेड़ की पूजा की जाती है। एक तरह से इसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण है क्योंकि कई पेड़ों में औषधीय गुण होते हैं, और वैसे भी पेड़-पौधे हमारे व दूसरे पशु-पक्षियों के जीवन के लिए अनिवार्य हैं। यह समझना होगा कि पेड़ के प्रति आस्था की भावना समाज में विकसित करवाने के कई तरह के कारण हो सकते हैं, और यह कोएक्ज़िस्ट कर सकते हैं। कोशिश रहे कि किसी की आस्था या मान्यता को ज़्यादा ठेस भी न पहुँचे, और जो वैज्ञानिक गुण हैं या उसके पीछे जो तर्कसंगतता है वो भी सामने लाई जा सके। इसमें साक्ष्य-आधारित बातचीत बेहद महत्त्वपूर्ण है। कोविड के वैक्सीनेशन के दौरान भ्रान्तियाँ थीं कि वैक्सीन से तमाम तरीक़े की बीमारियाँ हो जाएँगी, लेकिन साक्ष्य-आधारित परिणामों ने धीरे-धीरे लोगों में वैक्सीन स्वीकरण का दायरा बढ़ाया। अतः मुझे साक्ष्य-आधारित बातचीत करना, विश्वास, और तथ्य के साथ एक तालमेल बना पाना बेहद महत्त्वपूर्ण हिस्सा लगता है।

आपका दूसरा सवाल था कि क्या सिर्फ़ तर्क करना, खोज करना, जिज्ञासा, जिज्ञासु प्रवृत्ति का होना ही महत्त्वपूर्ण है। मुझे लगता है यह पर्याप्त नहीं होगा। इसके साथ आलोचनात्मक चिन्तन होना, खुला दिमाग़, सहानुभूति, संवेदनशीलता होना भी ज़रूरी है। जैसे कि एक उदाहरण अभी मुझे याद आ रहा है। पहले यह माना जाता था कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड का केन्द्र है। उस समय गैलीलियो और कोपरनिकस ने इस तथ्य पर सवाल उठाए, और उसकी सत्यता की जाँच

करनी चाही। उन्होंने धीरे-धीरे शोध करते हुए बताया कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड के केन्द्र में नहीं है। उन्हें काफ़ी प्रोटेस्ट का सामना करना पड़ा, और कई तरीक़ों से उन्हें प्रताड़ित किया गया। यह पहलू भी है कि तर्क तो करना है, लेकिन उस तर्क को स्वीकार करने के लिए समाज के लोगों में भी साइंटिफ़िक टेम्परामेंट होना बहुत ज़रूरी है। साथ ही, दूसरों के प्रति संवेदनशील हों, उनके तर्क, विचार के पीछे के कारणों को समझने की, उसकी सत्यता की जाँच करने की तैयारी हो। यक़ीनन यह जटिल प्रक्रिया है, मगर इसके बीच नेविगेट किया जा सकता है।

राकेश तिवारी : राधिकाजी, इसमें आप कोई बात जोड़ना चाहेंगी?

राधिका महोबिया : यहाँ पर संस्कृति और मान्यताओं की बात आई है। मुझे लगता है अन्धविश्वास और रूढ़िवादिता क्या हैं, इनपर बात होनी चाहिए। एक उदाहरण देना चाहूँगी। हमारे स्कूल में बहुत-से बच्चे सोमवार को व्रत रखते हैं। व्रत के लिए उनका पूरे गाँव में फूल ढूँढ़ने का अभियान चलता है। धतूरा का फूल चाहिए, कनेर का फूल चाहिए, बेल पत्र चाहिए। आप पूछेंगे कि यही फूल क्यों चाहिए। वे कहते हैं कि दूसरा फूल चढ़ाने से भगवान ख़ुश नहीं होंगे। आस्था का सवाल है। फूल, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु ही हमारा इकोसिस्टम हैं, और इसमें सबकी अपनी भूमिका है, इसपर बात हो सकती है। और फिर फूल क्या हैं इसपर भी बात हो सकती है।

राकेश तिवारी : बच्चों में वैज्ञानिक मानसिकता विकसित हो पाए इसके लिए स्कूल कक्षाओं में किस तरह के प्रयास होने चाहिए?

राधिका महोबिया : एक सोमवार को स्कूल में बहुत कम बच्चे आए। जब मैंने कारण जानने की कोशिश की तो स्कूल के रसोइए ने बताया कि रविवार की रात में जब वह स्कूल के पास से गुज़रा तब पीछे से किसी ने उसके ऊपर झपट्टा मारा। वो दौड़कर सीधा झाड़-फूँक करने वाले के पास गया। झाड़-फूँक करने वाले ने बताया कि बहुत पहले एक बार स्कूल के कुएँ में 9 साल की एक बच्ची गिर गई थी, और उसकी मृत्यु हो गई थी। उसी लड़की की आत्मा स्कूल में भटक रही है, और लोगों को खींचकर अपने पास लेकर जा रही है। यह एकदम संवेदनशील मुद्दा बन गया था। गाँव वाले भी यहाँ पर आ गए कि मैडम, देखिए इस तरह की घटना हो रही है, और बच्चे स्कूल आने से डर रहे हैं। मैंने सभी लोगों को बुलाकर इस मुद्दे पर चर्चा की। स्कूल के पास एक पीपल का पेड़ है जिसपर अकसर बहुत सारे बन्दर रहते हैं। फिर मैंने बताया कि हो सकता है, रविवार के दिन जब रसोइया सामान लेकर जा रहा हो तो बन्दर ने ही झपट्टा मारा हो। देखा तो है नहीं कि किसने आपको खींचा। लोग बोले, हाँ, बात तो सही है। दूसरा इतने वर्षों से तो हम आ रहे हैं। यहाँ रात में भी कई बार आठ-आठ, नौ-नौ बजे तक रुके हैं, किसी तरह की कोई घटना नहीं घटी। इस तरह से उस समय जो अफ़वाह फैली थी वो दूर हुई।

किसी भी चीज़ को मानने से पहले यह पूछना ज़रूरी है कि ऐसा क्यों हो रहा है, और कारणों को जानने की कोशिश करनी चाहिए।

सवाल सभी पूछते हैं। लेकिन अगर सवाल का सही दिशा में उत्तर नहीं मिलता है, हम किसी मान्यता को मान लेते हैं।

उस दिन के बाद से आज तक किसी बच्चे ने झाड़-फूँक या भूत-प्रेत के बारे में बात नहीं की है। यानी, हम व्यवहारिक तरीक़े से बच्चों को समझाएँ तो बातें ज़्यादा प्रभावी रहेंगी।

राकेश तिवारी : विज्ञान, वैज्ञानिक मानसिकता और पाठ्यपुस्तकों के बारे हुई इस चर्चा में कई आयामों पर बात हुई। इस सन्दर्भ में आलोचनात्मक सोच, तार्किक सोच, विश्लेषण की बात बार-बार आई। इसके साथ ही एक महत्त्वपूर्ण बात यह निकल रही थी कि वैज्ञानिक चिन्तन, वैज्ञानिक मानसिकता जीने का एक तरीक़ा है, और इसीलिए यह सिर्फ़ विज्ञान पढ़ने या सीखने तक सीमित नहीं है। ये दूसरे विषयों के साथ-साथ हम जिस समाज में रहते हैं, हमारे समाज में जिस तरह की सांस्कृतिक परम्पराएँ होती हैं, हमारा जो वातावरण है, उन सबके दायरों में शामिल है, और हमें चीज़ों को इस नज़रिए से ही देखना चाहिए।

वैज्ञानिक चिन्तन, वैज्ञानिक मानसिकता जीने का एक तरीक़ा है, और इसीलिए यह सिर्फ़ विज्ञान पढ़ने या सीखने तक सीमित नहीं है। ये दूसरे विषयों के साथ-साथ हम जिस समाज में रहते हैं, हमारे समाज में जिस तरह की सांस्कृतिक परम्पराएँ होती हैं, हमारा जो वातावरण है, उन सबके दायरों में शामिल है, और हमें चीज़ों को इस नज़रिए से ही देखना चाहिए।

स्कूल और कक्षा से सम्बन्धित भी बहुत सारी बातें रखी गईं। हमारी समझ हमारे कुछ अवलोकनों से बनती है, लेकिन यह भी महत्त्वपूर्ण है कि चीज़ों को देखने का नज़रिया खुला हो, और जो भी नई जानकारी आती है हम उसको जाँच-परखकर ग्रहण करें। अगर नई जानकारी हमारे मौजूदा ज्ञान के साथ विसंगति रचती है तब उस समझ को बदलने को भी तैयार हों। हो सकता है, फिर से अवलोकन करने की भी ज़रूरत महसूस हो तो वह किया जाए। कक्षा में संवाद हो, बच्चों को सवाल पूछने, राय रखने, और अपने भ्रम रखने का मौक़ा दिया जाए। अभ्यास कार्य ऐसे दिए जाएँ जिनमें बच्चों को अवलोकन करने, एक्सप्लोर करने, और एक दूसरे से तर्क करने के मौक़े मिलें।

समस्या समाधान एवं उसकी कसौटी

मनोज कुमार शराफ़

यह लेख *स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2023* के एक विशेष महत्त्व के विषय समस्या समाधान के बारे में बात करता है। शुरुआत दो ऐसी कहानियाँ सुनाकर की गई है जिनमें आम जीवन की समस्या को गणित और इंजीनियरिंग की सामान्य समझ रखने वाले व्यक्तियों को हल करने में मुश्किल आती है, लेकिन राह चलते किसान इन समस्याओं का समाधान निकाल देते हैं। लेख बताता है कि समस्या समाधान की सुझाई गईं ये दोनों प्रक्रियाएँ गणित की औपचारिक शिक्षा के बाहर स्वाभाविक सहज बुद्धि पर आधारित हैं, और सवाल उठाता है कि क्या सभी समस्याओं का समाधान सहज बुद्धि से सम्भव है? लेख में बताया गया है कि गणितीय समस्या क्या है; यह आम ज़िन्दगी की समस्या से कैसे फ़र्क़ होती है; और इसे हल करने के लिए क्या करना होता है? लेख में समस्या समाधान विधि से समस्या को हल करने की प्रक्रिया, इसके विविध चरण, रणनीति और समाधान लिए ज़रूरी पूर्व अनुभव, ज्ञान व समझ जैसे आधारों के बारे में विचार दिए गए हैं। लेख के आख़िर में दो मज़ेदार गणितीय समस्याओं के कई सम्भावित समाधान और उनका विश्लेषण दिया गया है। और कुछ समस्याएँ पाठकों की दिलचस्पी के लिए हल करने के वास्ते छोड़ दी गई हैं।

https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/4642/

पर्यावरण कक्षा बन गई पढ़ने की घण्टी

डॉ. केवल आनन्द काण्डपाल

समझकर पढ़ना सीखना और सिखाना, बच्चों और शिक्षकों दोनों के लिए बड़ी चुनौती रहती है। कक्षा में बच्चों के लिए समझकर पढ़ने के मौक़े कैसे बनाए जाएँ, यह शिक्षकों के लिए आज भी गहरे सरोकार का विषय है। केवलानंद का लेख इस विषय से जुड़े कई महत्त्वपूर्ण मसलों पर बात करता है। यह उन समस्याओं को भी उठाता है जो अर्थ समझते हुए पढ़ने में बाधा बनती हैं। पर्यावरण की कक्षा में जब शिक्षक बच्चों में पढ़ने की चुनौतियों को पहचानता है तब वह कैसे बच्चों के साथ समझकर पढ़ने पर काम करता है, इन प्रयासों को लेख में विस्तार से बताया गया है। इस तरह से पढ़ना सीखने की प्रक्रिया में अच्छी व रुचिकर किताबों और पत्रिकाओं की भूमिका क्या है; बच्चों की आयु और रुचियों के अनुरूप पढ़ने की सामग्री कैसी हो जिससे उनमें अर्थ बनाने की क्षमताओं का विस्तार हो; पढ़ना सीखने के दौरान बच्चों के बीच पठन सामग्री के साथ कैसे और क्या-क्या काम करें; आदि के अनुभव भी लेख में हैं। पढ़ने की कक्षा में उपलब्ध पठन सामग्री का बेहतर उपयोग हो सके, इसके लिए बच्चों के साथ मिलकर बनाए गए नियमों की चर्चा भी आप लेख में पाएँगे। यहाँ यह जानना ज़रूरी है कि तरह-तरह के विषयों पर बहुत सारी पठन सामग्री पढ़ने को पुख़्ता बनाती है। लेख के आख़िर में काम के अवलोकन और अनुभवों को साझा करते हुए बताया गया है कि बच्चों की पढ़ना सीखने की प्रक्रिया में उनसे लगातार संवाद करना ज़रूरी है।

https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/4641/

पाठशाला
भीतर और बाहर

पाठकों के विचार

पढ़ना–लिखना और दीवार पत्रिका, संगीता फरासी, अंक 8

यह लेख मुझे बहुत अच्छा लगा। दीवार पत्रिका को लेकर मेरे ख़ुद के अनुभव भी कुछ ऐसे ही हैं। स्कूल में दीवार पत्रिका बनाना बच्चों को बहुत अच्छा लगता है। वे तरह-तरह की कविताएँ लिखते और चित्र बनाते हैं। उन्हें अपनी कक्षा की दीवार पर लगाकर वे बार-बार पढ़ने का प्रयास करते हैं। बच्चे कविता, त्योहार, मेले या किसी यात्रा के बारे में अपने विचार लिखते हैं। दीवार पत्रिका के लिए बच्चों के कुछ लिखने से पहले मैं उनसे उस बारे में काफ़ी बात करती हूँ। बाद में इन्हें दीवार पत्रिका से उतारकर बच्चों के पोर्टफ़ोलियो में रख दिया जाता है।

उषा मंगरोलिया, प्रा. शिक्षक, शा. मा. शाला लसूडिया परिहार, ज़िला सीहोर, मध्य प्रदेश

बच्चों की दुनिया में किताबें — पुस्तकालय : एक परिचय, निशा बुटोलिया, अंक 18

इस लेख से लगा कि शाला में पुस्तकालय का कोना अवश्य होना चाहिए जहाँ सभी प्रकार की रंग-बिरंगी किताबें हों, और ये सभी बच्चों की पहुँच हों। मेरा अनुभव भी यही कहता है कि पुस्तकालय पाठशाला का अभिन्न अंग है।

पी.सी. दुर्गा, प्राथ. शाला, कस्तूरबा स्कूल, ज़िला सीहोर, मध्य प्रदेश

बच्चों को लिखना सिखाने में सहायक हैं *बरखा* पुस्तकमाला की किताबें, कमलेश चंद्र जोशी, अंक 19

शीर्षक पढ़ते हुए यह सोच रही थी कि हम बच्चों को बोलना, रटना, याद करना, आदि तो सिखा देते हैं, लेकिन बाल कहानियों या पुस्तक-आधारित कहानियों से उन्हें लिखना कैसे सिखाएँ?

इस प्रश्नवाचक चिह्न का उत्तर इस लेख में बेहद सुन्दर तरीक़े से बताया गया है। मैं एक शिक्षक के रूप में इस बात का पूरा समर्थन करती हूँ कि जिस प्रकार हम बच्चों को बोलने की स्वतंत्रता देते हैं, उसी प्रकार हमें उन्हें लिखने की भी पूरी आज़ादी देनी चाहिए। वे बाल साहित्य या *बरखा* पुस्तकमाला में जो भी कहानी अपनी रुचि से पढ़ते हैं, इन कहानियों में वे कहीं-न-कहीं किसी स्थान या पात्र के रूप में अपने-आप को ज़रूर अनुभव करते हैं। इस लेख में एक बच्चे की सीखने की प्रक्रिया और शिक्षक के अनुभव को बहुत अच्छे से व्यक्त किया गया है।

श्रीमती वर्षा सोनी, प्राथमिक शिक्षक, बिजलगाँव, ज़िला खरगोन, मध्य प्रदेश

बरखा पुस्तकमाला की पुस्तकों से बच्चों की पढ़ने की दक्षता पर मैंने कक्षा में काम करके देखा है। इस लेख से यह भी समझ में आया कि बच्चों के रचनात्मक लेखन के रास्ते भी इन किताबों से खुलते हैं। बच्चे इन किताबों से ख़ूब सीखते हैं। पढ़ना-लिखना सिखाने में इन किताबों ने मेरी भी कक्षा में बहुत मदद की है।

संतोष सोलंकी, शासकीय प्राथमिक शाला कटघड़ा, बड़वाह, ज़िला खरगोन, मध्य प्रदेश

यह पत्रिका पिछले छह सालों से लगातार प्रकाशित हो रही है। ज़ाहिर-सी बात है कि जैसा नाम है, काम भी वैसा ही होगा। एक नज़र में पाठकों को लगता है कि पत्रिका पाठशाला पर केन्द्रित रहती होगी। है भी। लेकिन अंक-दर-अंक जब पाठक पत्रिका की रचना सामग्री से गुज़रता है, उसे अहसास होने लगता है कि पाठशाला सिर्फ़ ईंट, गारे, पत्थर, चारदीवारी, शिक्षक, बच्चे, पाठ्यपुस्तक के घेरे में कोई इमारत नहीं होती। पाठशाला जीवन के आदि से अन्त तक की समूची प्रक्रिया में अनिवार्य अंग है। सम्भवतः पाठशाला के भीतर तयशुदा प्रक्रियाएँ-आयोजन और गतिविधियाँ सम्पादित हो सकती हैं, लेकिन पाठशाला के बाहर समूचा जीवन केन्द्र में हो सकता है।

कमलेश जोशी का लिखा यह लेख काफ़ी अच्छा लगा। *बरखा* सीरीज़ में 40 किताबें हैं। हालाँकि, हिन्दी में विकसित इन 40 किताबों के बारे में बुनियादी शिक्षकों में बहुत अधिक सकारात्मकता या उपयोगिता नहीं दिखाई देती। बीते साल उत्तराखंड के शिक्षा विभाग ने इनका अनुवाद गढ़वाली, कुमाउनी व जौनसारी में किया है, और इन्हें हर प्राथमिक विद्यालय में पहुँचाया है।

कमलेश जोशी ने इन किताबों के बहाने प्राथमिक कक्षाओं में पढ़ना सीखने में पाठ्यपुस्तक से इतर लेखन सामग्री की उपयोगिता, सार्थकता और महत्ता पर तार्किक अनुभव सामने रखे हैं। पढ़ना सीखने, बरतने और समझने की कई परतें हैं। पढ़ने को किसी शैक्षणिक सत्र के सन्दर्भ में नहीं देखा जा सकता। यह एक शानदार लेख है। इसे शिक्षकों के साथ अभिभावकों को भी पढ़ना चाहिए।

मनोहर चमोली 'मनु', शिक्षक, राजकीय इंटर कॉलेज केवर्स, ज़िला पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

किताबों के साथ चलते-चलते..., अलका तिवारी, अंक 19

इस लेख में लेखिका द्वारा किताबों के साथ किए गए प्रयोग यह सिद्ध करते हैं कि आज के दौर में जहाँ मोबाइल-इंटरनेट से ही सारी चीज़ें सीखी जा रही हैं, किताबें भी अपनी महत्ता को बरक़रार रखे हुए हैं। लेख को पढ़कर यह समझ और पुख़्ता हो गई कि किताबों के ज़रिए बच्चों का समाजीकरण किया जा सकता है। हम सभी का मानना होता है कि बच्चों को अच्छी शिक्षा और आचरण के तौर-तरीक़े बड़ों के द्वारा ही सिखाए जाते हैं। लेकिन सिर्फ़ इतना ही पर्याप्त नहीं है। अगर बच्चों को अच्छी-अच्छी किताबें पढ़ने को मिलें, वे उन किताबों के माध्यम से स्वयं से ही अवधारणाओं को गढ़ते हैं, अपने विचार बनाते हैं, और सही व ग़लत में फ़र्क़ करना सीखते हैं। बतौर शिक्षक, हमारी यह कोशिश रहनी चाहिए कि बच्चों को ज़्यादा-से-ज़्यादा किताबों से परिचित कराएँ, और नियमित रूप से उनसे पढ़ी गईं किताबों पर चर्चा करें। इससे उनमें पढ़ने का उत्साह बना रहेगा, और वे समाज को अपनी नज़र से देख पाएँगे।

निखिल मेश्राम, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, भीकनगाँव, ज़िला खरगोन, मध्य प्रदेश

पुस्तकालय : नज़रिया और कौशल दोनों ही अहम हैं— समुचित प्रशिक्षण ही एकमात्र रास्ता, अनिल सिंह, अंक 19

इस आलेख में पुस्तकालय के वर्तमान हाल का ज़िक्र करते हुए रेखांकित किया गया है कि हरेक समाज में पुस्तकालय का होना अहम रहा है, लेकिन पुस्तकालय के उपयोग की बात की जाए तो वर्तमान में यह केवल चारदीवारी में बन्द अलमारियों तक सीमित है।

पायल खो गई कहानी के माध्यम से अनिल ने लेख में सन्देश दिया गया है कि कहानी पढ़ने से बच्चों में पढ़ने की रुचि का विकास किया जा सकता है। अगर शिक्षक चाहें तो बच्चों में पढ़ने का भाव उत्पन्न कर उन्हें पुस्तकों से जोड़ सकते हैं। इससे उनकी कल्पनाशीलता को निखारा जा सकता है। जिन बच्चों को पढ़ना नहीं आता है उनको भी चित्रों को पढ़ने के माध्यम से कहानी में जोड़ा जा सकता है।

मेरे विचार में आया कि मैं ज़्यादा-से-ज़्यादा बच्चों को पढ़ने में रुचि जागृत करने, और उन्हें पुस्तकों से जोड़ने के लिए अपने स्कूल के मुस्कान पुस्तकालय को खोलूँ, अलमारी में बन्द किताबों को सामने लाऊँ, और उसका नियमित उपयोग करने के अवसर बच्चों को दूँ। बच्चों में पढ़ने-लिखने की रुचि विकसित करने के लिए मैं अपनी कक्षा में पुस्तकालय का एक पीरियड भी तय करूँगी।

बरखा शर्मा, शासकीय प्राथमिक शाला चंगोराभाटा पश्चिम, ज़िला रायपुर, छत्तीसगढ़

एक जीवन्त पुस्तकालय के सन्दर्भ में लिखा गया यह आलेख पुस्तकालय से बच्चों के जुड़ाव की बात करता है। आमतौर पर पुस्तकालय के सन्दर्भ में यही कहा जाता है कि बच्चे पहले पाठ्यपुस्तकें तो पढ़ लें। यह कथन ही बच्चों के सीखने के दायरे को सीमित कर देता है।

लेखक ने एक कहानी *पायल खो गई* के माध्यम से बच्चों से हुई एक सार्थक चर्चा, और उससे सम्बन्धित गतिविधि का ज़िक्र किया है। इसके साथ ही, अनिल ने पुस्तकालय से जुड़ी तमाम गतिविधियों को अपने आलेख में जगह दी है। यह गतिविधियाँ शिक्षा के व्यापक लक्ष्यों को हासिल करने में सहायक भूमिका निभाती हैं।

नीरज श्रीमाल का आलेख 'उम्मीद अभी बाक़ी है : एक अनुभव' पुस्तक मेला के एक रोचक अनुभव को बताता है। उन्होंने ज़िक्र किया है कि अमूमन यह कहा जाता है कि मोबाइल फ़ोन ने पढ़ने की आदत को ख़त्म कर दिया है। लोगों के इस आम जुमले को सीधेतौर से ख़ारिज करता हुआ इस आलेख का एक अनुभव ही काफ़ी है, जो एक मजदूर वर्ग के व्यक्ति की किताबों के प्रति जिज्ञासा और लगाव को दिखाता है। लेखक का उस पाठक के साथ का संवाद ही उनकी ज़िन्दगी की तमाम मुश्किलों के बावजूद किताबों से उसका जुड़ाव बताता है।

रुबीना खान, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, बैरसिया, ज़िला भोपाल, मध्य प्रदेश

यह बहुत अच्छा लेख है, जो पुस्तकालयों के मौजूदा हालात, सम्भावनाओं और पुस्तकालय प्रभारियों के प्रशिक्षण पर ज़ोर देता है। यह बताता है कि बच्चों का पढ़ना-लिखना सीखना केवल पाठ्यपुस्तकों तक सीमित नहीं है, यह अन्य बाल साहित्य से भी सम्भव है। *नई शिक्षा नीति 2020* में बाल साहित्य और क्षेत्रीय भाषाओं को महत्त्व दिया गया है। *पायल खो गई* जैसी पुस्तकों में

छपी कहानियों और कविताओं के शीर्षकों पर चर्चा बच्चों की अन्दाज़ा लगाने की क्षमता और रचनात्मकता के विकास में मदद करती है। अलग-अलग कार्यक्रमों और अभियानों के तहत आईं पुस्तकों को प्रशिक्षण के अभाव में बन्द करके बच्चों से दूर कर देना न्यायोचित नहीं है।

पुलक कुमार जटाले, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, बड़वाह, ज़िला खरगोन, मध्य प्रदेश

और पुस्तकालय चल पड़ा : बड़े काम की छोटी-सी शुरुआत, राजाबाबू ठाकुर, अंक 19

इस आलेख में लेखक ने पुस्तकालय के महत्त्व, पुस्तकों का संधारण, रखरखाव एवं पंजीयन के संधारण पर ज़ोर दिया है। प्रत्येक स्कूल में पुस्तकालय होने से बच्चों में पढ़ने के कौशल का विकास होगा, और उनमें पढ़ने की रुचि पैदा होगी। पढ़ने में रुचि विकसित होने से बच्चे नियमित स्कूल आने के लिए उत्साहित होंगे। बच्चों में मौखिक के साथ-साथ लिखित भाषा का विकास होना भी आवश्यक है। पुस्तकालय में बच्चे साथ में पढ़ते हैं, और किताबों के चित्रों के माध्यम से विषयवस्तु की जानकारी उन्हें आसानी से मिल जाती है।

मैं इस आलेख से समझ पाई कि अपने स्कूल के पुस्तकालय को और व्यवस्थित व बच्चों की पहुँच में कैसे लाया जा सकता है। वैसे तो इस पूरे अंक ने ही मुझे बहुत प्रेरित किया है क्योंकि हमारे स्कूल के पूरे स्टाफ़ में पुस्तकालय को लेकर एक ख़ास तरह का नकारात्मक नज़रिया है। शिक्षक मानते हैं कि किताबें सरकारी हैं। वे फट जाएँगी तब ज़िम्मेदारी कौन लेगा? दूसरा, जो बच्चा अक्षर नहीं पहचानता है वह किताब से क्या ही पढ़ेगा-सीखेगा। लेकिन आलेख से मुझे यह प्रोत्साहन मिला है कि जो बच्चे पढ़ नहीं पाते हैं, वह चित्र पठन कर सकते हैं। मैं अपनी कक्षा में नियमित पुस्तकालय का उपयोग सुनिश्चित करूँगी।

मैं *पाठशाला* टीम को धन्यवाद देना चाहती हूँ कि बेहद सरल और सहज भाषा में इस मुद्दे पर पढ़ने योग्य सामग्री हम तक पहुँचाई। मुझे यह आलेख पढ़ने में काफ़ी सरल लगा। जब मैं इस आलेख को पढ़ रही थी, मेरी नज़र में हमारी अपनी कक्षा का एक-एक चित्र उभर रहा था, और मुझे रास्ते मिलते जा रहे थे कि मैं कैसे इस काम को अपने बच्चों के साथ कर पाऊँगी।

विजिया शर्मा, सहायक शिक्षक, शासकीय प्राथमिक शाला मंगल बाज़ार (ब), गुड़ियारी, रायपुर, छत्तीसगढ़

कविता शिक्षण के मज़े, धर्मपाल गंगवार, अंक 19

कविता बच्चों के मनोभाव पर कितना गहरा असर करती है, यह इस आलेख से हम अच्छे से समझ सकते हैं। कविताओं पर बातचीत करना काफ़ी कठिन काम है। यहाँ लेखक ने सफलतापूर्वक एक ही कविता पर तीन दिन तक बातचीत की। लेखक स्पष्ट बताते हैं कि सारी बातचीत करने के लिए पहले से योजना बनाई गई थी। विचार करने योग्य बात यह है कि बच्चों ने पहले 'रमजान मियाँ' के चित्र पर ख़ूब बात की, या यह कह सकते हैं कि लेखक ने उनसे बात करवाई। इसके बाद ही उन्हें कविता से परिचित कराया गया। बच्चे अपने दादा / नाना को रमजान मियाँ के चित्र में देखते हैं, और अपने आसपास के ऐसे ही व्यक्तित्व से जोड़कर देखते हैं। कविता भी ऐसी है जिसमें तुकबन्दी करने में बच्चों को आनन्द आता है।

रमजान मियाँ के पसन्दीदा कामों से लेकर बच्चों को क्या करना पसन्द है, इस बातचीत को लेख में बेहतरीन तरीक़े से समेटा गया है। लेखक बातचीत में ही बच्चों से तुकबन्दी वाले शब्दों

का निर्माण करवा देते हैं। इस लेख से स्पष्ट समझा जा सकता है कि बच्चों के भाषा विकास में कविता का अहम योगदान है, ख़ासकर अगर उन्हें अपने परिवेश से जुड़ी बातचीत करने का मौक़ा दिया जाए।

श्वेता कठैत, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ज़िला पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

पुस्तकालय से पत्रिका तक..., अरविंद कुमार सिंह, अंक 19

यह बच्चों के साथ-साथ शिक्षकों को अपने कौशल विकास के लिए भी एक प्रेरणादायक लेख है। हम अकसर अनजाने में कुछ बच्चों की सीखने की प्रक्रिया को नहीं समझ पाते जिससे कक्षा का वातावरण बच्चों और शिक्षकों, दोनों के लिए ही बोझिल हो जाता है। लेखक ने अपने अनुभवों को जिस तरह से लेख में समेटा है उससे कुछ नया करने की ऊर्जा मिलती है।

इन्दु पंवार, प्रधानाध्यापिका, राजकीय प्राथमिक विद्यालय गिरगाँव, ज़िला पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

पुस्तक चर्चा : पहाड़, जिसे एक चिड़िया से प्यार हुआ, प्रभात, अंक 19

पहाड़, जिसे एक चिड़िया से प्यार हुआ, कहानी पर प्रभातजी का दृष्टिकोण पढ़कर ऐसा महसूस हुआ जैसे कहानी में एक और कहानी पढ़ी जा रही हो। उनके भाषा सौन्दर्य, भाषा की कोमलता, शब्द संयोजन से कहानी की चर्चा को पढ़ते हुए हृदय में जैसे काव्यरूपी झरना फूट रहा था; पहाड़ और चिड़िया के प्रेम और विरह का संगीत कानों में तैर रहा था; चिड़िया के पहाड़ से मिलने पर पहाड़ की आँखों की चमक और हृदय की हिलोरें महसूस हो रही थीं; चिड़िया के बिछड़ने की घड़ी में पहाड़ की ठण्डी आहें, चिड़िया की उदास आवाज़ सुनाई पड़ रही थी; और चिड़िया के अन्तहीन शून्य में विलीन हो जाने के बाद पहाड़ बेदम होकर धम्म से अपने स्थान पर बैठता दिख रहा था। इस पुस्तक चर्चा को पढ़ने के बाद किसी के मन में इस कहानी को पढ़ने की जिज्ञासा न जागे, ऐसा सम्भव नहीं। प्रभातजी की भाषा शैली और दृष्टिकोण ने कहानी पर चार नहीं, सौ चाँद और हज़ारों तारे जड़ दिए हैं। चर्चा को पढ़ते हुए जो महसूस हो रहा था उसके लिए मेरे पास कोई शब्द नहीं हैं।

अनीता ध्यानी, सहायक अध्यापक (हिन्दी), राजकीय इंटर कॉलेज लखवाड़, कालसी, देहरादून, उत्तराखंड

मैंने इस किताब को कुछ वर्ष पहले पढ़ा था। उस समय भी यह मुझे बहुत अच्छी लगी थी। किताब के शीर्षक ने सोचने पर मजबूर कर दिया था कि आख़िर यह शीर्षक क्यों है। पहाड़ और चिड़िया का क्या मेल? पर यह एक लेखक की कल्पना है जहाँ वह अपने शब्दों से अपनी कल्पना में रंग भरता है, और उसे आगे बढ़ाता है। इससे हम उसके पात्रों और घटनाओं से जुड़ते चले जाते हैं। इस लेख में प्रभातजी ने इसकी बारीक़ियों और घटनाओं का विश्लेषण किया है जिसने मुझे इस किताब को पुनः पढ़ने पर मजबूर कर दिया। साथ ही, किसी कथानक की परतों को सामाजिक ताने-बाने और भाषाई नज़रिए से देखा जा सकता है, यह लेख इस बात का बहुत अच्छा उदाहरण है।

प्रेरणा मालवीय, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ज़िला सीहोर, मध्य प्रदेश

पाठशाला, अंक 19

मुझे एक पाठक के रूप में यह बताते हुए ख़ुशी हो रही है कि पुस्तकालय पर आधारित इन लेखों ने मेरी कुछ पूर्व धारणाओं को ग़लत साबित कर दिया है। मुझे लगा था कि इन लेखों में

केवल बड़ी आदर्श और महत्त्वपूर्ण बदलावों से सम्बन्धित बातें होंगी, लेकिन इन्हें पढ़कर मुझे हमारी व्यवहारिकता का परिचय हुआ।

इन लेखों का निचोड़ है, "बच्चे तभी मुस्कुराते हैं जब हम मुस्कुराते हैं।" *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* कहती है कि हमारी भूमिका बच्चों के जीवन में एक सहयोगकर्ता और मित्र की होनी चाहिए। यह लेख इसी विचार को आगे बढ़ाता है, और हमसे पहलकर्ता बनने की अपेक्षा रखता है।

इन लेखों में आदर्श स्थिति और व्यवहारिक स्थिति के अन्तर को पुस्तकालय के सन्दर्भ में कम करने के लिए कुछ सुझाव दिए गए हैं। मसलन,

1. नज़रिया बदलने से हालात बदलेंगे। पूर्व धारणाओं को बदलने की आवश्यकता है।

2. बिना परिणाम सोचे पहल करनी होगी। निरन्तरता उत्कृष्ट परिणाम से बेहतर है।

3. बड़े लक्ष्यों को छोटे उद्देश्यों में ढालने की ज़रूरत है।

4. बच्चे पुस्तकालय तक पहुँचे, इससे पहले ज़रूरी है कि पुस्तकालय बच्चों तक पहुँचे।

अन्ततः, एक शिक्षक और पाठक के रूप में मेरा अनुभव है कि हमें धैर्य के साथ बच्चों और पुस्तकों के बीच गतिविधियों का आनन्द लेना होगा।

प्रांजल तिवारी, शासकीय प्राथमिक विद्यालय पटेल फाल्या, भीकनगाँव, ज़िला खरगोन, मध्य प्रदेश

पाठशाला भीतर और बाहर
दिसम्बर विशेषांक : समावेशी शिक्षा

हम सब जानते हैं कि बच्चों का सीखना तब बेहतर होता है जब उन्हें सीखने की जगह पर सुरक्षा, प्रेम और सम्मान मिलता है। यही समता आधारित समावेशन का सार है जिसे *एनसीएफ़एसई–2023* और *नई शिक्षा नीति 2020* ने शिक्षा का केन्द्रीय तत्त्व माना है। *पाठशाला* पत्रिका का दिसम्बर अंक इसी महत्त्वपूर्ण थीम 'समावेशी शिक्षा' पर केन्द्रित होगा। इस अंक के लिए आपके ज़मीनी अनुभव से उभरे लेख आमंत्रित हैं जो समावेशन पर कक्षा व कक्षा के बाहर के अनुभवों के अलावा व्यवहारिक व सैद्धान्तिक समझ पर भी हो सकते हैं। लेखों के लिए कुछ दिशासूचक सम्भावित बिन्दु हम यहाँ सुझा रहे हैं :

कक्षा प्रक्रियाओं में समावेशन : कक्षाओं में कितनी पृष्ठभूमि के बच्चे हैं, उनके समावेशन को लेकर किस–किस तरह की प्रक्रियाओं की ज़रूरत है, और उसे लेकर आपकी कक्षा / स्कूल में किस तरह काम हुआ है। यह काम चाहे ऐसे पाठों के माध्यम से किया गया हो जिनमें समावेशन की स्पष्ट झलक हो (सुनीता की पहिया कुर्सी, Helen Keller, संविधान को कैसे पढ़ाएँ, आदि) या अन्य पाठों से जिन्हें समावेशन की गुंजाइश निकाल बच्चों के सन्दर्भ से जोड़कर आपने ज़मीनी उदाहरणों के साथ कक्षा में पढ़ाया हो। ऐसा करने में किस तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ा; किस सामग्री का इस्तेमाल किया; कैसा अनुभव था; क्या हो पाया; आदि पहलुओं को पिरोते हुए लेख लिखे जा सकते हैं।

स्कूल परिसर में समावेशन : बच्चे के सर्वांगीण विकास के लिए समूची स्कूली प्रक्रियाओं में अपनापन और संवेदनशीलता होना ज़रूरी है। सुबह की सभा में ही सभी वर्ग, समुदाय, जाति, धर्म, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की भावनात्मक व सक्रिय भागीदारी होनी चाहिए। बच्चों को उनमें अपनी जगह दिखे। कक्षा के भीतर भागीदारी के अलावा मध्याह्न भोजन, लाइब्रेरी, खेल का मैदान, स्कूल के कार्यक्रमों जैसे सभी मंचों में समावेशन को कैसे ध्यान में रखा जा सकता है? इसके साथ–साथ विद्यार्थियों का परस्पर व्यवहार, स्कूल के स्टाफ़ का बच्चों के प्रति व्यवहार, आदि महत्त्वपूर्ण मसले हैं। आपके लेख इन सबके लिए अपनाई गईं प्रक्रियाओं, चुनौतियों, अनुभवों, व उनके विश्लेषण पर हो सकते हैं।

बच्चे और बच्चियों के लिए स्कूली कार्य में जगह व हर प्रकार की गतिविधियों में भागीदारी के मौक़े भी एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। इसमें समाज में व्याप्त तयशुदा मान्यताओं (रंगोली निर्माण, खो–खो, बुनाई, आदि के लिए लड़कियों, और कबड्डी, फ़ुटबाल जैसे खेलों के लिए लड़के) के स्थान पर सबको भागीदारी के मौक़े मिलना दिए जाना हैं। इसमें क्या सम्भावनाएँ बन पाईं; और क्या चुनौतियाँ व दिक़्क़तें मिलीं? यह सब विश्लेषण युक्त अनुभव लेख का आधार हो सकते हैं।

खेल, कलाओं, सांस्कृतिक गतिविधियों के ज़रिए समावेशन : कलाएँ (चित्रकला, क्ले, ओरिगेमी), खेल, सांस्कृतिक गतिविधियाँ (नृत्य, गाना, अभिनय), आदि समावेशन के बहुत मज़बूत आधार हैं। लेकिन आमतौर पर ये गतिविधियाँ प्रदर्शन–केन्द्रित बनकर रह जाती हैं और कुछ ही बच्चों को, जिनका प्रदर्शन बेहतर होता है, प्रतिभाग का अवसर मिलता है। समावेशन का नज़रिया इन गतिविधियों के ज़रिए हर बच्चे के मन तक, उसके भीतर छुपी प्रतिभा तक पहुँचने की खिड़की खोलता है। रोज़मर्रा की कक्षा प्रक्रियाओं, विशेष दिवसों जैसे— गणतंत्र दिवस, स्वतंत्रता दिवस, बाल दिवस, बाल संसद, आदि अवसरों को कैसे समृद्ध, रुचिकर, उपयोगी और सभी की भागीदारी युक्त बनाया जा सका; इसमें क्या सफलता मिली; किस तरह की मुश्किलें आईं; इस सबको लेकर आलेख लिखे जा सकते हैं। इसी तरह के लेख हम खेलकूद के बारे में भी भेज सकते हैं।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए समावेशन की समझ : विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए स्कूल में व्यवस्था व समावेशी व्यवहार बहुत ज़रूरी है। इसका एक पहलू आवश्यक संसाधन हैं। कक्षा में सीखने के लिए उपयुक्त

सामग्री, स्कूल आने-जाने के लिए सुरक्षित रास्ता, सुविधाएँ, उनके लिए उपयुक्त खेल उपकरण, आदि सभी होने चाहिए। इनकी क्या कोई व्यवस्था हो पाई? सबसे ज़रूरी है अन्य बच्चों व स्कूल के समस्त स्टाफ़ का इन बच्चों के प्रति रवैया व व्यवहार। किस प्रकार यह व्यवहार समावेशी हो पाया; किस प्रकार सभी के बीच सम्बन्धित मुद्दों पर बातचीत हुई; स्कूल में बराबरी का व्यवहार सुनिश्चित करवाने में किस तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ा; इस सन्दर्भ में क्या हो पाया; क्या हो सकता है; और किस हद तक; आदि अनुभवों पर भी आलेख लिखे जा सकते हैं।

प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ECCE) के सन्दर्भ में : बच्चे परिवार से निकलकर पहली बार बाल वाटिका में आते हैं। वहाँ किस तरह का वातावरण हो, कैसी प्रक्रियाएँ हों ताकि विविध पृष्ठभूमियों वाले बच्चे एक-दूसरे के साथ घुल-मिलकर खेलें और सीखें। इस स्तर पर समावेशन को कैसे समझें? आपने इस स्तर के लिए समावेशन की कौन-सी प्रक्रियाएँ किस तरह अपनाईं; कौन-सी गतिविधियाँ चुनीं; कैसी सामग्री का चयन बच्चों के लिए किया; आदि के अनुभव व विश्लेषण पर भी लेख हो सकते हैं।

संवैधानिक मूल्य : समावेशन को समझने के लिए बराबरी (समानता) और समता को समझना बेहद ज़रूरी है। अकसर बच्चे इनसे सम्बन्धित मान्यताओं को लेकर स्कूल में आते हैं। प्राथमिक और उच्च प्राथमिक विद्यालयों में उनकी मान्यताओं और संवैधानिक मूल्यों में टकराव भी नज़र आता है। इन टकराव वाले मुद्दों पर बच्चों व शिक्षकों के बीच संवाद किस तरह से हो सकता है; क्या गतिविधियाँ व टास्क हों; और जब आपने यह प्रयास किया तब आपको कक्षा में, स्कूल के विभिन्न मंचों पर क्या किसी तरह की चुनौतियाँ आईं? ये भी लेख का आधार बन सकते हैं। जैसा कि ऊपर ज़िक्र आया है पाठ्यपुस्तकों के विभिन्न पाठ (संविधान, सरकार क्या है?, भारतीय लोकतंत्र में समानता, स्वास्थ्य में सरकार की भूमिका, आदि) बच्चों के साथ विभिन्न संवैधानिक मूल्यों और समावेशन पर संवाद करने में मददगार होते हैं। और इन पाठों को पढ़ाने में आपका, अन्य लोगों का, साथी शिक्षकों का नज़रिया क्या है; उनकी अपनी मान्यताएँ क्या हैं; कैसे पढ़ाते हैं; आदि से जुड़े अवलोकनों पर आधारित लेख लिखे जा सकते हैं।

आग्रह है कि लेख सहज, सरल भाषा में और ज़मीनी अनुभवों व उदाहरणों के आधार पर ही लिखें। लेख की अधिकतम शब्द सीमा 2000 शब्द है।

(सन्दर्भ— एनसीएफ़एसई-2023, एनसीएफ़एफएस-2022, नई शिक्षा नीति-2020, एनसीएफ़टीई-2009)

लेखकों के लिए

1. लेख वर्ड फ़ाइल में ही भेजें जिसमें कोई डिज़ाइन, बॉर्डर, बॉक्स, आदि न हों। लेख पीडीएफ़ में न भेजें।

2. लेख से सम्बन्धित तस्वीरें या कोई अन्य विज़ुअल अच्छी क्वालिटी का हो, और उसे वर्ड फ़ाइल में लगाकर भेजने की बजाय अलग से अटैच करके भेजें। तस्वीर को image 1, image 2 के नाम से सेव करके भेजें, और लेख में लिख दें कि कहाँ पर आपको लगता है कौन-सी तस्वीर लगनी चाहिए। हालाँकि, इस बारे में अन्तिम निर्णय सम्पादकीय टीम का होगा।

3. तस्वीर का सोर्स ज़रूर बताएँ। कॉपीराइट का ध्यान रखें कि तस्वीर या तो कॉपीराइट फ़्री हो, या जहाँ से ली गई है वहाँ से अनुमति ली गई हो, या आभार व्यक्त किया गया हो। अगर तस्वीर आपने ख़ुद ली है तो वह भी बताएँ, और तस्वीर लेते समय, स्कूल या क्लासरूम से इजाज़त ज़रूर लें।

4. बच्चों की तस्वीरें बिलकुल न लें, ख़ासकर ऐसी तस्वीरें जिनमें उनका चेहरा स्पष्ट हो।

5. लेख में जब भी किसी किताब का अंश, लेख का अंश, किसी लेखक के उद्धरण (quote) इस्तेमाल में लाएँ, कृपया उनका उल्लेख ज़रूर करें, और क्रेडिट दें।

6. अपने लेख के साथ अपना संक्षिप्त परिचय, एक फ़ोटो जिसमें आपका चेहरा सामने से स्पष्ट और क्लोज़ हो, मोबाइल नम्बर, पूरा पता, और ईमेल आईडी भी दें।

7. जो भी लेख आप पाठशाला के लिए भेज रहे हैं, यह बहुत ज़रूरी है कि उसे न तो कहीं और भेजा गया हो न ही सोशल मीडिया पर साझा किया गया हो।

8. लेख मिलने पर आपको लेख के मिलने की सूचना तुरन्त दी जाएगी, और 30 दिन के अन्दर लेख की स्वीकृति या अस्वीकृति, या उसमें सुधार के सम्बन्ध में सूचना प्रेषित की जाएगी।

9. पत्रिका में लेखों की तीन श्रेणियाँ हैं। पहली श्रेणी में लेख 2000 शब्दों का, दूसरी में 1500 शब्दों, और तीसरी श्रेणी में यह 700 से 1000 शब्दों का होगा।

10. सम्पादकीय टीम को लेख में सम्पादन का अधिकार होगा। ज़रूरी सम्पादन के बाद आपको लेख भेजा जाएगा।

11. पाठशाला अब हिन्दी के अतिरिक्त अँग्रेज़ी और कन्नड़ में भी प्रकाशित होगी। माने, आप तीनों में से किसी भी भाषा में लेख भेज सकते हैं। लेख भेजने का आईडी है : pathshala@apu.in

12. आपने जिस भी मौलिक भाषा में लेख भेजा है, अनुवाद होकर तीनों भाषाओं में प्रकाशित होगा। इसका अधिकार सम्पादकीय टीम को होगा।

किसी भी तरह की अन्य जानकारी के लिए आप कॉल कर सकते हैं— प्रतिभा (हिन्दी) : 9456591379,
शेफाली (अँग्रेज़ी) : 9886031023, राघवेंद्र हेर्ले (कन्नड़) : 9945946661

मुद्रक तथा प्रकाशक शरद सुरे द्वारा अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डिवलपमेंट के लिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, प्लॉट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसाइटी, E-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा भोपाल, मध्यप्रदेश 462039 की ओर से प्रकाशित एवं गणेश ग्राफ़िक्स, 26-बी, देशबंधु परिसर, प्रेस काम्प्लेक्स, एम.पी. नगर, जोन-1, भोपाल द्वारा मुद्रित।

सम्पादक : गुरबचन सिंह

Azim Premji University

Anuvada Sampada

अनुवाद सम्पदा

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की अनुवाद रिपॉज़ेटरी

अवधारणाओं तथा विचारों के साथ गहराई से जुड़ने हेतु विद्यार्थियों और शिक्षकों के लिए भारतीय भाषाओं में उच्च गुणवत्ता के 3000 से अधिक शैक्षणिक संसाधनों का भण्डार।

भारतीय भाषाओं में शैक्षणिक संसाधनों के लिए निशुल्क, ओपन-एक्सेस पोर्टल

- पुस्तकें और पुस्तक अंश
- अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के प्रकाशनों से लेख
- विभिन्न संगोष्ठियों और रीडरों से चुनिन्दा लेख

अनुवाद सम्पदा के लिए लिंक :
https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की अन्य पत्रिकाएँ